मूल्य 30 रुपये

नवम्बर-दिसम्बर, 2015 (अंक-2, वर्ष-1)

ISSN 2454-6879

सामाजिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का मंच

इस अंक में

हरियाणा पर विशेष

देस हरियाणा

नवम्बर-दिसम्बर 2015 वर्ष 1 अंक 2

सम्पादक : सुभाष चंद्र

सम्पादन सहयोग : राजबीर पाराशर, जयपाल, धर्मवीर, कृष्ण कुमार, अशोक शर्मा

व्यवस्था सहयोग : निर्मल, विपुला, विजय विद्यार्थी
शब्द संयोजन : दविन्द्र सिंह सैनी
रेखांकन : हरपाल शर्मा
चंदे की दरें :

सामान्य : एक वर्ष 175 रुपए
दो वर्ष 350 रुपए
तीन वर्ष 500 रुपए

विशेष सहयोग : एक वर्ष एक हजार रुपए
आजीवन : पांच हजार रुपए
संरक्षक : दस हजार रुपए

संस्थाओं के लिए : एक वर्ष चार सौ रुपए
तीन वर्ष एक हजार रुपए

देस हरियाणा

पता : 912, सैक्टर-13, कुरुक्षेत्र (हरियाणा)-136118
मो : 094164-82156
Email : desharyana@gmail.com

ISSN NO 2454 - 6879

प्रकाशक, मुद्रक और स्वामी सुभाष चन्द्र की ओर से 912, सेक्टर-13 कुरुक्षेत्र, हरियाणा से प्रकाशित।

अनुक्रम

छवि के कुहासे की जकड़ और केंचुली उतारता हरियाणा

हरियाणा की छवि और वास्तविकता में दूरी बढ़ते बढ़ते इतनी हो गई है कि अब वास्तविकता और उसकी छवि का संबंध टूट गया है। वास्तविकता अपनी जगह पर है, लेकिन छवि का कारोबार फल-फूल रहा है। यह छवि दो स्रोतों से निर्मित हो रही है। एक सरकारी तंत्र है जो लगातार एक प्रगतिशील, खुशहाल, समृद्ध हरियाणा की छवि के निर्माण के लिए करोड़ों रुपए विज्ञापनों पर खर्च करता है और बदले में खिलखिलाते हुए चेहरों के साथ कुछ छवियां अखबारों व टेलीविजन पर दिखाई देती हैं। जिस रचनात्मकता व कलात्मकता के साथ ये बनाए हैं, उनको देखकर स्वाभाविक है कि इन पर विश्वास करने का मन भी करता है।

दूसरी एक छवि भी हरियाणा की बनाई गई है, जिसे पूरी तरह से काले रंगो से बनाया गया है। इस छवि में हरियाणा बेहद बर्बर, जाहिल, आदिम, रूढ़िवादी, अमानवीय दिखाई देता है। कुछ एन जी ओ इसी छवि को दिखाकर चांदी काट रहे हैं। नए नए प्रोजेक्ट उनके खाते में आ रहे हैं।

इन दोनों छवियों में कुछ-कुछ सच्चाइयां जरूर हैं लेकिन बहुत ही आत्यंतिक भाषा में वह सच्चाई का अंश भी गुम हो जाता है। परस्पर विरोधी दिखाई देने वाली इन दोनों छवियों का नतीजा एक ही है, सच्चाई को दरकिनार करना और उसे ढक देना। जब-जब सच्चाई को झूठ से ढका या दबाया जाता है तो पहला नुकसान जनता का होता है। सच जानने की अदम्य इच्छा ने ही मनुष्य को खोजी व मानवीय बनाया है।

इसके बरक्स हरियाणा एक सहज समाज है जिसमें प्रगति, समृद्धि व खुशहाली की अपार संभावना है तथा यहीं पर घोर अमानवीयता, आदिम बर्बरता व सामन्ती क्रूरता भी अपने सभी रूपों में मौजूद है। ये दोनों अपने अपने खानों-स्थानों पर शान्ति से नहीं बैठी बल्कि इनमें घोर संघर्ष है। जहां अमानवीय शक्तियां समाज को जाति व धर्म के नाम पर नफरत फैलाकर और नौजवानों को सेक्स-हिंसा-नशे में धकेलकर अपना आकार बढ़ा रही हैं, तमाम नागरिक-अधिकारों पर कुठाराघात करके अपनी दबंगई व चौधर बनाए रखने वाली शक्तियां हैं तो उनको अपने ही घरों में चुनौती देकर नागरिक-अधिकारों को प्राप्त करने वाले इंसानी मूल्यों के लिए संघर्षरत व पीढ़ियों को जागृत करने वाले भी हैं। लेकिन यह आवाज मीडिया में और विमर्श में जगह नहीं पा रही है। सभी जगह हरियाणा की प्रतिगामी शक्तियों का उसकी ताकत से लाखों गुणा बड़ा करके महिमागान हो रहा है। इसका परिणाम यह निकल रहा है कि इस महिमागान से ही पिछड़ी हुई विचारधाराएं, रूढ़िवादी शक्तियां शक्ति ग्रहण कर रही हैं।

परोसी गई इन निर्मित छवियों से बाहर एक नया हरियाणा अपनी केंचुली को उतार फेंकने के संघर्ष में कसमसा रहा है। स्वाभाविक है कि अपनी ही केंचुली को उतारना सबसे मुश्किल काम होता है। हमारी पत्रिका इस बदलते हुए हरियाणा की अभिव्यक्ति का मंच है जिसमें न तो संकीर्ण हरियाणावाद की कोई जगह है और न ही धरोहर के नाम पर पुरातन का उत्सव है। यहां प्राचीनता के डंडे से वर्तमान की ठुकाई-पिटाई, लताड़-प्रताड़ नहीं है बल्कि वर्तमान को बेहतर करने की जद्दोजहद में अपनी परंपराओं तथा नई संस्कृति के प्रति आलोचनात्मक दृष्टि बनाए रखने का संकल्प है। न यहां पुराने से अतिरिक्त मोह है और न उसके प्रति हेय बोध और नकार।

धरोहर से किसी समाज का काम नहीं चलता वह तो हमेशा म्यूजियम की शोभा होती है। फुर्सत के पलों में अपने अतीत को याद करना मनुष्य की स्वाभाविक इच्छा है लेकिन यह भी सही है कि मनुष्य को वर्तमान में ही जीवन जीना पड़ता है। धरोहर का महिमागान करके हम वर्तमान से आंखे नहीं चुरा सकते। हमारे लिए हरियाणा की संस्कृति केवल सांग, पनघट, चौपाल, चुण्दड़ी-दामण तक सीमित नहीं है। बदला हुआ हरियाणा हमारे सामने है जिसमें सिर्फ वस्तुएं व जीने के तौर-तरीके ही नहीं बदले, बल्कि मानवीय संबंधों में गुणात्मक बदलाव दिखाई दे रहा है। यहां सिर्फ मेले-ठेले व ढोल-ढमाके ही नहीं हैं बल्कि आपसी कलह-द्वेष भी जीवन का हिस्सा है जिस पर उंगली रखे बिना बेहतर समाज की संभावना नहीं बनती।

लोगों ने संकटों भरे जीवन की कटकट में से ही दो पल हंसी के भी चुरा लेने का हुनर सीख लिया है, यहीं पर उनकी जीवन-कला की वक्रता भी देखने लायक होती है। जीवन-संघर्ष को अभिव्यक्त तभी किया जा सकता है जब उनके जीवन से लेखक का गहरा रिश्ता हो, वह उनमें शामिल हो। जब तक जीवन अपनी विश्वसनीयता के साथ लेखन में उपलब्ध नहीं होता तब तक उसका कोई प्रभाव भी नहीं होता। सिर्फ शब्दों से तो लेखन हो नहीं सकता। जैसे सिर्फ कैमरे की गुणवत्ता से अच्छी फोटो नहीं खींच सकते या सिर्फ रंगों की गुणवता से अच्छी तस्वीर नहीं बना सकते। जीवन की कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए उसके भीतर पैठने और झाड़-पछोड़ करने वाली दृष्टि की जरूरत होती है।

हरियाणा की निर्मित छवियों से बाहर किसान है जो खेती के संकट से जूझ रहा है। कैंसर जैसी जान-लेवा व घर-उजाड़ू बीमारियों से संघर्ष कर रहा है, प्राकृतिक विपदा से जूझ रहा है। अपना पेट भरने के लिए कुछ-कुछ जुगाड़ बिठाने में अपनी मानवता को भी दाव पर लगा बैठता है। महिलाओं का भरा-पूरा संसार है जिसकी संभावनाएं भी अभी उद्घाटित नहीं हुई हैं। जिसका जीवन आज भी बहुत सी वर्जनाओं के बीच घुटन महसूस कर रहा है। सामाजिक-भेदभाव व उत्पीड़न की दिल दहला देने वाली घटनाएं भी इसी समाज में न केवल घटित हो रहीं हैं बल्कि भीड़-तंत्र के बल पर उनका औचित्य भी सिद्ध किया जा रहा है। हरियाणा के समाज की संस्कृति-विकृति, समृद्धि-अभावग्रस्तता सब मिलाकर ही संस्कृति बनती है। जीवन की अभिव्यक्ति ही संस्कृति की अभिव्यक्ति है। संस्कृति को स्टेज पर कार्यक्रम की प्रस्तुति तक सीमित नहीं किया जा सकता।

हरियाणा से और हरियाणा पर केंद्रित करके हरियाणा की रचनाशीलता पर निर्भर रहकर पत्रिका निकालना यदि असंभव नहीं तो बहुत मुश्किल काम जरूर है। इसका कारण यह नहीं है कि हरियाणा में बुद्धिजीवियों या लेखकों की कमी है। उनकी सुस्ती, सुविधा, कार्य अधिकता ही नहीं बल्कि इसके कुछ गंभीर कारण भी हैं। हरियाणा के बुद्धिजीवियों के सामने यह संकट है कि वे साधारण जनता से संवाद स्थापित करने की भाषा कहां से लाएं। वे पूरी तरह से जनता से कटे हुए हैं। विश्वविद्यालय के शिक्षक लिख भी रहे हैं तो उनके पास एक फारमेट है। जिसमें कुछ आंकड़ा भरना है, कुछ सिद्धांत बघारना है, कुछ समस्या समाधान के टिप्स देने हैं। उनके लिए पावर प्वांइट एक साधन नहीं रहा, बल्कि पद्धति बन गया है। समस्या से जूझने-पकड़ने की कोई बैचेनी व जद्दोजहद नहीं है बल्कि सब सवालों के उसके पास पहले से ही उत्तर मौजूद हैं। स्वाभाविक है कि वे उत्तर उसी तरह के होंगे जैसे ओझा का मंत्र। समझ में आने वाली बड़बड़ भाषा और हर समस्या का शर्तिया समाधान लिए।

दूसरी तरफ हरियाणा का लेखक है, जो अक्सर एक बात पर निरंतर रुदन करता है कि साहित्य के पाठक घट रहे हैं, अब साहित्य समाप्त हुआ कि तब हुआ। इसी सोच के चलते अपने को कुछ विशिष्ट किस्म का प्राणी भी समझने लगे हैं। साहित्य-सेवी कहलाना पसंद करते हैं और साहित्य के अलावा दुनिया की सभी चीजों पर नाक भौं सिकोड़ते है। इसने वैचारिक साहित्य से तो अपने को काट ही लिया है फिर साहित्य में विचार व विचारधारा आने पर भी इसको उबकाई आने लगती है। उसकी समझ में साहित्य और विचारधारा परस्पर विरोधी दुनिया की चीजें हैं।

साहित्यकार की निराशा व हिम्मतपस्ती असल में लेखक के अपने समाज में हो रही हलचलों से कटाव का ही लक्षण है। उसके समक्ष कोई पाठक वर्ग की स्पष्ट तस्वीर नहीं है। अपने को वह कहां स्थापित करे इसका अनुमान नहीं लगा पा रहा। जिस वर्ग के जीवन को यह अपनी रचनाओं में स्थान देता रहा है वह व्यावसायिक मनोरंजन में उलझता ही जा रहा है। अकादमियों और विश्वविद्यालयों के साहित्य के विभागों में जहां वह अपने सहृदय पाठक की तलाश में है वहां अब उल्लू बोलते हैं। जहां विशाल पाठक वर्ग पैदा हुआ है जिसमें वर्तमान को समझने-जानने की तड़प दिखाई देती है। गहन मंथन-चिंतन, आलोड़न-विलोड़न दिखाई देता है वह अब अपरम्परागत पाठक वर्ग इस लेखक की आंखों से ओझल है।

इस लेखक और इसके पाठक का परस्पर संवाद व भरोसा नहीं है। लोक जीवन से कटकर किसी साहित्यकार की रचनाओं में जीवंतता संभव नहीं है। जब तक उसकी रचनाओं में जीवन की धड़कन ना हो तब तक उसकी रचना भी पाठक समाज की धड़कन का हिस्सा नहीं बन सकती। साहित्यकार की लाचारी चाहे वह प्रकाश ाक के समक्ष हो या पाठक के समक्ष या फिर समाज के प्रभु वर्ग के समक्ष जनता से कटाव का ही नतीजा है। अपनी सीमाओं को वह समाज की सीमाओं पर थोंपकर सुविधाजनक चुप्पी साध जाता है और निरंतर साहित्य की मृत्यु की संभावना के विलाप को ही अपना परम कर्तव्य मानता है।

हरियाणा में आज इतने लेखक मौजूद हैं कि यदि हरियाणा के आज तक के इतिहास से लेखकों को जोड़ दिया जाए तो उससे अधिक संख्या होगी। जिस तरह की अभिव्यक्ति की परंपराएं व संस्कृति यहां रही है, स्वाभाविक है कि उसका असर तो लेखकीय परिवेश, लेखन की शैलियों और लेखकीय समझ पर जरूर रहेगा। इसमें बहुत बड़ा लेखक वर्ग ऐसा है जो अपने समय और समाज के वास्तविक लेखक हैं और अपने समय व समाज को विश्वसनीय अभिव्यक्ति दे रहे हैं। एक उम्मीद यहीं से है और उम्मीद है कि यह पत्रिका उन सबको जोड़ने व उनमें विचार-विमर्श का मंच प्रदान करने में कामयाब होगी।

पत्रिका का नाम 'देस हरियाणा' जरूर है, लेकिन यह सिर्फ हरियाणा के सवालों और हरियाणा की सोच तक ही सीमित नहीं होगी। हरियाणा का समाज-संस्कृति-साहित्य केन्द्र में रहते हुए देश-दुनिया में हो रहे परिवर्तनों को समझने व उनके अपने समाज पर पड़ रहे प्रभावों को समझने-जानने व अभिव्यक्त करने की इसमें जगह है।

हरियाणा के समाज में भारी खदबदाहट है, कुछ उबल रहा है। पत्रिका के पहले अंक में नागरिकों से जो विचार-विमर्श हुआ है उससे यह पूरी तरह से स्पष्ट है। पत्रिका से जुड़ी तीस लोगों की टीम जिसमें विश्वविद्यालयों के शोधार्थी-छात्र और युवा-लेखक हैं उनके बीच और पाठकों के बीच जो मंथन हो रहा है उसका यही निष्कर्ष है कि अब हरियाणा वह नहीं रहा जिस पुरानी छवि से यहां का बुद्धिजीवी अपना काम चलाता रहा है। सच्चाई कहीं दूर जा चुकी है, विडम्बना यही है कि इस छवि को जानते-बुझते हुए भी तोड़ नहीं पा रहे। लोग इतने भोले नहीं रह गए हैं उनमें अपने हितों की दृष्टि से अपनी परिस्थितियों पर विचार करने की चाह है, वे किसी वैचारिक पैकेज या रेडिमेड समाधानों पर भरोसा नहीं कर रहे।

सही है कि 'देस हरियाणा' किसी संगठन या विचारधारा विशेष की पत्रिका नहीं है, लेकिन इसके नियमित प्रकाशन की जो योजना बनी है वह नितान्त व्यक्तिगत प्रयासों से कतई संभव नहीं थी। युवा-लेखकों और शोधार्थियों की सक्रिय व विश्वसनीय टीम जुड़ी है जिसका लाभ पत्रिका को सिर्फ प्रसार में ही नहीं, बल्कि बौद्धिक ऊर्जा में भी मिल रहा है। पत्रिका उनके लिए सांस्कृतिक कर्म है जो सिर्फ एक जज्बे के रूप में नहीं, बल्कि मुकम्मल विचार के तौर पर जुड़े हैं कि हरियाणा के समाज में सांस्कृतिक-साहित्यिक बहस को बढ़ावा देना है। इसी का परिणाम है कि देस हरियाणा के पहले अंक का जोरदार स्वागत हुआ। पहले दस दिन में फिर से छपवाना पड़ा और अच्छी खासी संख्या में इसके नियमित पाठक भी बन गए। इस सफलता का रहस्य इस टीम के मकसद की स्पष्टता व विश्वनीय आवाज में है। पत्रिका के भविष्य को लेकर कुछ लोगों में विशेषकर कुछ अनुभवी व प्रतिष्ठित किस्म के लेखकों में आशंका है कि एक-दो अंकों में जोश ठंडा पड़ जाएगा। उनको खुशी होगी कि इस टीम के संकल्प के सामने वे इस बार गलत साबित होंगे। आशंकाओं को छोड़कर इन नौजवानों को सहयोग करने की जरूरत है। बौद्धिक-रचनात्मक-आर्थिक जो जिस रूप में सहयोगी हो सकता है।

पत्रिका में प्रकाशित सामग्री की गुणवत्ता, प्रासंगिकता व रोचकता का फैसला तो हमेशा पाठक ही करते हैं। संपादक का काम तो फिल्म निर्देशक की तरह है, जिसमें सब अपनी भूमिकाएं निभाते है और सबको जोड़ने का काम संपादक का है। संपादक न तो किसी लेखक से मनोवांछित लेख लिखवा सकता है और न ही उसकी कोई आवश्यकता है।

लेखकों को अपनी रचनाएं अपने बच्चों की तरह ही प्यारी होती हैं, सही है कि कोई उनसे छेड़छाड़ करे तो अच्छा नहीं लगेगा, लेकिन इसके बावजूद रचनाओं पर संपादक की कलम चलती है, लेकिन रचना की आत्मा मारने के लिए नहीं। रचनाओं की मूल संवेदना बनाए रखते हुए ही संपादन के दायित्व का निर्वाह करने का भरसक प्रयास रहता है। लेखक की सब रचनाएं सबके काम की नहीं होती और न ही सब रचनाएं मास्टरपीस होती हैं इसलिए कुछ रचनाएं बिना छपे वापस लौटेंगी, लेखकों को इस बात के लिए तैयार रहना ही चाहिए। लिखी जाने पर रचना सामाजिक संपति बनती है तो कुछ हक पाठकों का भी उस पर होता है। उम्मीद है कि जो संपादकीय छूट ली गई है, रचनाकार उसे सहृदयता से लेगें।

समाज की वास्तविकता को अभिव्यक्त करती सभी साहित्यिक-वैचारिक विधाओं में नए-पुराने सभी रचनाकारों की रचनाओं का स्वागत है। पत्रिका का स्तर बनाए रखना अकेले संपादक की जिम्मेवारी नहीं बल्कि सभी पाठकों व रचनाकारों का सामूहिक दायित्व है। आशा है कि सभी अपने तौर पर इस दायित्व का निर्वहन करेंगे।

'देस हरियाणा' का दूसरा अंक आपके हाथ में है। इसमें हरियाणा पर विशेष सामग्री है जिसमें कोशिश की गई है कि यहां के जीवन की विविधता का समावेश हो। विभिन्न रूचियों के पाठक इसमें अपने लिए कुछ न कुछ जरूर प्राप्त कर सकें। सामाजिक-पारिवारिक जीवन में पत्र-लेखन की जगह बेशक टेलीफोन व अन्य माध्यमों ने ले ली है लेकिन साहित्यिक दायरों में यह परम्परा बनी रहे इसके लिए पाठक अपने सुझावों को सिर्फ फोन पर न बताकर लिख दें तो पत्रिका-टीम को अपनी योजनाएं बनाने में सहायता मिलेगी।

सुभाष चन्द्र

सदस्यता राशि के ऑनलाइन भुगतान के लिए

बैंक खाता : देस हरियाणा,
इलाहाबाद बैंक कुरुक्षेत्र,
खाता संख्या : 50297128780

IFS Code: ALLA **0211940**

पोस्ट कार्ड या एस एम एस से सूचना जरूर दें।

Email : deshharyana@gmail.com

कहानी

संकट-मोचन

तारा पांचाल

क्योंकि वे बंदर थे अतः स्वाभाविक रूप से उनकी उछल-कूद, उनके उत्पात सब बंदरों वाले थे। गांव वाले उनसे तंग आ चुके थे। गांव के साथ कुछ दूरी से गुजरता राजमार्ग, इस राजमार्ग पर खड़े पीपल के खूब छतराए हुए चार पेड़ और इन पेड़ों पर रहने वाली वानर सेना। शुरू में कम दिखते थे। बाद में संख्या सैंकड़ों में पहुंची। इस संख्या में वृद्धि इनकी प्रजनन-क्षमता से हुई या इनके साथ कहीं और से आ-आकर बंदर मिलते गए - ऐसे किसी सर्वेक्षण की गांव वालों को फुर्सत नहीं थी। वे तो बस इनसे तंग आ चुके थे।

गांव के काफी लोगों को शहर में दिहाड़ी पर जाने के लिए साइकिलों के पीछे या हैंडलों पर अपनी दोपहर की रोटी बांध कर यहीं से गुजरना होता था। इन बंदरो ने उनकी रोटियां छीननी शुरू कर दी थी। ये दिहाड़ीदार लोग वापिस घर जाकर रोटी बनवा कर लाएं, तो लेबर चौक पर देरी से पहुंचने और शाम को खाली हाथ लौटने का अंदेशा रहता। और फिर ये दुबारा नहीं छीनेंगे, क्या भरोसा? अतः वे भूखे पेट ही दिनभर मेहनत-मजदूरी करते और इन बंदरों को कोसते।

बंदरों को इससे क्या मतलब कि मजदूर दिन-भर भूखे पेट कैसे काम करेंगे? उन्होंने तो सिर्फ छीनना सीखा था - और वे पूरे रौब से छीनते थे।

गांव की औरतें जिनके खेत क्यार इस ओर पड़ते थे, उन्हें भी खेतों में जुटे हाली-पालियों की रोटी लेकर यहीं से निकलना होता था। बंदरों को क्या? वे तो शुरू से ही सेठों की तरह हाली-पालियों की रोटी छीनते आए हैं। छीन लेते थे। औरत जूती-चप्पल निकालती। उनसे रोटी छुड़वाने की कोशिश करती और अंततः बंदरों से खुद को बचा लेने के लिए अपने किसी इष्ट देव की अहसानमंद होती और फिर भूखे पेट रहने को मजबूर अपने पुरुष पति की गालियां सहन करने के लिए अपने-आपको तैयार करने लगती।

गांव के बच्चों, औरतों, यहां तक कि पुरुषों ने भी यहां से टोली बनाकर गुजरना शुरू कर दिया था। फिर भी बंदरों की छीना-झपटी यूं ही चलती रही। खेतों में खड़ी फसलों, सब्जियों, फलों का नुक्सान बहुत ज्यादा होने लगा था। आड़ू-आम, अमरूद के तो ये दुश्मन थे। खाते भी थे और पेड़ को झटक-झटक कर हिलाते भी थे। कच्चे-पक्के सब नीचे। कोई फल पेड़ पर बचता ही नहीं था।

गांव वालों को ऐसा लगने लगा था जैसे कि ये बंदर न हों, पुराने सेठ-साहूकारों के नए अवतार - फाईनेंसरों की टोली हो, जो उन्हें घुड़कते हैं। तन के कपड़े उतारने को हो जाते हैं और जो जेब में पड़ा होता है, वही नहीं - हाथ की रोटी तक छीन कर चलते बनते हैं। लेकिन वे बंदर थे। अतः उनका स्वभाव भी बिल्कुल बंदरों जैसा था - एकदम संवेदनहीन।

इधर गांव वाले जितना उनसे छुटकारा पाने की सोचते, उतना ही शहर वालों ने यहां इन्हें हनुमान के अवतार मान कर संकट मोचन के रूप में पूजना और खिलाना-पिलाना शुरू कर दिया था। ज्योतिषियों और तांत्रिकों की कठपुतली बने अमीर होते शहरी लोग इन्हें कुछ न कुछ खाने को डालते रहते। यहां से दिन में हजारों की संख्या में कारें, जीपें, बसें व अन्य वाहन गुजरते थे। ये बंदर उनके शनि-मंगल, सब ग्रह शांत करने वाले बता दिए गए थे। कार वाले और उनके बच्चे जब खाते-खाते अघा जाते और उनके हलक के नीचे ठूंसने पर भी जब कुछ नहीं जाता, तो बचा हुआ सब कुछ वे अपने ईष्ट देवों की सूची में शामिल इन अवतारों को फेंक देते थे। यूं इन अवारों को जिमाने का इनका तरीका काफी सुरक्षित था। वे कार का शीशा मामूली सा नीचे करके गति कुछ कम करते और फिर सभी संकट-कारक ग्रहों को पक्ष में करने वाले नगों की अंगूठियां पहना हाथ थोड़ा-सा बाहर निकाल कर कुछ भी फैंकते और तेज गति से निकल जाते। मल्टी नेशनल के चिप्स, नमकीन, बिस्कुट आदि के रेपरों के साथ बंदर कुछ समय खेलते और फिर उन्हें खेतों में उड़ने को छोड़ देते।

गांव वाले इन अवतारों से बेहद परेशान हो चुके थे एक दिन गांव की पंचायत उनकी किसी समस्या को लेकर जिला प्रशासन से मिली। चलते-चलते उन्होंने बंदरों वाली समस्या भी स्वाभावानुसार काफी छोटी करके पूरे साहस के साथ राजा-प्रजा शिल्प में वहां रखी - हे माई बाप, हे कृपा निधान, हे साक्षात सरकार, हे अन्नदाता - हमारी एक छोटी सी समस्या है। गांव के नजदीक कुछ बंदरों ने पिछले कई वर्षों से डेरा जमा लिया है। गांव के लोग जिन्हें शहर आना होता है - उनसे परेशान हैं। उनका कोई हल निकाल दें, तो मेहरबानी होगी।

जिला प्रशासन हंसने लगा और बोला - आप लोगों को तो इसके लिए शाबाशी मिलनी चाहिए। संकट मोचन के सैनिकों को

आप लोगों ने आसरा दे रखा है। इस संसार के तमाम जीव आप पर ही तो निर्भर हैं। फिर भी हम देखेंगे।

'हम देखेंगे।'

'अच्छा ! समस्या इतनी बढ़ गई है। अब वे बच्चों को भी काटने लगे हैं ! ठीक है। हम देखेंगे।'

....

एक दिन ! दो दिन !! कुछ नहीं हुआ।

एक हफ्ता ! दो हफ्ते !! कुछ नहीं हुआ।

एक महीना ! दो महीने !! छह महीने !! कोई नहीं आया गांव को इस मुसीबत से, इस संकट से छुटकारा दिलवाने।

गांव वालों ने जैसे हथियार डाल दिए हों। वे लाठियां लेकर समूह बनाकर वह क्षेत्र पार करने लगे थे। फिर भी बंदरों के उत्पातों और छीना-झपटी में कोई कमी नहीं आई थी।

एक दिन गांव के साहसी युवकों ने - जिनकी संख्या लगभग बंदरों के बराबर थी - बैठक की। सभी का एक ही मत था कि वे गांव की बदहाली को दूर करने के लिए तो कुछ नहीं कर पाए, लेकिन इस संकट से तो छुटकारा दिलवा ही सकते हैं।

इसके साथ ही उन्होंने संकल्प के साथ योजना पर बातचीत शुरू कर दी।

अगले दिन उन्होंने योजनाबद्ध तरीके से दिनभर उत्पात मचा कर थक चुके बंदरों पर सायं पांच बजे धावा बोल दिया। पहले उन्होंने एक-दो बंदरों को निशाना बनाया। वे चिढ़कर धुड़कते हुए उनकी और पलटवार करते हुए लपके। शेष सभी सैनिक भी अपने पेड़ों की शाखाओं के बंकरों से बाहर निकले और नीचे उतर कर युवकों के पीछे भागे। युवक यही चाहते थे। वे सभी गांव की ओर भागने लगे। कुछ कदम भागने के बाद सभी युवक रूके और बंदरों की ओर पलटे और उन पर हाथों में, झोलों में लिए पत्थर-रोड़ों की बरसात शुरू कर दी। एक साहसी युवक इतनी तीव्रता से उनकी ओर भागा कि वह ऐन उनके बीच में जा पहुंचा। उसने सबसे बड़े बंदर की पिछली टांग पकड़ ली और पलक झपकते ही उसे हवा में घुमाना शुरू कर दिया। गोल झूले की तरह ऊपर नीचे कई चक्कर कटा कर पूरी शक्ति के साथ एक पेड़ में फैंक दिया। बंदर के हाथ कोई टहनी लग गई थी। यदि वह धरती से आकर टकराता, तो उसके सिर पर मृत्यु संकट तय था।

इसके साथ ही बंदरों की धुड़कियां पस्त होने लगी और वे डर कर इधर-उधर भागने लगे। लेकिन उनको यूं भागने देना - उनकी योजना में नहीं था। अतः वे उन्हें घेर-घेर कर इकट्ठा करने लगे। जैसे ही वे इकट्ठे हुए, युवकों ने उन्हें भेड़-बकरियों की तरह शहर की और हांकना शुरू कर दिया। युवक इस और से सचेत थे कि सड़क के साथ वाली खदानों में ही चलाए रखा, जहां से वे दिखे नहीं। वे स्वयं भी इस तरह सावधानी से चल रहे थे कि जैसे वे अलग-अलग हों या यूं ही संयोगवश इकट्ठे चलते दिख रहे हों।

बंदर अब तक ऐसे चलने लगे थे, जैसे कि वे उन युवकों के पालतू हों। युवकों ने इस बात का विशेष ध्यान रखा कि उनके डंडों, कमचियों या पत्थर रोड़ों का वार किसी भी बंदर के सिर या मर्मस्थल पर न पड़े, हां पिछवाड़ा शायद ही किसी बंदर का बिना चोट खाए बचा होगा। इतना भी युवकों को विवशता में करना पड़ा और कोई विकल्प बचा ही नहीं था।

उनकी योजना के अनुसार सभी बंदर संध्या का धुंधलका होने के एकदम बाद और बंदरों की रंतोंधी होने के कुछ पहले शहर में प्रवेश कर चुके थे। अब युवकों ने अंतिम बार उन पर झूठ-मूठ के खाली वार किए तो बंदर बचाव में सरपट भाग कर कूदते-फलांगते आसपास की छतों पर फैलने लगे।

●●●

गांव के संस्कारग्रस्त युवकों को जहां गांव को संकटमुक्त करवाने की प्रसन्नता हो रही थी, वहीं उनमें से कुछ को पश्चाताप भी हो रहा था कि बेचारे जीवों को यूं ही परेशान किया। कुछ भयभीत भी थे कि कहीं पुलिस वगैरा पता न लगा ले कि यह सब हमने किया है और सीधी गांव में ही पकड़ने के लिए पहुंच जाए। एक-दो युवक अपने कामों से और कुछ नित्य पढ़ने या अन्य कोई कोचिंग के लिए शहर जाते थे। वे वहां सबसे पहले अखबार देखते कि कहीं बंदरों और उनसे संबंधित कोई खबर तो नहीं छपी है।

तीसरे दिन उन्होंने अखबारों में बंदरों की खबरें देखी और शुक्र मनाया कि उनमें से किसी भी खबर में उनका नाम नहीं था, लेकिन सभी अखबारों की खबरें पढ़ कर उन्हें हैरानी भी हुई। उनके गांव में रहते हुए जो बंदर पूजनीय थे, अब वे एकदम खाली बंदर कैसे हो गए? उन्हें यह भी हैरानी हो रही थी कि सभी खबरों में बंदरों और आतंकवादियों में कोई खास अंतर नहीं रखा गया था।

'शहर में बंदरों का आतंक'

'शहर के नागरिक बंदरों के आक्रमण से आतंकित'

'बंदरों ने की नागरिकों की नींद हराम - प्रशासन नींद में'

एक युवक ने दूसरे युवक की ओर अखबार सरकाते हुए कहा कि 'ये अखबार तो तीन दिन पहले भी थे - पर तब इन्हें ये बंदर, इन बंदरों के दांत और उत्पात क्यों नहीं दिखे ?'

यह सवाल अभी युवकों के दिमाग में लटका हुआ था कि अगले दिन टी.वी. चैनल भी बंदरों और प्रशासन के पीछे पड़ गए थे। टी.वी. चैनलों ने यह मैलो ड्रामा कई घंटों तक चलाए रखा। सजे-धजे लड़के-लड़कियां पुरुष-महिलाएं पूरे मेकअप में कैमरों के आगे अड़ने की होड़ में दिखते रहे। उनके चेहरों पर कोई परेशानी नहीं उभर रही थी पर उनके शब्द परेशानी वाले थे --

'हमारी कार के वाइपर तोड़ गए।'

'हमारा डिश-एंटिना तोड़ गए'

'हमने तो ऊपर वाला बाथरूम यूज करना ही छोड़ दिया है। शेंपू-साबून सब स्पॉयल कर जाते हैं।'

'मेरे हस्बैंड की शर्टस -- ब्रांडेड थी -- तारों पर सूख रही थी -- सभी बटन तोड़ गए।'

एक अधेड़ महिला हाथ पर पलस्तर के साथ टी.वी. स्क्रीन पर दिखाई दी। उसके चेहरे पर वाकई दर्द था -- मैं जैसे ही ऊपर छत पर चढ़ी तो देखा पूरी छत पर बंदर ही बंदर थे। मैं एकदम वापिस भागी। सडॅनली मेरा पांव स्टेयर्स में स्लिप हो गया। हाथ में फ्रैक्चर आया है।'

'हम परेशान हैं।' ये लाठियों से भी नहीं डरते हैं।'

'हां - हां हम बहुत परेशान हो चुके हैं।' ये सभी लोग वैसे ही थे - अंगूठियां पहने हाथों वाले जैसे - इनके गलों में टेली-मॉल के रूद्राक्ष जैसे यंत्र झूल रहे थे। सभी संकटों से सुरक्षित हो चुके लोग।

इसके साथ ही एक चैनल पर जिला कलैक्टर कह रहा था - 'क्यों नहीं - क्यों नहीं - नागरिकों की सुविधा - असुविधा देखना हमारा कर्त्तव्य है। कल ही आपको इस संबंध में प्रोग्रेस दिखेगी।'

●●●

युवकों ने जब यह बयान सुना तो वे इकट्ठे होकर हाथों में डंडे लिए उन पीपल के पेड़ों के नीचे जा बैठे, जहां प्रशासन द्वारा उन बंदरों के पुनर्वास करवाने का पूरा अंदेशा था। वे प्रशासन से दो-दो हाथ करने की पूरी तैयारी करके आए थे।

लघुकथा

धर्म-धंधा

रत्नकुमार सांभरिया

मोहल्ले का मंदिर एक अर्से से अर्द्धनिर्माण पड़ा हुआ था। दीवारें बन चुकी थीं, छत की दरकार थी। मूर्तियां प्राण-प्रतिष्ठित थीं, अतः श्रद्धालुओं की आवाजाही अनवरत जारी थी। सर्दी-गर्मी-बरसात, आंधी-बबूल्या, ओला-कांकरा झेलते संगमरमर की उन मूर्तियों की कांति फीकी पड़ती गई थी।

मंदिर निर्माण को लेकर मोहल्ले भर की एक बड़ी मीटिंग मंदिर परिसर में हुई। मसला धर्म परायणता से सन्नद्ध था, सो चूची-बच्चा तक अर्थात् आबाल वृद्ध सबके सब मीटिंग में मौजूद थे। जिसकी जैसी श्रद्धा रही, उसने हाथों हाथ दान दिया।

धर्मदीन सभा मण्डल के बीचोंबीच बैठा हुआ था। वह स्वयं को भगवान का परम भक्त कहता नहीं अघाता। रात सोते, दिन उठते, राम-नाम सुमरन करता। भगवई पहनता। मस्तक चंदन तिलक शोभता। कानों की लवों और गले के टेटुआ हल्दी की छिटकें होतीं। वह उठ खड़ा हुआ था। उसने माइक हाथ में लिया और श्रद्धालुओं से रू-ब-रू कहने लगा- " मंदिर की गिरतीं-किरतीं दीवारें, बिन छत बदरंग होतीं मूर्तियाँ हमारी आस्था पर दाग है। हमें भूखो रह कर भी मंदिर निर्माण करवाना होगा। मैं भगवान के समक्ष प्रण लेता हूं कि देश-प्रदेश के धन्ना-सेठों, साहूकारों-भामाशाहों और भक्तों के घर-घर जाऊंगा। झोली फैलाऊंगा और चंदा एकत्रित कर पाँच लाख रूपये की व्यवस्था करूंगा।" श्रद्धासिक्त हाथों तालियां बज उठी थीं। कण्ठ-कण्ठ वाहवाही हुई।

उन बातों को चौथा महीना बीत रहा था। सूर्यास्त की लालिमा विलुप्त हो रही थी। पिताम्बर पुजारी मूर्तियों के सामने अर्घ्य थाल फेरता सांध्य आरती में लीन था। धर्मदीन वहाँ आ खड़ा हुआ था और आरती संपन्न होने तक हाथ जोड़े होंठ बुदबुदाता मंत्रोचारण करता रहा। पुजारी के आसन पर विराजने के बाद ध र्मदीन उसके सम्मुख बैठ गया था। उसने रुपए और रसीद पुजारी को संभला दिये थे। पुजारी ने रसीद का पन्ना-पन्ना हिसाब जोड़ा और रुपए गिन लिये। सांस ऊपर-नीचे हुई। पुतलियां घूमीं- 'रसीद पाँच लाख रुपए की कटी है और संभलाए मात्र सवा लाख हैं। आटा में नमक तो सुना, यहाँ तो नमक में आटा! ठगई! अंधेर।'

धर्मदीन ने समीकरणी नजरों के पुजारी की ओर लखा। पुजारी ने रूपये जेब में रख लिये और बैग में से दूसरी रसीद निकालकर धर्मदीन को पकड़ा दी थी।

सम्पर्कः 09460474465

●●●

कहानी

प्रश्नचिन्ह (?)

मलखान सिंह

पिछले तीन दशकों से गांव की पूर्व दिशा में बीच चौराहे पर खड़ा पीपल गांव के सुख-दुख, लड़ाई-झगड़ों, पंचायतों और आम बातचीत-बहसों में शामिल रहा है। पीपल के सामने पंडित राधेश्याम की साईकिल में पेंचर लगाने की छोटी-सी दुकान है और इसी दुकान में पंडित राधेश्याम ने समय की नब्ज को पहचानकर बच्चों को बेचने के लिए कुछ चीजें रख लीं - जैसे-चाँद-तारे, टोफियाँ, मुन्नी के तारे, बंटी और बबली आदि। (ये सभी चीजों के नाम हैं) दो प्राईवेट स्कूलों और एक सरकारी स्कूल में जाने वाले बच्चे पं. राधेश्याम की आमदनी को बढ़ा रहे हैं। पीपल के पास ही कल्लू नाई और टिड्डा नाई की दुकान है। पीपल के दायीं तरफ पंडित विशम्भर की आटा-चक्की है। पीपल के ठीक बायीं ओर सत्तर वर्ष पुराना कुआँ अपनी खस्ता-हालत की गवाही दे रहा है।

पीपल के नीचे बड़ा-सा चौंतरा बना हुआ है। चौंतरे पर हमेशा बीसियों लोग बैठे रहते हैं, दो जाते हैं, तो चार आते रहते हैं। 17 अगस्त, 2011 का दिन चौंतरे पर बैठे लोगों के लिए एक खास दिन है। आज यहां लोग रोज की तरह एक-दूसरे पर छींटाकशी करने की बजाय देश से भ्रष्टाचार मिटाने के लिए अनशन पर बैठे अन्ना हजारे पर गर्मागर्म बहस कर रहे हैं।

''बूड्डा ना तो कमाल कर दिया, कांग्रेस की मां चो कै धर दी, सरकार आगा-पीछा भाजी फिरा बूड्डा का, डरदी ना अनशन पा बैठण तां पहलां ही तिआड़ जेल मा (में) गेर दिया।'' पंडित विशम्भर चक्की वाले ने रात की खबरों के आधार पर निष्कर्ष में ये बात कही।

कल्लू नाई भी दुकान में ग्राहक न होने के कारण गपशप मारने के लिए चौंतरे पर आ गया था। कल्लू नाई हमेशा कांग्रेस सरकार के खिलाफ बोलता है क्योंकि हीरा नाई का पिता रामेशर नम्बरदार था। रामेशर के मरने के बाद गाँव के कांग्रेसी नेता ने हीरा को बाप की जगह नम्बरदार बनाने के लिए सहयोग दिया था, जबकि कल्लू नाई खुद नम्बरदार बनना चाहता था।

कल्लू नाई ने पंडित विशम्भर की बात को आगे बढ़ाया ''बूड्डा नी है वो, दूसरा गाँधी है। सरकार की चूळ लाकै धरदी उसना तो। माराष्ट्र (महाराष्ट्र) मा भी उसना बोत (बहुत)से मंत्री टाए आं। अड़ियल आ बूड्डा, जिस बात पा अड़ जा उसना पूरी करवा का ही दम लेवा।''

चौंतरे पर तीन-चार बुजुर्ग तो ऐसे थे, जिनको ये बातें दूसरे परलोक या देश की लग रही थी। ये सब बातें उनके ऊपर से जा रही थी।

एक बुजुर्ग ने पूछा 'यू बूड्डा कौण है भाई।'

कल्लू नाई बोला 'अन्ना जारे आ, गांधी का दूसरा अवतार।'

'यू किस बासता लड़र्या' बनवारी ने पूछा।

बनवारी छोटा किसान है जिसके पास दो एकड़ जमीन है, आठ-दस भैंसे भी रखता है। अपना काम निपटाने के बाद चौंतरे पर अपनी महफिल बैठाता है।

'आपणा बासता लड़ै रै यू तो अर (और) बंसीलाल की ढाळ (तरह) इसना ना तो ब्याह करवाया अर अपणी जमीन भी गाँव का नाम करवा दी।' पं. विशम्भर ने अपने ज्ञान की पताका फहराई।

बंसीलाल ने पं. विशम्भर को लाठी मारने का अभिनय किया क्योंकि बंसीलाल भी कुंवारा है और उसने भी अपनी एक एकड़ जमीन अपने भतीजे के नाम करवा रखी है। बंसीलाल गांव की राजनीति के अलावा देश-दुनियां की भी खबर रखता है। उसका एक ही ठिकाना है - चौंतरा।

'आ पंडत (पंडित) कणा तेरा अन्ना, बाबा मंगलदेव की डाल दो आन्नै का भी नी लिकड़ा।' सिमरा ने मंगलदेव से अन्ना की तुलना करके बहस को एक नया मोड़ दे दिया।

बंसीलाल, मंगलदेव का नाम आते ही चुप न रह सका 'बाबा मंगलदेव तो करोड़ों-अरबों का मालिक है। मंगलदेव तो ठग भी आ अर पाखंडी भी। अलबेरा का जूस की बोतल भी तीन सौ रपियां (रूपये) मा बेचा। आच्छया लिकड़गे मोडा (बाबा) के भूत, नही तो कबूतर के पंख्या की डाळ फड़-फड़ करी जावा था।'

'ठीक कवा चाचा तूं, काड़ा टैं-टैं अर काड़ा अन्ना जारे।

'अन्ना जारे तो हनमान की ढाळ ब्रह्मचारी है, उसकी पूरी जिंदगी मा एक भी दाग नी, अर ना ही अन्ना, मंगलदेव की ढाळ पीठ दिखाका भाजण आळा। मोडा भाषण मा तो भगत सिंह और की बात छेड़ागा अर जद पुलिस के डंडे पड़े सब ता पहलां भाज्या अर वां भी औरतयां के कपड़े पहनका।' कल्लू नाई ने विस्तार से कुछ बढ़ा-चढ़ाकर अपनी बात रखी।

तभी बनवारी बोला 'इसना तो भई फिर बाबा आळा बाणा भी छोड़ दिया।'

'इसता तो खरा कमलानन्द रया, जो तीन मीनयां (महीनें) तक गंगा का पाणी बचाण बास्ता भूखा मर गया अर यू पांच दिन मा ही घिस्सी कर गया।' बंसीलाल ने ये बात कहकर अपने-आपको काफी हल्का महसूस किया।

'एक ता पेड़्डे पड़े आं रा भई दुनिया मा, पता नी के-के (क्या-क्या) सुण का मरांगे, एक बुजुर्ग ने चौंतरे पर लेटने के लिए टाँगे पसारते हुए कहा।

पंडित राधेश्याम ने भगवान का नाम लेकर अपनी छोटी-सी दुकान खोली। साफ-सफाई और धूप-बत्ती करने के बाद पंडित राधेश्याम चौंकड़ी मारकर बैंच पर बैठा ही था, तभी चौंतरे की ओर से ऊंची आवाजें सुनाई दी। आवाजें सुनकर पंडित राधेश्याम को बेचैनी होने लगी। वैसे रात से ही पंडित जी बेचैन थे, रात को उन्हें नींद भी नहीं आयी क्योंकि रात बारह बजे तक अलग-अलग न्यूज चैनलों पर पं. राधेश्याम अन्ना आन्दोलन को ही देखता रहा। वह सारी रात छत पर भटकता रहा इस इन्तजार में कि कब सुबह हो और कब वह चौंतरे पर बैठे लोगों के सामने भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन के बारे में अपने विचार रखकर उन पर धाक जमा सके। दुकान को खोलने से पहले उसने एक नजर चौंतरे की तरफ मार ली थी और लोगों की रोज से ज्यादा भीड़ देखकर मन-ही-मन खुश भी हुआ। रात की उठी बेचैनी ने पंडित राधेश्याम के कदम खुद-ब-खुद चौंतरे की ओर बढ़ा दिए।

'आ जा अन्ना जारे' बनवारी ने पं. राधेश्याम को संबोधित करते हुए कहा।

'बस इतणी बड़ी उपाधि न देओ मेरता, अन्ना तो परमात्मा का अवतार है, मेरी के ओकात उसका सामणी' पं. राधेश्याम ने कहा।

'आ पंडत मारा (हमारा) नाम का तो तूए अन्ना है।' बनवारी ने मुस्कुराकर कहा।

बनवारी द्वारा अन्ना के साथ अपनी तुलना सुनकर पं. राधेश्याम को अन्दर-ही-अन्दर बड़ी खुशी महसूस हुई क्योंकि खबरों में एक ही दिन में अन्ना का पूरे देश में प्रभाव देखकर पं. राधेश्याम के रोंगटे खड़े हो गए थे और उसका भी अन्ना जैसी शुख्सियत बनने का मन करने लगा।

पंडित विशम्भर ने भी कहा, 'ओ राधे बेकार मा भी तो दुकान में बैठा रैवा, इसता तो अच्छा अन्ना की ढाळ देश बास्ता लड़ ले। तेरा भी नाम होवागा अर गांव का नाम भी पूरा देश मा जावैगा।'

'कोई मेरा साथ तो दे, मैं तो अनशन पा भी बैठण बास्ता तयार हूं। शहर मा बैठदे हों, शहर मां तयार हूं। अर जे थारा दिल्ली जाण का मन करदा हो, दिल्ली भी जाण पा तयार हूं।'

बंसीलाल बोला 'देख पंडत तू तो है ठाली, विशम्भर और ना तो चाक्की सम्भालणी पड़ा, किसी ना कुछ काम है अर किसी ना कुछ।

तेरा तो छोरा भी कमावा, तेरा बास्ता तो पूरा मौका पड़्या अर तेरा इसे-इसे कामां मा जी लागै'

कल्लू नाई बोला 'ओ ताऊ आज पंजाब केसरी अखबार मा आ री कि सैक्टरेट आगा बहुत से संगठन धरना पा बैठे आं, तू भी उनका गेल्ला बैठ जा, तेरा भी नाम पूरा देश मा छाजागा।'

ये बातें सुनकर पं. राधेश्याम के शरीर में तरंग-सी उठने लगी, उसके खून का दौरा भी तेजी से बढ़ने लगा और पंडित राधेश्याम ने जोश में आकर पीपल को साक्षी मानकर ऐलान कर दिया, ऐलान किया भी तो शुद्ध हिन्दी में 'जब तक अन्ना हजारे की मांगे नहीं मानी जाएंगी, तब तक मैं अन्ना हजारे की तरह अन्न-फल ग्रहण नहीं करूंगा। हां-एक बात जरूर कहना चाहूंगा मैं चाय जरूर लेता रहूंगा।'

सभी ने मिलकर पं. राधेश्याम को इतना बिफरा दिया था वह खुद को लोगों के सामने रोक न सका। पंडित का स्वभाव भी ऐसा है कि वह दो-तीन महीने बाद कुछ-न-कुछ नया करता रहता है। पं. राधेश्याम सरपंच के पिछले चुनाव में सभी के मना करने के बाद खड़ा हो गया। उसके पक्ष में कुल 2700 वोटों में से 61 वोट पड़े। बस पंडित की जिद्द थी चुनाव में खड़ा होना। राजनैतिक पार्टियों में वह ऐसी पार्टी का साथ देता है जिसका न तो कोई जनाधार है और न कोई विचारधारा। जैसे एक बार उसने 'जनता-शक्ति' पार्टी का पूरा प्रचार-प्रसार किया। पंडित ही गांव में सबसे पहले दादा जी के पंथ 'स्वाध्याय' के पहले प्रचारक बने।

आज भी पंडित राधेश्याम ने देश में प्रसिद्ध होने के लिए, अखबार या टी.वी. में नाम-फोटो के लिए अन्ना के समर्थन में भ्रष्टाचार मिटाने के लिए अनशन का ऐलान किया। पं. राधेश्याम दुकान बंद करके, कंधे पर अंगोछा गेरकर अकेले ही शहर में अनशन पर बैठने के लिए चल दिया। पंडित के चले जाने के बाद चौंतरे पर बैठे लोग ठहाके मारकर हँसने लगे।
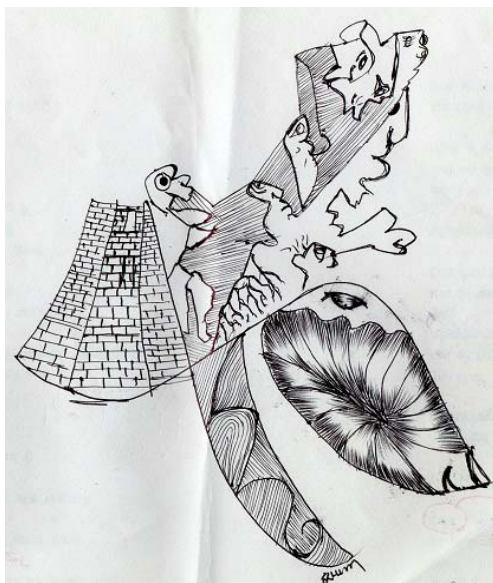
चौंतरे के पास से ही गंगाराम के मकान से हारमोनियम बजाने की आवाज सुनाई दे रही थी। गंगाराम एक गजल की धुन तैयार कर रहा था। ग़ज़ल का मतला था

एक उम्मीद की किरण जागी है यहां
शहर चुप है, चौक बागी है यहां।

पीपल के नीचे बैठने वाले लोग और गंगाराम का बाप, गंगाराम के संगीत के शौक को शोर समझकर उसे गालियां बकते रहते थे, लेकिन गंगाराम अपनी धुन में मस्त रहता।

पंडित राधेश्याम लगातार पांच दिन जनलोकपाल बिल को लाने के समर्थन में शहर जाता रहा। वह सुबह जाता, शाम को वापिस आ जाता। पं. का अनशन जारी था। लेकिन अब वह परेशान हो गया था क्योंकि हर रोज शहर आने-जाने के लिए किराया देना पड़ता और शहर में चौक पर उतरकर सचिवालय तक पैदल जाना पड़ता। न ही पं. राधेश्याम को गाँव की ओर से कोई समर्थन मिल रहा था। हां शहर में जाने से पंडित राधेश्याम की कुछेक संगठनों से जान-पहचान हो गई थी, जो अन्ना के समर्थन में धरने-प्रदर्शन कर रहे थे। इन संगठनों में कोई उसे फोन करके सचिवालय के पास बुलाता, कोई संसद का घेराव करने के लिए बुलाता। पं. राधेश्याम की पूछ तो होने लगी थी, लेकिन अफसोस की बात ये थी कि संगठनों की भीड़ में वह बहुत पीछे रह जाता और अभी तक उसका नाम किसी अखबार में नहीं छपा था। अखबार में नाम न आना पंडित को कचोट रहा था।

शहर से आने के बाद पं. राधेश्याम अपनी दुकान के सामने बैठ जाता। लोग अब चौंतरे पर बैठने की बजाय उसकी दुकान के आगे बैठने लगे। पं. राधेश्याम ने अपनी दुकान के सामने दो चार्ट लटका रखे थे। एक चार्ट पर लिखा हुआ था '17 अगस्त, 2011 से अन्ना के समर्थन में, भ्रष्टाचार के विरोध में पं. राधेश्याम अनशन पर है।' दूसरे चार्ट पर लिखा हुआ था 'अन्ना नहीं आंध ी है, दूसरा गांधी है।'

गांव में युवा-पीढ़ी भी कैसे इस आंदोलन से अछूती रहती। गांव के नौजवानों में आस-पास के गांवों में धरना-प्रदर्शन होता देखकर बेचैनी बढ़ रही थी कि हमारे गांव में भी प्रदर्शन होना चाहिए। सभी को इस बात का दुःख हो रहा था जब हरेक गाँव का नाम अखबार मे आ गया तो हमारे गाँव के लोग क्यों पीछे रहें। गांव के सबसे जागरूक नौजवान बलराज और उसके युवा साथियों में इस आंदोलन पर चर्चा होती रहती और केजरीवाल, प्रशांत भूषण, किरण बेदी जैसी शख्सियतों को देखकर युवाओं में भ्रष्टाचार मिटाने का जज्बा-सा पैदा हो गया। वैसे बलराज का गाँव में प्रभावशाली व्यक्तित्व है। उसकी सामाजिक-राजनैतिक मुद्दों पर अच्छी पकड़ है। एक बार तो बलराज ने युवा साथियों और बुजुर्गों के सहयोग से मुखिया डिप्पोधारक की बेईमानी के खिलाफ हल्ला बोल दिया था, अंत में डिप्पोधारक को झुकना पड़ा। बलराज और उसके साथियों ने पं. राधेश्याम को साथ मिलाकर भ्रष्टाचार के खिलाफ गांव की हर गली में नारों के साथ रैली निकालने के बारे में विचार किया। बलराज, पंडित राधेश्याम के बिना प्रदर्शन करना चाहता था, लेकिन सभी युवा पंडित को साथ लेकर प्रदर्शन करना चाहते थे, क्योंकि एक तो पंडित जी सप्ताह-भर से अनशन पर था, यदि उसको साथ न लेंगे तो गांव में गलत संदेश जाएगा। बलराज का कहना था पंडित को साथ लेने से हमारी छवि खराब होगी। आखिर में पंडित को साथ लेकर प्रदर्शन पर सहमति हो गई। बलराज ने साथियों का मन रखने के लिए अनमने मन से हां भर दी।

शाम को बलराज, संजीव, प्रेम, राजेश और प्रवीन के साथ पंडित राधेश्याम की दुकान पर पहुचे। पं. राधेश्याम बलराज और उसके साथियों को देखकर काफी खुश हुआ। एक लम्बे बैंच पर बैठने को कहा। कुछ लोग वहां पहले से ही बैठे थे। राजेश ने पं. राधेश्याम की प्रशंसा करते हुए कहा, 'ताऊ आप देश के लिए बोत अच्छा काम कर रहे हो, ऐसे लोग कहां मिलते हैं जो अपनी दुकान छोड़कर अनशन पा बैठे हों।'

पंडित राधेश्याम ने हाथ आसमान की ओर उठाते हुए कहा, 'बस भई सब उस परमात्मा की दया है। मेनां तो बस यू प्रण ले राख्या जब तक अन्ना जारे अनशन पा बैठ्या, तब तक मैं भी अनशन करदा रहूंगा।'

'ठीक कह रया ताऊ तों, गपशप मारण ता तो देश बास्ता लड़ना बड़ी बात है।' प्रवीन ने कहा। फिर प्रेम बोल पड़ा, 'ताऊ पास के गाँव मा भी रोज प्रदर्शन हो रे हैं। एक दिन तो वो गाँव तै सैक्टरेट तक दस कि.मी. पैदल गए। अर अपणा गाँव मा कुछ भी नी हो रया। अपणा गाँव मा तो किसी काम मा भी एका नी।'

'भई मैं तो तैयार हूं, थाम कैंदे (कहते) हो तो दिल्ली चलो या फेर शहर मा ही धरणा पा बैठ जावां। मेन्नां तो थारा बरगे नौजवानां का साथ चिए (चाहिए)।' पं. राधेश्याम ने अपनी राय रखी।

'ताऊ दिल्ली जाण का कोई फायदा नी, वहां तो पहलां ही रामलीला मैदान में हजारों लोग इकट्ठा हो रे हैं अर शहर मा भी रोज प्रदर्शन होवां। जरूरी है अपणे गांव मा लोगों को जनलोकपाल बिल के बारे में जागरूक करना। यदि बिल बण भी गया अर लोग्यां ना उसका प्रयोग नी किया तो आन्दोलन का के फायदा होवागा। अपणा गांव में आर.टी.आई. का कितने लोगों ने प्रयोग किया, जरूरी है ताऊ लोगों को इन कानूनों के बारे में बताणा।' बलराज ने चुप्पी तोड़ते हुए कहा। 'हां भई बलराज, अन्ना भी यही कहर्‌या था इस बिल मा 60 ता 65 प्रतिशत भ्रष्टाचार खत्म होवागा।'

'ताऊ भ्रष्टाचार तो आपां ना ही फैला राख्या, आपां भी चुप हैं, बस अपणे-अपणे काम काड़ण की रै सबना।'

आखिर में सभी ने मिलकर फैसला लिया कि कल शाम चार बजे सभी पीपल के नीचे इकट्ठे होंगे। बलराज और उसके साथियों ने लोगों को इकट्ठा करने का जिम्मा लिया। पं. राधेश्याम ने कहा कि 'मैं सौ छोटी तिरंगे की झंडी ले आऊंगा और चार्ट थाम बणा लियो।'

बलराज ने 'हां' भरी।

तभी कल्लू नाई बोल पड़ा, 'ताऊ अन्ना की टोपी जरूर ले आइयो।'

'मिली तो जरूर ल्याऊंगा।'

तभी पं. राधेश्याम के फोन की घंटी बजी। पं. राधेश्याम ने फोन उठाया' 'हैलो हां जी प्रधान जी।'

'नहीं जी, मैं कल नी आ सकता।'

'अब तो मुझे गाँव में ही नौजवानों का सहयोग मिल गया, कल शाम को गाँव में ही प्रदर्शन करेंगे।'

'ठीक है जी' कहकर पं. राधेश्याम ने फोन काट दिया।

पं. राधेश्याम थोड़ी सी छाती चौड़ी करके बताने लगा कि शहर से विश्व शक्ति दल के प्रधान का फोन था कि कल सांसद के ऑफिस का घेराव करेंगे, वहां पहुंच जाना। अब मुझे क्या जरूरत है जाने की, जब मुझे गाँव में ही समर्थन मिल गया।

कल्लू नाई मजाक में बोला, 'इब तो तू ही मारा (हमारा) अन्ना हजारे है ताऊ।' 'ठीक है ताऊ कल ना पीपल के नीचा इकट्ठे होवांगे' बलराज ने जाने की इजाजत मांगी।

बलराज ने प्रदर्शन में हिस्सा लेने के लिए अपने सभी साथियों से सम्पर्क किया और सभी ने मिल-जुलकर अपनी-अपनी जिम्मेदारी ली। युवा साथियों ने दस-बारह चार्ट तैयार कर लिए। बलराज अपने साथी विकास से भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन पर चर्चा कर रहा था। विकास एक जनवादी संगठन में काम करता है, किसानों, मजदूरों, महिलाओं सम्बन्धी आन्दोलनों में भाग लेता रहता है। विकास के मन में इस आंदोलन को लेकर कुछ सवाल थे, वो बोला, 'बलराज, अन्ना हजारे की सिविल सोसाइटी में एक भी दलित नहीं है और इसका एक सदस्य संविधान बदलने की बात कह रहा था और रामलीला मैदान में कुछ लोग 'आरक्षण खत्म करो' के बैनर भी लिए हुए थे।'

बलराज कुछ सोचकर बोला, 'विकास, अपने संविधान में जरूरत के अनुसार कुछ संशोधन होते रहे हैं। 'आरक्षण खत्म करो' वाले बैनरों के बारे में मैनें भी सुना है, लेकिन ये लड़ाई भ्रष्टाचार के खिलाफ है और भ्रष्टाचार से हम सब तंग है, इसलिए हमें मिलकर लड़ना चाहिए। कुछ संगठन और पार्टियां है जो इस आंदोलन का फायदा उठाना चाहती हैं। खैर आंदोलन है तो एक बड़े मुद्दे को लेकर, जिससे सब परेशान हैं।'

'ठीक है बलराज कि ये लड़ाई भ्रष्टाचार को लेकर है, लेकिन सबसे बड़े भ्रष्टाचारी तो अंबानी, मित्तल, टाटा-बिरला जैसे पूंजीपति हैं, उनके खिलाफ तो एक भी शब्द नहीं बोला जा रहा।'

'तुम ठीक कह रहे हो विकास, सुना तो ये भी है कि कॉर्पोरेट जगत की शह पर ही ये आंदोलन चल रहा है।' थोड़ी देर चुप रहकर बलराज फिर बोलने लगा 'लेकिन इस आंदोलन से अनपढ़ लोगों में भी कुछ हद तक भ्रष्टाचार के मुद्दे पर बहस तो होने लगी, कल आगे चलकर लोगों की चेतना का विकास हो सकता है और ये आंदोलन कार्पोरेट जगत के खिलाफ भी जा सकता है।'

'मुझे इस आंदोलन में इसकी कोई गुंजाइश नजर नहीं आती' विकास ने गम्भीरता से कहा। बलराज के पास इस बात का कोई जवाब नहीं था। कुछ युवा साथियों के आने से चर्चा आज की रैली को लेकर होने लगी।

बलराज और कुछ युवा साथी प्राईवेट और सरकारी स्कूलों में रैली में हिस्सा लेने के लिए बोल आये थे।

दोपहर बाद तीन बजे बलराज कुछ साथियों के साथ पं. राधेश्याम की दुकान पर गया। पं. राधेश्याम ने खड़े होकर सभी को बैठने के लिए कहा और खुद छोटे-से बैंच पर चौंकड़ी मारकर बोलने लगा, 'लो भई, मैनें तो अपणा काम कर दिया। सौ झण्डी ले आया, दो बड़े झण्डे और दो चार्ट।'

'कोई बात नी ताऊ, लोग भी बोत आवांगे अपणे प्रदर्शन मा, पूरा गाँव मा प्रचार-प्रसार कर राख्या।' बलराज ने कहा।

'बलराज, पत्रकार भी बुला राखे हैं या नी।'

'ताऊ, पत्रकारां ना तो शहर के प्रदर्शन ही नी मुकदे, फिर भी आपां फोटो अर प्रैस नोट बणाका दे आवांगे अर तेरा अनशन की भी खबर छपवा देंगे।'

धीरे-धीरे लोग प्रदर्शन में हिस्सा लेने के लिए आने लगे। बच्चों की संख्या एक सौ पचास के करीब हो गई। लगभग तीन सौ के करीब लोग इकट्ठा हो गए। तिरंगे की झंडी लेने के लिए बच्चों में छीना-झपटी होने लगी। बच्चों का उत्साह देखने लायक था। गाँव में भारी संख्या में लोगों को इकट्ठा होता देखकर बलराज में भी जोश आ गया। मौके पर ही संजीव कागज की टोपी बनाकर बांटने लगा। बलराज और उसके साथियों ने बच्चों को शांत किया। बलराज ने चौंतरे पर खड़े होकर जनलोकपाल बिल के बारे में बताया। बलराज ने पूरे जोश में भाषण दिया और एकाध रोंगटे खड़े करने वाली कविता, ग़ज़ल की पंक्तियाँ सुनाई, जिससे लोगों में भी इस आंदोलन को लेकर उत्साह भर गया। बलराज ने पंडित राध ेश्याम की भी प्रशंसा की। बलराज के बाद पं. राधेश्याम ने अपने विचार रखे 'ये लड़ाई अकेले अन्ना की नहीं, हम सबकी है। हरेक युवा, बच्चों और बड़ों को इस आंदोलन में भाग लेना चाहिए। आज हम गाँव में रैली निकाल रहे हैं, कल हम शहर में निकालेंगे और जरूरत पड़ी तो भूखे-प्यासे भी मरेंगे और लाठियां भी खायेंगे।' दस मिनट और बोलने के बाद पं. राधेश्याम ने अंत में कहा, 'अब मैं अपनी वाणी को आराम देता हूं, और सभी को इस आंदोलन में

बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने का आवान (आह्वान) करता हूं।' पं. राध ेश्याम हिन्दी में भ्षाण देना कई पार्टियों और संगठनों में रहकर सीख गया था। टी.वी. से भी पं. राधेश्याम की भाषण कला में निखार आया। कई बार पं. की जुबान फिसल जाती। जैसे विराम को आराम कह देता, आह्वान को आवान।

पंडित राधेश्याम के भाषण के बाद नारे लगाए गए ''इंकलाब-जिंदाबाद', 'अन्ना तुम आगे बढ़ो, हम तुम्हारे साथ हैं।' गांव में नारे लगाने की आदत न होने के कारण शुरूआत में युवा और बड़ों ने धीमी आवाज में नारे लगाए, शर्म खुलने के बाद वो भी जोर-जोर से नारे लगाने लगे।

पंडित राधेश्याम कद-काठी में अन्ना हजारे की हुबहू कॉपी है। उन्होंने आज सिर पर कपड़े की टोपी (अन्ना-टोपी) पहन रखी है। (टोपी पं. विशम्भर ने स्पेशल पं. राधेश्याम के लिए बनवाई है।) पं. राधेश्याम के गले में एक चार्ट डाला हुआ है जिस पर लिखा है 'अन्ना नहीं आंधी है, दूसरा गांधी है।'

नारों की गूंज से बच्चों और युवाओं में जोश पैदा हो गया। वे सोचने लगे कि आज ही भ्रष्टाचार को खत्म कर देंगे। लड़कियां-औरतें अपने-अपने घरों की छतों से गलियों से गुजरते हुए इस प्रदर्शन को काफी उत्साहित मन से देख रही थी। ये भी विडंबना थी इस प्रदर्शन में एक भी औरत शामिल नहीं थी। बलराज को इस बात का मलाल था कि उन्होंने महिलाओं को प्रदर्शन में शामिल करने का कोई प्रयास भी नहीं किया। दलित जातियों से कुछेक लड़के आए थे। औरतों और दलितों के बिना भी इस प्रदर्शन में अच्छी-खासी संख्या हो गई थी, लेकिन इनके शामिल होने से प्रदर्शन में और भी ताकत आ जाती।

युवाओं का जोश देखने लायक था। कुछ लड़के छत पर खड़ी अपनी प्रेमिकाओं को देखकर जोर-जोर से नारे लगाते 'अन्ना तुम आगे बढ़ो, हम तुम्हारे साथ हैं।' हाथ उठाते हुए लड़के अपनी प्रेमिकाओं की ओर आंदोलन में शामिल होने का इशारा कर देते। आज वो अन्ना हजारे से कम नहीं दिख रहे थे। पं. राधेश्याम अपने छोटे कद को थोड़ा झुकाकर नमस्कार कर रहे थे। लोग पं. राधेश्याम की तारीफ कर रहे थे। हरेक गली से कुछ-न-कुछ लोग जुड़ते ही जा रहे थे। सरपंच बीर सिंह की कोठी के पास पहुंचने के बाद बलराज और उसके साथी इंकलाब-जिंदाबाद के नारे लगाने लगे तो ये नारे बीर सिंह सरपंच को गोली की तरह छलनी करने लगे। वैसे सरपंच दिखावे के लिए पंडित राधेश्याम के गले मिला और सभी नौजवानों को बधाई दी कि लड़कों का ये काम बहुत बढ़िया है। हम भी तुम्हारें साथ हैं पर सरपंच मन ही मन लोगों की भीड़ देखकर जल-भुन रहा था।

आज गाँव की हर गली सिविल सोसाइटी द्वारा तैयार किए गए जनलोकपाल बिल के समर्थन में और भ्रष्टाचार के विरोध ा में नारों से गूंज उठी। पूरे गाँव की गलियों में रैली निकालने के बाद पीपल के नीचे सब लोग इकट्ठा हुए। थोड़ी देर भाषणबाजी के बाद प्रवीन ने विचार रखा कि 'कल हमें मोटर-साईकलों पर आस-पास के गाँवों में जुलूस निकालना चाहिए।'

लेकिन बलराज बीच में ही बोल पड़ा 'शायद कल तक समझौता हो जाए सरकार और अन्ना टीम में, यदि नहीं हुआ तो हम प्रदर्शन करते रहेंगे।'

गांव में रैली निकालने पर चर्चा करने के बाद बलराज और उसके दोस्तों ने पं. राधेश्याम से इजाजत ली।

सरपंच की कोठी के आगे दसियों लोग बैठे थे। सरपंच हुक्का की घूंट भरकर धुआं निकालते हुए बोला ''यू धन्ना के छोरा के तो ज्यादा ही पैर लिकड़ रे आं।''

'किसकी बात करा सरपंच तू' -- जिले सिंह ने अपना चादरा झाड़ते हुए पूछा।

'यूए छौरा जोणसा रिसवत ना बंद करवाण बासता नारे ला रया था।'

'आच्छया -चंदन का पोता की बात करा तों'

'कोनी नवां खून आ -दो दिन मा ठंडा होजा गा।' मिड्डा नंबरदार ने सरपंच की चिंता भांपते हुए कहा।

''नंबरदार - तों नी जाणदा छोरा बोत तेज आ यू। पढ़ भी बौत रया, बात भी बोत आगा की करा, कदे इन कमीणा ना बकावै थारे गेलया जुलम हो रया, कदे औरतां ना कहवा थाम ओल्ले ना करया करो, जादा ए पर लिकड़रे आं।'' सरपंच ने कहा।

''अर या भी सुणी आ यू तो जात-पात की भी भींट नी राखदा।'' मिड्डा नंबरदार बोलया।''

'इब यो ठेका अर खुरदयां न बी बंद करवावागा। मुखिया के खिलाफ भी इसे छोरा नैं भडकाये थे।'

(मुखिया डिपोधारक सरपंच के परिवार से है और जो गांव में अंग्रेजी शराब का ठेका है खुद बीरसिंह सरपंच का है।

'फेर तो इलाज करणा पड़ागा भई इसका।' धीरा ने कहा।

सरपंच ने हामी भरी।

असल में सरपंच बीर सिंह पिछले दो पलानों से गांव का सरपंच बनता आया है। जिस तरह बलराज लोगों के बीच में रहकर उन्हें जागरूक कर रहा है और उनकी समस्याओं के लिए लड़ रहा है तो ये बात सरपंच को तंग कर रही है। गांव में बलराज की वजह से लोग सरपंच के खिलाफ मुंह पे बोलने लगे हैं। बलराज के पास न तो सरपंच की तरह पचासों एकड़ जमीन है, न कोई बिजनेस, न कोई लट्ठ का जोर। बस बलराज सीधी जुबान में लोगों के हक की बात करता जो लोगों की समझ आ जाती। रैली में पढ़े-लिखे युवाओं को बलराज के साथ देखकर सरपंच बीर सिंह को अपने पैरों तले की जमीन खिसकती नजर आ रही है।

सरपंच बीर सिंह को इतनी बेचैनी हो रही थी कि रात को नौ बजे पंडित राधेश्याम के घर पहुंचा -'राम-राम पडंत जी'

'आओ जी सरपंच साहब।' पंडित राधेश्याम ने कुर्सी छोड़ते हुए कहा।

पंडित राधेश्याम के पास पंडित विशम्बर भी बैठा था।

'बोत बढ़िया करया पंडित जी, आज तो पूरा गांव मा तेरा नाम बिक रया।' सरपंच ने कहा।

'बस थारे बरगे जजमाना की दया जी।' पं. राधेश्याम ने हाथ जोड़ते हुए कहा।

'एक राय देण आया हूं पंडत जी जे आप मानदे ओ। मानागा तो तू उस छोरा की, के नाम आ उसका --'

बलराज-पं. विशम्बर ने नाम याद करवाया

हां---बलराज।

'ना सरपंच साब थारै तै थोड़ी भाज्या जा, वा काल का छौरा के घटी-बदी का उसना बेरा, आप राय देवो जी।'

'मैं तो यो कहणा चाहूं आप गाम मैं ए अनसन पै बैठ जो हमभी तेरा ए साथ देवांगे।'

'या तो चौधरी साब आपनै मारा मूं (मुंह) की बात छीन ली, मैं भी राधा ना याए बात समझा रया था।' पं. विशम्बर बोला।

'बस उस छोरा ना गेला तो ला लीयो पर चौकन्ने भी रइयो, बा पंडता का खलाफ भी बोला।'

'या तो ठीक कवै सरपंच तू, आछया तौं ए बता यो जात-पात की ड्योळ थोड़ी खतम होवा, या तो परमातमा नै बणायी आ, अर वा तो औरतां न भी फैरावा था गळी-गळी मां, बड़ी मुसकिल तै समझाया नहीं उसना तो जम्मी नाक कटवा दी ओंदी।'

'बस या ए बात मैं कहणा चाहूं था।' सरपंच बोला।

'देख सरपंच साथ मा तो लेकै चालणा पड़ागा, उसके गेला बोत छौरे आं गाम के, अर खासकर थारी बरादरी के तो बोत आ।'

'यूए तो कळेश आ पंडत।'

'कोई बात नी सरपंच अनसन पा तो आपां बैठांगें, बस तों उस कलोनी का भी खयाल राखिए। गरीब पंडत हूं थारा।'

'चिंता ना करो पंडत जी तेरा काम पक्का है, आच्छया इब मैं चालूं रात भी बोत होगी।'

सरपंच के चले जाने के बाद पंडित राधेश्याम ने बलराज के पास फोन किया। बलराज ने फोन उठाते ही कहा, 'हां ताऊ जी बोलिए।'

'बेटा आज तो अपणी रैली कामयाब रही।'

'हां ताऊ - लोगां मा बोत जोश था।'

'एक बात बताणी थी बलराज।'

'बताओ।'

'मेन्ना अर पं. विशम्बर ना सलाह करी आ कि काल तड़की (सुबह) ता मैं स्कूल लोवा (पास) अनशन पा बैठूंगा अर तू भी अपणे साथियां ना ले आइए अर पं. रामा, बंसीलाल, कल्लू नाई, बनवारी भी आपणां गेला आं, वो सब कहरे आं कि इब तो मेन्ना अनशन पा बैठणा चिए गाँव मा ही।'

'देख ताऊ मैं अनशन का तो पक्ष मा तो नहीं हूं अर ना ही मैं अनशन पा बैठ सकता, तेरा मन करे तो बैठ जा।'

'थारा बिना थोड़ी मैं बैठूंगा।' पं. राधेश्याम से बीच में ही पं. विशम्भर ने फोन लेकर कहा 'देख बेटा बलराज, तू ना बैठ्या अनशन पा, आपां ना तो राधा का साथ देणा है बस, इसका गेला (साथ) बैठ्या रहणा बस, हम भी सारे उठी मिलांगे तेना, आ जिए (जाना) बेटा तड़की ना।'

बलराज ने बेमन से हां भर ली।

आज रात पंडित राधेश्याम को नींद नहीं आ रही क्योंकि सालों से उसकी नेता बनने की अधूरी चाह आज पूरी हो गई। जब गली में वह प्रदर्शन का नेतृत्व कर रहा था और दोनों हाथों को जोड़कर ऊपर की ओर उठाता और बैठकों, दरवाजों के सामने बैठे लोग खड़े होकर पं. राधेश्याम की और प्रदर्शन की प्रशंसा करते तो पंडित का कद 5 फुट 3 इंच से 6 फुट हो जाता। उसे बार-बार यही बातें याद आ रही थी। आज पंडित अपने अनशन को भी सफल मान रहा था।

वैसे पं. राधेश्याम की छवि गांव में साफ-सुथरी नहीं थी। उसने अपने पड़ोसियों के साथ जमीन के लेन-देन में घपले कर रखे थे और औरतों के बारे में भी उसके ख्याल अच्छे नहीं थे। इसलिए बलराज पं. राधेश्याम के साथ अनशन पर बैठने के लिए टालमटोल कर रहा था। लेकिन सुबह पं. राधेश्याम और पं. विशम्भर के बार-बार फोन आने पर बलराज को जाना पड़ा।

पंडित राधेश्याम ने सरकारी स्कूल के पास बने चौंतरे पर दरी बिछाकर अनशन का डेरा डाल दिया। चौंतरे के ईर्द-गिर्द नीम और शीशम के पेड़ होने से अनशनकारियों को धूप का भी डर न था। बस अड्डा भी वहीं होने से वहां काफी भीड़ इकट्ठा हो गई थी। पं. राधेश्याम अखबार का वो पृष्ठ भी ले आया था, जिस पर गाँव में हुए कल के प्रदर्शन की खबर लगी हुई थी। पहली बार पंडित राधेश्याम का नाम अखबार में आया था। खबर का शीर्षक था 'पंडित राधेश्याम सात दिन से अनशन पर।' बस पं. राधेश्याम को एक फोटो की कमी खल रही थी।

चौंतरा इतना बड़ा था कि पच्चीस से तीस लोग बैठ सकते थे। शहर जाने वाली सवारियां भी जब तक बस न आती, अनशन वाली दरी पर बैठ जातीं। दलित जाति की सवारियां पंडित राधेश्याम के पास बैठने से हिचकिचाती, लेकिन बलराज के कहने से वो दरी पर बैठ जाते। पंडित बलराज को दरी पर बिठाने से मना भी नहीं कर सकता था।

चौंतरे के दोनों सिरों पर तिरंगे के बड़े झंडे लगा दिए। एक बैनर पं. राधेश्याम के अनशन का लगा दिया। कुछेक स्लोगन चिपका दिए और एक दानी दर्जी ने कपड़े की दस अन्ना टोपियां बनाकर दे दी। इस तरह पं. राधेश्याम के अनशन का पूरा ताम-झाम सज गया। दूसरे गांवों के लोग भी सड़क से आते-जाते नारे लगा जाते 'जय हो अन्ना की', 'भारत माता की जय'

जो भी चौंतरे पर बैठता, पं. राधेश्याम उसी को अखबार का वो प ठ दिखा देता जिस पर लिखा था 'पं. राधेश्याम सात दिन से अनशन पर।' पंडित को ये मलाल था कि पंजाब केसरी में ये खबर नहीं छपी क्योंकि गाँव में अधिकतर घरों में यही अखबार आता है।

जनलोकपाल बिल के बारे में बहुत कम लोग जानते थे। बस एक भावना से लोग इस आंदोलन में पूरे देश से जुड़ रहे थे, चाहे उनकी भावना सच्ची हो या फिर किसी स्वार्थवश हो, पर लोग जुड़ रहे थे।

पं. राधेश्याम के अनशन का समर्थन करने के लिए बीसियों लोग बैठे थे, बे ाक उनमें से कुछ टाईम-पास या गपशप के लिए बैठे हों या यहां पर बैठने से कल उनका नाम भी अखबार में आ सकता है। अनशन पर बैठने का समय 9 से 5 बजे तक रखा गया। सरपंच बीर सिंह भी पं. के समर्थन में आया और थोड़ी देर बैठकर चला गया।

सिन्दर गोच्चा भी चौंतरे पर बैठा था। गाच्चों का गाँव में एक मोहल्ला है, गाँव में चाहे अच्छा काम हो या बुरा गोच्चे हर काम का मजाक उड़ाते हैं। लेकिन कभी-कभी सच्ची बात मुँह पर कह देते हैं। सिन्दर गोच्चा ने पं. राधेश्याम से कहा, 'ओ ताऊ तेरी छवि तो कोनी अन्ना की ढ़ाळ पाक-साफ, तू तो लोग्यां ना सैकल (साईकिल) मा हवा भी नी भरण दिन्दा। अर ऊं तो लड़ रया समाज बास्ता।' ये सुनकर सभी की हंसी छूट गई।

संजीव ने भी चटकारे लेते हुए कहा 'सिन्दर जी, आप सत्ता पक्ष के बढ़ते हुए जनाधार से डरकर बेबुनियाद आरोप लगा रहे हैं।' एक ठहाका फिर गूंजा।

कर्मा खाती दिहाड़ी छोड़कर पंडित के समर्थन में रोज आता। उसकी उम्र पैंतीस साल है और पाँच बच्चों का बाप है। उसने पंडित को मजाक में कहा 'पंडत, इब तो तेरा नाम अखबारां मा आण लाग्या। तेनै चैक करण बास्ता सरकारी डॉक्टर भी आवांगे। कणा तो घरां जाका रोट पीड़दा ओ। चकमा तो नी देरया तू गाँव के लोगां ना।'

पंडित राधेश्याम को गुस्सा आ गया और गुस्से में बोला 'चाहे दिल्ली ता डॉक्टर ना बुला ले, अन्न का एक दाणा भी खाया हुआ नी मिलागा। यू अनशन तो कुछ भी नी, मेन्ना तो हनुमान का व्रत मा इकतालीस दिन तक अन्न ग्रहण नहीं किया था।'

एक लड़का बोला 'ताऊ जो तो भूक्खा रै तो आठ दिन मा तेरा बजन भी कम होणा चिए अर तू तो काबरी की ढ़ाळ बोला भी आ।'

'चुप ओजो रा छोरयो, थाम जमीं सिर पा चढ़गे', पं. विशम्भर के झिड़कने से लड़के थोड़ी देर के लिए चुप हो गए।

असल में पं. राधेश्याम की छवि ऐसी थी जिस पर कोई विश्वास नहीं करता था। बलराज तब तो इस मजाक में शामिल हो जाता, लेकिन घर आकर सोचता कि अनशन पर बैठे आदमी की जो गरिमा होती है, वह गरिमा पं. राधेश्याम की न बन सकी और गाँव में अनशन एक मजाक अड्डा बन गया। पं. राधेश्याम का जो मजाक उड़ाते, उनके बारे में वो कहता 'मूर्ख और गंवार लोग हैं, इनको देश के बारे में क्या पता।'

एक बुजुर्ग सड़क से गुजर रहा था, अनशन का ताम-झाम देखकर वो पं. राधेश्याम को बोला 'आ पंडत-कोण सी पार्टी का ठा लिया तेना इब झंडा, कोई पार्टी आ इसी जोण सी तेना छोड्डी। कैंता लारया पंडत उरा तपड़, के मनवावागा लोग्यां पा ता।' पंडित राधेश्याम बस मुस्कुरा देता।

चौंतरे पर बैठे लड़के आपस में भी मजाक करने लगते। सिन्दर हर रोज पं. राधेश्याम के समर्थन में आने लगा। सिन्दर गोच्चा, कर्मा खाती से बोला 'आ खाती, क्यों बच्चयां ना भूखा मारा, दियाड़ी करले जाका, कुछ नी धरया अनशन-वनशन मा।' कर्मा खाती ने जवाब दिया 'आ गोच्चे, तेना के पता देश का बारा मा, थान्ना या तो गोबर ठाया या लोग्यां ता गाळ दई आ। थाम के जाना भ्रष्टाचार के चीज ओवा।'

'आहो दिखा खाती तू, तेना भी तो करपशन फैला राख्या, इस जमाना मा पाँच-पाँच बच्चे पैदा करका।' सिन्दर की

हाजिर-जवाबी सुनकर चौंतरे पर बैठे लोग पेट पकड़-पकड़कर हंसने लगे।

ऐसी बात नहीं थी कि सभी पं. राधेश्याम का मजाक उड़ाते, सरपंच बीर सिंह जैसे लोग तो उसके चरणों को छूकर उसकी प्रशंसा करते 'आप बहुत बड़ी लड़ाई लड़ रहे हो।' पंडित जब ऐसे शब्द सुनता तो उसकी छाती फूल जाती।

इन दो-तीन दिनों में शहर से विश्व शक्ति दल, हिन्दू परिषद, जनक्रांति दल आदि संगठनों के सदस्य आकर भाषण देते। पं. राधेश्याम और युवाओं की खूब प्रशंसा करते और एक रजिस्टर में वहां बैठे लोगों के हस्ताक्षर करवाकर ले जाते।

पं. राधेश्याम का नाम अब पूरे जिले में फैल गया था क्योंकि हर अखबार के सिटी पेज पर पं. राधेश्याम के अनशन की खबर छपती। बस पंडित को अफसोस इसी बात का था कि अभी तक फोटो नहीं छपी किसी अखबार में।

दिल्ली में सरकार और अन्ना की टीम का समझौता हो गया। अन्ना ने अनशन तोड़ने का ऐलान कर दिया। अन्ना के साथ पूरे देश में अनशन पर बैठे लोगों का भी अनशन टूटना था। पंडित राधेश्याम ने मन-ही-मन समझौता होने पर चैन की सांस ली। लेकिन सिन्दर गोच्चा जैसे लोग समझौते से उदास हुए क्योंकि अभी तो माहौल गर्म हुआ था। पंडित राधेश्याम का अनशन तुड़वाने के लिए लोगों की काफी भीड़ इकट्ठा हो गई तो किसी ने विचार रखा कि ढोल बजाने वाला बुलाना चाहिए और गुलाल भी लाना चाहिए। लेकिन बलराज ने ऐसा करने से मना कर दिया 'ये जश्न मनाने का समय नहीं है, असली लड़ाई तो भ्रष्टाचार के खिलाफ अब शुरू हुई है।' लेकिन बलराज को नहीं मालूम था आज उसकी नहीं सुनी जाएगी बल्कि गांव का सरपंच बीर सिंह और जो चौधरी लोग अनशन तुड़वाने आये हैं उनकी बात पर गौर किया जाएगा। बलराज द्वारा बहस करने के बावजूद ढोल बजाने वाला बुलाया गया।

सरपंच ने बलराज से पूछा, 'आपणा गाँव मा जूस मिल जा गा बलराज।'

बलराज गुस्से में था। बलराज की जगह संजीव ने जवाब दिया, 'हां मिल जा गा मंगलू चमार का।'

मंगलू चमार का नाम सुनकर पं. राधेश्याम बोल पड़ा 'मंगलू चमार पता नी मिलागा या नहीं, पास का गाँव मा बोत दुकान आं, ओट्ठा ता एक जणा मोटरसाईकिल पा ले आओ, दो मिनट तो लागां गी।'

सरपंच और गाँव के चौधरियों ने इस बात का समर्थन किया। बलराज गुस्से में बोला, 'थारी अक्ल मारी गई, अन्ना तो जात-पात ता ऊपर उठका देश बास्ता लड़ रया, अर थाम। फेर इस अनशन का के फायदा होया। मंगलू चमार का जूस पीण ता तेरा अनशन नी टूटदा।' बलराज का मन तो ये किया कि पंडित को दो-चार थप्पड़ जड़ दे। एक-दो युवा साथियों ने भी पंडित राधेश्याम को खरी-खोटी सुनाई। सरपंच की पार्टी और बलराज के साथियों में बहस होने लगी, बात हाथा-पाई तक पहुंच गई। लोगों ने बीच-बचाव किया।

पंडित राधेश्याम ने धीमी आवाज में बलराज से कहा 'बेटा, गांव मा भी तो इज्जत राखणी है।'

बलराज का सिर फटने लगा, उसने महसूस किया कि यदि वह थोड़ी देर और यहां रूका तो उसकी नाड़ी फट सकती है। बलराज सैंकड़ों लोगों के बीच से बाहर निकल आया। तभी ढोल बजने की जोर-जोर से आवाजें आने लगी। ढोल की हर थाप की आवाज बलराज के सीने को आरी की तरह चीरने लगी। पं. राधेश्याम का अनशन सरपंच ने जूस पिलाकर तुड़वाया। गुलाल उड़ाया गया। 'इंकलाब-जिन्दाबाद' की जगह 'भारत माता की जय', 'वंदे-मातरम', पं. राधेश्याम जिंदाबाद, सरपंच साब जिंदाबाद के नारे लगाये गए।

भ्रष्टाचार रूपी गिरगिट कीकर के पेड़ पर चढ़कर बलराज को आँखें दिखाने लगा और बलराज को विकास की वो बात याद आने लगी, जब उसने कहा था, 'इस आंदोलन में मुझे बदलाव की कोई गुंजाइश नजर नहीं आती।'

अगले दिन एक अखबार ने हरियाणा में अनशन पर बैठे लोगों पर स्पेशल कवरेज छापी, जिनमें सबसे ऊपर नाम था पंडित राधेश्याम का और साथ में अखबारों के सिटी पेज पर पं. राधेश्याम का अनशन तुड़वाते हुए सरपंच बीर सिंह की फोटो छपी।

बलराज ने जब पं. राधेश्याम और सरपंच की फोटो देखी तो भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन, अन्ना के समर्थन में खड़े होने वाले लोगों पर उसके मन में एक प्रश्नचिन्ह खड़ा कर गया।

सम्पर्क - मलखान सिंह, गाँव दयौरा, जिला कैथल, मो. 94165-78758

●●●

देसा की टेक

एक बार देसा नदी के किनारे टहल रहा था। अपनी सिद्धियों से प्रभावित करने के लिए एक साधु पानी पर चलकर देसा से मिलने आया।

देसा के पास आकर उसने कहा, 'देखा मेरा चमत्कार!'

'पानी पर चलकर नदी पार की, यही न? हां, देखा। यह तुमने कहां सीखा?'

'मैंने बारह साल हिमालय में तपस्या की। मैं एक पांव पर खड़ा रहा और सप्ताह में छह दिन व्रत रखा। तब कहीं यह सीखा।'

देसा ने कहा, 'सच्ची? यह सीखने के लिए इतने साल खोने और इतना कष्ट उठाने की क्या जरूरत थी? किश्ती वाला केवल दो रुपए में नदी पार करा देता है।'

श्रद्धांजलि

कवि वीरेन डंगवाल

05 अगस्त 1947 - 28 सितम्बर 2015

विरेन डंगवाल का जन्म कीर्तिनगर, टेहरी गढ़वाल, उत्तराखंड में हुआ। उन्होंने मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, कानपुर, बरेली, नैनीताल और अन्त में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त की। 1971 से बरेली कालेज में हिन्दी के प्रोफेसर रहे और जीवन का बड़ा हिस्सा बरेली में बिताया। वे लम्बे समय से कैंसर से पीड़ित थे। दिल्ली मे इलाज करवाते हुए वे साहित्यिक संगोष्ठियों में निरन्तर सक्रिय थे। चार कविता संग्रह प्रकाशित हैं 'इसी दुनिया में', 'दुष्चक्र में सृष्टा', 'स्याही ताल' और 'कवि ने कहा'। 2004 में 'दुष्चक्र में सृष्टा' कविता संग्रह के लिए साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया गया है। उन्हें 'रघुवीर सहाय स्मृति' पुरस्कार, 'श्रीकान्त वर्मा स्मृति' पुरस्कार तथा 'शमशेर सम्मान' से नवाजा गया। विश्व-कविता से उन्होंने पाब्लो नेरूदा, बर्टोल्ट ब्रेख्त, वास्को पोपा, मीरोस्लाव होलुब और नाजिम हिकमत के कुछ दुर्लभ अनुवाद भी किए हैं। बाँग्ला, मराठी, पंजाबी, अंग्रेजी, मलयालम और उड़िया में उनकी कविताएं छपी है।

पी टी ऊषा

काली तरुण हिरनी अपनी लम्बी चपल
टांगों पर
उड़ती है
मेरे गरीब देश की बेटी
आंखों की चमक में जीवित है अभी
भूख को पहचानने वाली
विनम्रता
इसीलिए चेहरे पर नहीं है
सुनील गावस्कर की-सी छटा
मत बैठना पी टी ऊषा
इनाम में मिली उस मारुति कार पर
मन में भी इतराते हुए
बल्कि हवाई जहाज में जाओ
तो पैर भी रख लेना गद्दी पर
खाते हुए
मुँह से चपचप की आवाज होती है ?
कोई गम नहीं
वे जो मानते हैं बेआवाज जबड़े को
सभ्यता
दुनिया के
सबसे खतरनाक खाऊ लोग हैं।

हमारा समाज

यह कौन नहीं चाहेगा उसको मिले प्यार
यह कौन नहीं चाहेगा भोजन वस्त्र मिले
यह कौन न सोचेगा हो छत सर के ऊपर
बीमार पड़ें तो हो इलाज थोड़ा ढब से

बेटे-बेटी को मिले ठिकाना दुनिया में
कुछ इज्जत हो, कुछ मान बढ़े, फल-फूल जाएँ
गाड़ी में बैठें, जगह मिले, डर भी न लगे
यदि दफ्तर में भी जाएँ किसी तो न घबराएँ
अनजानों से घुल-मिल भी मन में न पछतायें।
कुछ चिंताएँ भी हों, हाँ कोई हरज नहीं
पर ऐसी भी नहीं कि मन उनमें ही गले घुने
हौसला दिलाने और बरजने आसपास
हों संगी-साथी, अपने प्यारे, खूब घने।

पापड़-चटनी, आंचा-पांचा, हल्ला-गुल्ला
दो चार जशन भी कभी, कभी कुछ धूम-धांय
जितना संभव हो देख सकें, इस धरती को
हो सके जहाँ तक, उतनी दुनिया घूम आएं

यह कौन नहीं चाहेगा?

पर हमने यह कैसा समाज रच डाला है
इसमें जो दमक रहा, शर्तिया काला है
वह कत्ल हो रहा, सरेआम चौराहे पर
निदोष और सज्जन, जो भोला-भाला है

किसने आखिर ऐसा समाज रच डाला है
जिसमें बस वाही दमकता है, जो काला है।

मोटर सफेद वह काली है
वे गाल गुलाबी काले हैं
चिंताकुल चेहरा- बुद्धिमान
पोथे कानूनी काले हैं
आटे की थैली काली है
हां सांस विषैली काली है
छत्ता है काली बर्रों का
यह भव्य इमारत काली है

कालेपन की ये संताने
हैं बिछा रही जिन काली इच्छाओं की बिसात
वे अपने कालेपन से हमको घेर रहीं
अपना काला जादू हैं हम पर फेर रहीं
बोलो तो, कुछ करना भी है
या काला शरबत पीते-पीते मरना है?

आलेख

हरियाणा में सभ्यता का उदय

प्रो. सूरजभान

हरियाणा प्रदेश भारतीय गणतंत्र के सत्रहवें राज्य के रूप में 1966 में पंजाब के विभाजन के फलस्वरूप अस्तित्व में आया। परन्तु एक साँस्कृतिक इकाई के रूप में इस प्रदेश का इतिहास एक हजार वर्ष पुराना है। 1857 में इस भू-भाग को अंग्रेजी प्रशासन ने पंजाब में शामिल किया था परन्तु इससे पहले मध्यकाल में यह दिल्ली सूबे का अंग रहा है। तेरहवीं-चौदहवीं सदी के अभिलेखों में हरियाणा प्रदेश को 'हरी-भरी स्वर्ग समान भूमि' माना गया है जिसकी राजधानी दिल्ली या 'ढिल्लिका' थी और तोमरों ने उसे बसाया था। ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी के अभिलेखों में चौहान राजा विग्रहराज चतुर्थ के अभिलेखों में इसे राजस्थानी बोली में 'हरितानक' या 'हरियालक' कहा गया है। सम्भवतः मरुभूमि से (चौहानों के राज्य के अन्तर्गत) एक अलग-थलग हरा-भरा भू-भाग ही इससे स्पष्ट होता है। इस प्रकार तोमर काल में हरियाणा राज्य प्रथम बार दृष्टिगोचर होता है। वैसे तो हरियाणा शब्द छठी शताब्दी में वल्लभी के राजा ध्रुवसेन के अभिलेख में एक गाँव के अर्थ में प्रयोग किया गया है। सम्भवतः यह बस्ती हरियाणा प्रदेश से गये लोगों की रही होगी और इस समय से हरियाणा एक साँस्कृतिक इकाई के रूप में विद्यमान रहा होगा चाहे सामन्तकाल के अभिलेखों में इस भू-भाग को कुरुदेश के नाम से जाना जाता था।

सम्भवतः हरियाणा शब्द 'हरियाला' या हरा-भरा प्रदेश के रूप में बागड़ निवासी चौहानों ने तो प्रयोग किया परन्तु इस नाम की व्युत्पत्ति आर्यों के प्रदेश के रूप में होना असम्भव नहीं है। संस्कृत साहित्य में यह भू-भाग आर्यावर्त का अंग माना गया है। अफगानिस्तान में 'अरिया' अथवा 'हेरात' प्रदेश आर्यों के नाम पर ही जाने जाते हैं। ईरान का भी आर्यों का भाषा रूप में नाम पड़ा। ऋग्वेद में सरस्वती और दृषद्वती नदियों का अनेक स्थानों पर वर्णन मिलता है जो इस भू-भाग की ही नदियाँ हैं। ऐसा लगता है कि एक विस्तृत क्षेत्र में जहाँ-जहाँ आर्य संस्कृति फली-फूली उस भू-भाग का नाम आर्य शब्द से जुड़ गया और हरियाणा सम्भवतः इसी प्रकार आर्यों का प्रदेश रूप में जाना गया। परन्तु इस भू-भाग को वैदिक तथा संस्कृत साहित्य में कुरुदेश व कुरु-जांगल नाम दिया गया है। सम्भवतः हरियाणा नाम स्थानीय परम्परा में प्रचलित रहा होगा जो सामन्तकाल में प्रादेशिक इकाइयों के विकास के परिणामस्वरूप प्रचलित हो गया होगा।

हरियाणा प्रदेश भौगोलिक दृष्टि से राजस्थान का ही अंग प्रतीत होता है। आज इस भू-भाग में कोई बारहमासी नदी नहीं है। घग्घर और उसकी सहायक नदियों में वर्षा ऋतु में ही प्रायः जल प्रवाह होता है। और ये सभी नदियाँ उत्तर में शिवालिक की पहाड़ियों से निकलती हैं। दक्षिण में अरावली की पहाड़ियों को छोड़कर सारा प्रदेश मैदानी है जो नदियों द्वारा लाई गई मिट्टियों से बना है। यमुना जो आज इसकी पूर्व सीमा से गुजरती हुई गंगा में मिल जाती है पहले कभी इस भू-भाग में भी बहती रही थी। ऋग्वेद में इस प्रदेश की कई महत्वपूर्ण नदियों का वर्णन मिलता है जिनमें सरस्वती, दृषद्वती एवं आपया प्रमुख हैं। आज सरस्वती एक मौसमी नदी है जो नारायणगढ़ (अंबाला जिला) तहसील में 'आदबद्री' के पास मैदान में उतरकर सोन नदी में मिल जाती है और ताजेवाला के पास यमुना नदी में जा गिरती है। परन्तु इसका प्राचीन रास्ता मुस्तफाबाद, कुरुक्षेत्र, पेहवा के पास से गुजरता था जहाँ आज एक साधारण नाला विद्यमान है जिसे लौकिक भाषा में 'सुरस्ती' कहते हैं। खन्नौरी के पास यह नाला घग्घर में जा मिलता है परन्तु प्राचीन काल में जाखल से आगे सरस्वती का एक अलग भाग दिखाई देता है जिसे आज रंगोई कहते हैं और यह बानावली, अहरबां के पास से गुजर कर सिरसा से आगे फिर घग्घर में जा मिलता है। घग्घर नदी राजस्थान में गंगानगर जिले में हनुमानगढ़-सूरतगढ़ के पास से गुजरती हुई बहावलपुर क्षेत्र में चली जाती है और इसका प्राचीन बहाव पूर्व सिंध से गुजरता हुआ कच्छ के रन से जा मिलता है। यही सरस्वती का पुराना बहाव था और इसी रास्ते से महाभारत काल में सौराष्ट्र से कुरुक्षेत्र आया-जाया जाता था। इस मार्ग पर हरियाणा से सिन्ध तक अनेक प्राचीन बस्तियों के अवशेष देखे जा सकते हैं।

दृषद्वती नदी सरस्वती के दक्षिण में थी और सम्भवतः इसी बहाव में चित्ताँग नहर खोदी गई। आज चित्तांग जगाधरी के क्षेत्र से निकलकर लाडवा असन्ध-जीन्द-हाँसी-हिसार के पास से गुजरती हुई राजस्थान में नोहर-भादरा से गुजर कर सूरतगढ़ के पास घग्घर में जा मिलती है। इस बहाव के साथ-साथ अनेक प्राचीन बस्तियों के अवशेष पाए गए हैं। आपया नदी कुरुक्षेत्र के दक्षिण से किरमिच, कौल, बालू-बाता होती हुई नरवाना के पास से गुजरती हुई सम्भवतः अग्रोहा होकर आदमपुर-मण्डी के पास दृषद्वती में

मिल जाती थी। इस बहाव के साथ-साथ भी अनेक प्राचीन बस्तियों के टीले खोदे गये हैं। आज ये सभी नदियाँ सूखी हुई हैं। साहित्य में सरस्वती के विनशन प्रदेश में लुप्त हो जाने का वर्णन मिलता है, और कहा गया है कि उस प्रदेश में शूद्र-आभीरों के बसने के कारण सरस्वती लुप्त हो गई। वास्तव में यह जनश्रुति एक भौगोलिक परिवर्तन को ही सूचित करती है। उत्तरी हरियाणा में कुछ भौगोलिक परिवर्तनों के कारण जमीन के ऊँचे उठ जाने के परिणामस्वरूप सरस्वती-दृषद्वती का बहाव पूर्व की ओर बदल गया और ये नदियाँ सोम से मिलकर यमुना में गिरने लगीं। इस पूर्व बहाव के साथ-साथ पाये गये प्राचीन स्थल महाभारत काल से पुराने नहीं जाते। अतः यह परिवर्तन उत्तरवैदिक काल में ही हुआ प्रतीत होता है। इसी कारण सम्भवतः इस जनश्रुति का जन्म हुआ कि सरस्वती लुप्त हो गई और प्रयाग में त्रिवेणी के रूप में गंगा-यमुना के साथ जा प्रकट हुई। सरस्वती का जल-प्रवाह यमुना में मिलकर प्रयाग में गंगा से जा मिला। यही तथ्य इस जनश्रुति का आधार प्रतीत होता है।

वैसे तो हरियाणा प्रदेश के उत्तरी भूभाग में शिवालिक की पहाड़ियों से व घग्घर के तट से और दिल्ली के निकट अरावली के पहाड़ से पाषाण कालीन उपकरण प्राप्त हुए हैं। ये उपकरण पूर्व-पाषाण काल के मध्यम चरण से सम्बन्धित हैं और लगभग पचास हजार वर्ष पुराने प्रतीत होते हैं जो उस काल के घुमक्कड़ मानव-कबीलों के एकमात्र अवशेष हैं। पिंजौर के निकट नवपाषाणकाल के पत्थर की कुल्हाडियाँ भी मिली हैं जो इस पहाड़ी प्रदेश में मानव की प्रथम आर्थिक एवं सामाजिक क्रान्ति की सूचक हैं। अब मानव ने पशुपालन एवं कृषि शुरू कर दी थी और घुमक्कड़ जीवन छोड़कर स्थायी आत्मनिर्भर बस्तियों में रहने लगा था। ये अवशेष कितने पुराने जाते हैं यह कहना कठिन है, सम्भवतः आज से चार-पाँच हजार वर्ष पुराने रहे होंगे।

हरियाणा में पहली स्थाई आबादी आज से साढ़े चार हजार वर्ष पहले शुरू हुई थी। हाल में की गई पुरातात्विक खोजों से पता चला है कि सरस्वती और दृषद्वती नदियों के साथ-साथ हिसार और जींद जिलों में कांस्य युग की प्रथम बस्तियाँ बसीं। ये लोग प्रायः छोटे-छोटे गाँवों में रहते थे और इनके केन्द्रीय स्थल किलेबन्द थे। शिशवाल, बानावली, राखीगढ़ी आदि स्थानों से इस संस्कृति अवशेष पाये गये हैं। ये लोग कच्ची ईंटों के मकान बनाकर रहते थे। कृषि और पशुपालन के अतिरिक्त तांबे, काँसे एवं सोने की धातु-कला से परिचित थे। काले और सफेद रंग से चित्रित चाक पर बने बर्तनों का उपयोग करते थे। पत्थर की पतली-पतली छुरियाँ, मनके, मिट्टी के हाथ से फेंकने के गोले प्रयोग में लाते थे। हल, बैलगाड़ी का प्रयोग प्रचलित था। गाय, भैंस, भेड़, बकरियाँ ही इनके प्रमुख पशु थे। किलेबन्द बस्तियाँ सम्भवतः प्रश ाासनिक केन्द्र थे और कस्बे के रूप में विद्यमान रहे होंगे। तांबा, सोना, पत्थर, शंख आदि का प्रयोग उनके दूसरे प्रदेशों से व्यापार के प्रतीक हैं। इस प्रकार यह पूर्व कांस्य युग का समाज अन्य भू-भागों के समाजों से आर्थिक एवं साँस्कृतिक रूप में जुड़ा हुआ था। इनसे मिलते-जुलते साँस्कृतिक अवशेष राजस्थान में कालीबंगा और अन्य स्थलों से तथा पंजाब में मलेरकोटला के निकट 'भूदन' नामक स्थलों से पाये गए हैं। पश्चिम की ओर इससे मिलती-जुलती संस्कृतियों के अवशेष प. पंजाब, सिन्ध, बलूचिस्तान तथा अफगानिस्तान में भी पाए गए हैं। यह समाज अपनी नवपाषाण कालीन आत्मनिर्भरता से वंचित होता जा रहा था। कई प्रकार के उद्योग धंधे प्रचलित हो चले थे जो श्रम विभाजन के विकास का प्रतीक है। व्यापार इन सभी पूर्व कांस्यकालीन संस्कृतियों को सम्बन्धित करता जा रहा था। निस्सन्देह इस युग में तकनीकी विकास के परिणामस्वरूप अतिरिक्त अन्न आदि उत्पन्न हो रहा था और उसका संचय प्रशासनिक बस्तियों में अथवा कस्बों में संग्रहीत हो रहा था। ऐसी अवस्था में ही नागरिक जीवन का उदय, समाज में वर्ग-भेद का जन्म और राजनीतिक सत्ता का प्रादुर्भाव होना स्वाभाविक था।

मध्य कांस्य-काल में जो, पच्चीस सौ ई.पू. से सत्रह सौ ई.पू. के बीच रखा जाता है, हरियाणा में भी अन्य पड़ोसी प्रदेशों की भाँति सभ्यता का उदय है। इस काल की अनेक बस्तियाँ हिसार, जींद, कुरुक्षेत्र, रोहतक तथा भिवानी जिलों में खोज निकाली गई हैं। इनमें मित्ताथल, राखीगढ़ी, बानावली और बालू इनके प्रमुख केंद्र थे। राखीगढ़ी, में आज भी एक विशाल टीले के अवशेष विद्यमान हैं। बानावली, बालू और सम्भवतः मित्ताथल और राखीगढ़ी में किले और बस्तियों का विन्यास सिन्धु-सभ्यता के नगर-विन्यास से मेल खाता है। इनके मकान कच्ची एवं पक्की ईंटों के बने थे। सड़कें एवं गलियाँ बस्ती के आर-पार विद्यमान थीं। घरों में चौक, स्नानघर, रसोई आदि की सुविधाएँ विद्यमान थीं। इस काल में दूर विदेशों तक के व्यापारिक सम्बन्ध, लिपि और मुद्रांकों का प्रयोग तथा निश्चित माप-तौल के साधन इस सभ्यता की विशेषता थे। इनके मजबूत लाल रंग के मिट्टी के बर्तन, अनेक मिट्टी के खिलौने चकमक की छुरियाँ, तांबे एवं काँसे के उपकरण और पत्थर के सिलबट्टे, मनके आदि उस सभ्यता की समृद्धि के सूचक हैं। ये बड़े केन्द्र निस्संदेह उनके नगर या उपनगर थे जिनके चारों ओर नदियों के साथ-साथ गाँव की बस्तियाँ बसी थीं। ग्रामीण संस्कृति वास्तव में पूर्व कांस्य संस्कृति का ही विकसित रूप प्रदर्शित करती है। परन्तु नागरिक जीवन एक उन्नत एवं विकसित सभ्यता का परिचय देता है। यह नागरिक सभ्यता इस क्षेत्र में नवागन्तुक ही दिखाई पड़ती है जो राजस्थान और पंजाब की ओर से आई। इस नागरिक सभ्यता को पुरातत्ववेत्ता सिन्धु सभ्यता अथवा हड़प्पा संस्कृति नाम से पुकारते हैं। सम्भवतः यह उनके राजनीतिक आधिपत्य और व्यापारिक सम्बन्धों के परिणाम थे।

सत्रह सौ. ई. पूर्व के आसपास सारे पश्चिम भारत में नगरों का ह्रास और अन्त हो रहा था। हरियाणा में भी इन परिस्थितियों का प्रभाव पड़ा और यहाँ क्षेत्रीय संस्कृति जिसमें पूर्वकांस्यकालीन संस्कृति तथा सिन्धु संस्कृति के तत्वों का विलय दिख पड़ता है, का विकास हुआ। इस संस्कृति को उत्तर हड़प्पा संस्कृति नाम दिया जाता है। इस काल में राखीगढ़ी जैसे बड़े नगर तो नहीं दीख पड़ते परन्तु मित्ताथल, अगोध आदि स्थलों पर नगर-विन्यास अथवा किले की विद्यमानता अवश य दीख पड़ती है। लिपि का प्रचलन अभी लुप्त नहीं हुआ था और सांस्कृतिक समृद्धि भी ह्रास के बावजूद नष्ट नहीं हो पाई थी परन्तु जहां केन्द्रीय स्थानों में कुछ ह्रास प्रतीत होता है, वहां ग्रामीण बस्तियां विकास की ओर जाती दिखाई पड़ती हैं। अब विशेषकर उत्तरी हरियाणा में प्रथम बार बस्तियां बसीं। ये बस्तियां सरस्वती, दृषद्वती आदि नदियों के साथ-साथ कहीं यमुना के साथ-साथ भी बस चलीं। तांबे और कांसे का प्रयोग काफी था। कांचली मिट्टी के आभूषण विशेष आकर्षण बनने लगे। पत्थर की छुरियों का प्रयोग समाप्त हो गया और ग्रामीण बस्तियां बड़ी और अधिक चिरस्थायी बनीं। ऐसा लगता है कि इस युग में उत्तरकांस्य समाज लगभग सारे हरियाणा में फैल गया था। दक्षिण हरियाणे में साबी नदी के साथ-साथ भी इनकी बस्तियां पाई गई हैं। इसी काल में यमुना नदी को पारकर पशि चमी यूपी में प्रथम आबादी फैली जिसके अवशेष मेरठ, सहारनपुर, बुलंदशहर एटा और इटावा आदि जिलों में पाये गये हैं। यह उत्तर कांस्य युग आज से तीन हजार वर्ष से कुछ पूर्व तक प्रचलित रहा है।

कांस्य-काल के अन्तिम चरण में एक हजार ई.पू. से कुछ पहले ही हरियाणा में एक नई संस्कृति का आगमन हुआ जिसे वैदिक संस्कृति अथवा आर्य संस्कृति नाम दिया जाता है। इस संस्कृति की अनेक बस्तियां उत्तरी हरियाणे और कुरुक्षेत्र में पाई गई हैं। इनका सरस्वती, दृषद्वती तथा यमुना व साबी के साथ-साथ प्रसार इस संस्कृति के कालान्तर में हुए विकास को सूचित करता है।

पुरातात्विक दृष्टि से इस संस्कृति को तीन उपकालों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम चरण में तांबे व कांसे का प्रयोग ही प्रचलित था। यही ऋग्वेदकालीन अवस्था थी। परन्तु उत्तर वैदिक काल में लोहे का प्रयोग प्रथम बार शुरू हुआ और और तृतीय चरण में नगरों का उत्थान होने लगा। पुरातात्विक और साहित्यिक स्रोतों के आधार पर इस संस्कृति की सही जानकारी हो सकती है। ऋग्वेद आर्यों का प्राचीनतम ग्रन्थ है और उसके पूर्ववत भागों के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि आर्य लोग कई जन अथवा कबीलों में विभक्त थे जिनका स्थान कालान्तर में गणों ने ले लिया था। ऋग्वेद का भौगोलिक ज्ञान प्रायः सप्तसिन्धु अथवा काबुल से लेकर सरस्वती तक सीमित था परन्तु गंगा और यमुना भी उनकी जानकारी के अंग प्रतीत होते हैं। इस प्रदेश में अनेक जन विद्यमान थे जिनमें हरियाणा के प्रधान जन भरत, पुरु आदि का उल्लेख किया गया है। इन जनों को सरस्वती, दृषद्वती तथा आपया नदियों के किनारे बसे हुए बताया गया है। इनके पूर्व में यमुना पर भेद, अज, शगिरु आदि जनों का उल्लेख मिलता है और इनके पश्चिम में अनु, यदु, दुह्यु और तुखसु आदि जनों का उल्लेख है। ऋग्वेद में दिवोदास के पुत्र सुदास नामक भरत राजा के रावी पर संगाप्ति दस राजाओं को हराने और यमुना पर भेद के नेतृत्व में कई जनों को हराने का उल्लेख मिलता है। निस्सन्देह यह राजनीतिक परिस्थिति कबीलाई समाज का ध्रुवीकरण प्रदर्शित करती है। कबीले का समाज 'विश' कहलाता था और गांवों में बसा हुआ था। कबीले के नेता को 'गणपति' अथवा 'ज्येष्ठ' कहते थे। राजा जन द्वारा निर्वाचित होता था। प्रत्येक कबीलाई राज्य की दो राजनीतिक संस्थाएं होती थीं, जिन्हें सभा और समिति कहा जाता था सम्भवत सभा समूचे कबीले अथवा गांव की संस्था थी और समिति सम्मानित व्यक्तियों की संस्था। राजा पर 'सभा' और 'समिति' का सतत अंकुश होता था, जो उसे अपदस्थ भी कर सकती थी। राजा को उसकी वीरता व योग्यता के गुणों के आधार पर ही चुना जाता था। उसकी सहायता के लिए 'रत्न' हुआ करते थे और धार्मिक क्रियाकलापों को सुचारु रूप से चलाने के लिए पुरोहित भी होता था।

समाज में श्रम-विभाजन साधारण रूप से विद्यमान था और उसमें प्रजा को स्वतन्त्रता थी। चारों ऋग्वेद के पूर्ववर्ती भागों में तीन वर्णों का ही उल्लेख मिलता है जिनमें ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य शामिल थे परन्तु कालान्तर में चौथा वर्ण शूद्र भी उत्पन्न हो गया। वर्ण व्यवस्था वास्तव में जन्म पर आधारित सामाजिक वर्गीकरण था और यह सामाजिक सम्बन्धों में असमानता का द्योतक था। वर्ण की उत्पत्ति सम्भवत श्रम विभाजन से ही हुई थी। परन्तु सम्पत्ति और सत्ता के आधार पर कालान्तर में यह अपने विकसित रूप को प्राप्त हुआ परन्तु अभी जाति प्रथा ने जन्म नहीं लिया था। ऋग्वेद में सामूहिक परिवार विद्यमान थे और ये पितृप्रधान थे। समाज में स्त्रियों की स्थिति आदरणीय थी चाहे ऋग्वेद में प्रायः पुत्र की कामना और प्रार्थना दिख पड़ती है परन्तु स्त्रियों को काफी

स्वतन्त्रता थी। न इस युग में पर्दा था और न सती प्रथा। उन्हें उत्सवों एवं पर्वों में शामिल होने की स्वतन्त्रता थी।

ऋग्वेद में कई विदुषी स्त्रियों का उल्लेख मिलता है। घोशा, अपाला एवं विशधरा आदि शामिल हैं जो दाश र्निक थीं। विवाह से सम्बन्धित मंत्रों में पति और पत्नी द्वारा ली गई शपथ उनके सामाजिक जीवन में आदर, सहयोग एवं समानता का परिचय देते हैं। आध्यात्मिक जीवन में भी स्त्रियां पुरुष की अर्धांगिनी समझी जाती थीं और प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान में सहयोग प्राप्त करना आवश्यक था। अतिथि सत्कार एक महत्वपूर्ण जीवन का मूल्य था और अतिथि सेवा में सबसे अधिक मूल्यवान एवं प्रिय पशु के वध से ही नहीं हिचकिचाते थे। सत्य तथा नैतिकता, व्रत-पालन को महत्वपूर्ण माना जाता था। समाज में स्वतन्त्रता, समानता और वीरता के मूल्यों को प्रधानता दी जाती थी। यही कबीलाई मूल्य थे जो ऋग्वैदिक समाज को एक आदर्श समाज बनाते हैं। समाज में जीवन का चाव था। वे सौ वर्ष तक जीने की कामना करते थे। स्वस्थ शरीर, वीरपुत्र और पशुपालन की वृद्धि उनके जीवन की प्रमुख अभिलाषा थी। वहां भौतिक जीवन को स्वीकार करना न कि उसका तिरस्कार अैर उसका परित्याग उनके उद्देश्य थे। सांसारिक जीवन उनके लिए सत्य था और उससे भागने की उन्हें कोई इच्छा न थी। न स्वर्ग कल्पना और न मोक्ष की धारणा ऋग्वेद के समाज को उसके यथार्थवादी जीवन से भटका पाई थी। ऋग्वेद समाज की दृष्टि में इस संसार के रचयिता और पालनकर्ता अनेक देवता हैं। प्राकृतिक शक्तियों को ही देवता मानते थे और उन्हें सर्वशक्तिमान, ज्ञानवान और सर्वव्यापी मानते थे। उनके सहयोग और तुष्टि के लिए यज्ञ करना और मंत्रों द्वारा स्तुति करना इनके प्रमुख साधन थे। कर्म और पुनर्जन्म के भावादि दार्शनिक सिद्धान्त अभी जन्म नहीं ले पाये थे। पुरोहित अभी धर्म के ठेकेदार, देवलोक और पृथ्वीलोक के बिचौलिया नहीं बन पाये थे। सरल स्वभाव से देवताओं की स्तुति और साधारण द्रव्यों से यज्ञ का अनुष्ठान साधारण समाज के जीवन का अंग था, परन्तु राजाओं में बड़े-बड़े यज्ञों का अनुष्ठान और पुरोहित का सहयोग प्रचलित था। अश्वमेधादि यज्ञ बड़े ठाठ-बाट से किए जाते थे।

ऋग्वेद की आर्थिक व्यवस्था पशुपालन एवं कृषि पर आधारित थी। गाय, घोड़ा, भेड़-बकरी इनके प्रमुख पशु थे जिनकी सामूहिक व्यवस्था के आधार पर ही गोत्रों का जन्म हुआ। जौ इनका प्रधान अन्न था। भोजन में मांस का प्रयोग प्रचलित था। हल और बैलगाड़ी कृषि के साधन थे। घोड़ों वाले रथ राजाओं आदि के वाहन के रूप में प्रयोग होते थे। समाज में कुम्भकार, तक्षक, धातुकर्म, चर्मकर्म आदि अनेक धन्धे आत्मनिर्भर ही था। व्यापार-विनिमय द्वारा होता था, और प्रायः पशुओं, धातुओं आदि तक सीमित था। ऋग्वेद के काल में लोहे का ज्ञान प्रतीत नहीं होता। अयस् शब्द सम्भवतः तांबे का ही परिचायक है।

पुरातात्विक एवं साहित्यिक साक्ष्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि ऋग्वेद का समाज वस्तुतः ग्रामीण समाज था जिसका संगठन कबीलाई था। इस समाज में साधारण श्रम-विभाजन था और उत्पादन की तकनीकों तथा श्रम विभाजन के कम विकसित होने के नाते यह समाज एक आत्मनिर्भर ग्रामीण समाज सा था, जिसमें निश्चित स्थाई जीवन, अतिरिक्त उत्पादन नहीं हो पाया था। इसी कारण इनका सामाजिक और राजनीतिक संगठन कबीलाई था। क्षेत्रीय राज्य अभी उत्पन्न नहीं हुए थे। राज्य का स्वरूप भी गणराज्य के रूप में प्रचलित था। वंशानुगत राजतंत्र का विकास नहीं हुआ था और समाज में वर्ण-भेद और शूद्र-वर्ण का विधान भी प्रशस्त नहीं था। चाहे आधुनिक दृष्टि से यह एक बहुत ही साधारण विकसित समाज था परन्तु इसके जीवन के उदात्त मूल्य आज भी अनुकरणीय हैं। इनका भाईचारा, वीरता, सहयोग, सहानुभूति, जीवन के प्रति सजीव दृष्टिकोण, उत्साह और ज्ञान-पिपासा, निस्सन्देह किसी भी समाज के गौरव का विषय हैं।

प्रायः इतिहासकारों ने ऋग्वैदिक समाज को एक आक्रमणकारी विदेशी जाति के रूप में दिखाया है। ये विद्वान आर्यों को सिन्धु-संस्कृति के विध्वंसक के रूप में मानते हैं परन्तु पुरातत्ववेत्ताओं ने प्रमुखतया सिन्धु संस्कृति के विनाश को प्राकृतिक कारणों से घटित हुआ माना है। हाल ही में कुरुक्षेत्र जिले में स्थित भगवानपुरा खुदाई से प्राप्त पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर यह अनुमान लगाया जाता है कि आर्य संस्कृति सिन्धु संस्कृति के अन्तिम चरण में उसके सम्पर्क में आई और आपस में घुल-मिल गई।

हरियाणा में किए पुरातात्विक सर्वेक्षण से पता चलता है कि आर्यों की बस्तियाँ प्रायः उस क्षेत्र में बसीं जहाँ उत्तर सिन्धु संस्कृति की बस्तियाँ विद्यमान नहीं थीं। कुछ स्थानों पर ही आर्य उत्तर सिन्धु संस्कृति की बस्तियों के ऊपर बसे। ऐसी ही स्थिति पंजाब में भी दिखाई देती है।

इससे प्रतीत होता है कि आर्य लोग आक्रमणकारी के रूप में नहीं आये अपितु वे जीवन के साधन की खोज में भटकते हुए इस क्षेत्र में भी आ पहुँचे। सहअस्तित्व की भावना से ही उन्होंने जंगल साफ करके अपनी बस्तियाँ बसाईं, परन्तु समाज के विकास की प्रक्रिया में राज्य की उत्पत्ति और अभिजात वर्ग की धन-सम्पत्ति और सत्ता की लोलुपता के परिणाम स्वरूप इन दोनों समाजों का टकराव होना स्वाभाविक ही था परन्तु यह टकराव इन दो समाजों तक ही सीमित नहीं था। इनमें से प्रत्येक समाज में भी यह संघर्ष देखने को मिलता है। दशराज्य युद्ध में आर्य कबीलों का आपस में लडने का उल्लेख इस विचार को स्पष्ट कर देता है। सॉंस्कृतिक एवं जातीय द्वेष इसी लालसा का परिणाम था जो ऋग्वेद में कहीं-कहीं दिखाई पड़ता है।

-- लेखक प्रख्यात पुरातत्वविद थे। कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में प्रोफेसर रहे।

●●●

जकड़न

अशोक भाटिया

-1-

अगले दिन उन्होंने शापिंग मॉल का रुख किया। वहां वे हबड़-तबड में सामान देखते रहे। इस बार वे काफी पैसे लेकर गए थे। पत्नी की निगाहें एक क्रीम कार्नर पर पड़ीं। देशी-विदेशी दुनिया भर की क्रीमें वहां मौजूद थीं - वे दोनों थोड़ी देर मन्त्र-मुग्ध ा होकर देखते रहे - तभी एक युवती आ गई।

- आपको किस तरह की क्रीम चाहिए?

- अभी डिसाइड नहीं किया, पहले देख लें।

युवती ने एक-एक क्रीम का पैक उठाकर दिखाना शुरू किया - यह चेहरे को गोरा बनाने की है, यह झुरियाँ मिटाने की है, यह कील-मुहांसों को हटाने की है, यह वाली क्रीम आपको ध ूप से बचाएगी बताइये - कहकर युवती उनकी तरफ देखकर रुकी।

- अभी देखते हैं।

- यह सर्दियों से खुश्की से बचाने वाली क्रीम भी है। इनके अलावा आल-पर्पस क्रीम भी है, इसकी खुशबू देखिए।' कहकर युवती ने उसके साथ की एक खुली डिबिया का ढक्कन खोला और उनके मुंह के पास कर दिया।

दबाव बढ़ता देखकर पत्नी ने कह दिया - यह एक दे दीजिये। 'युवती ने उत्साह में फिर कहना शुरू किया - हमारे पास हर तरह की क्रीम है। यह देखिए फटी बिवाइयां हटाने की है, और यह प्रेगनेंसी के बाद पेट की झुरियों के निशान हटाने की है..... पति ने 'न' का महीन इशारा कर दिया था

जब वे घर लौटे तो उनके साथ बिस्कुटों की तीन-चार किस्में, कपों के दो सेट, दर्जन - भर सुंदर हैंगर, नई किस्म की सुंदर महंगी दो झाड़ू वगैरा थे।

वे थक चुके थे। लेकिन पत्नी चाय बनाकर ले आई और कहने लगी- 'शॉपिंग अच्छी रही न...लेकिन अभी 'हेयर केयर' वाला कोना तो देख ही नहीं पाए, वह कल देखेंगे। 'कहकर वह हंसी'

-2-

उसका बेटा बड़ा हो चला था। एक दिन कहने लगा - पापा, अब मैं ये खटारा स्कूटर नहीं चला सकता। सब लड़के मोटर साइकिल पर पढ़ने आते हैं। वे मुझे चिढ़ाते हैं। मुझे तब बड़ी शर्म महसूस होती है।

- बेटे, नई मोटर साइकिल ले सकने की हमारी हैसियत नहीं है।

- पापा, इतनी आसान किश्तों पर पूरा का पूरा लोन मिल जाता है।

मेरा दोस्त राघव एक घंटे मे ही फाइनेंस कराके मोटर साइकिल ले आया था। साथ में रिस्ट वाच भी मिलती है।

- पर किश्तें तो हमें ही चुकानी होंगी?

- पापा, बड़ी आसान किश्तों पर लोन मिलता है। मैं अब मोटर साइकिल नहीं चलाऊंगा तो फिर कब चलाऊंगा?

पापा को चुप देखकर वह उमंग से भर गया - बाजार जाकर नए ब्रांड की मोटर साइकिल का बड़ा-सा पोस्टर ले आया और उसे गांधी की तस्वीर के ऊपर ही चिपका दिया।

-3-

'सुनो, हमारी गली के चावला औरों ने एक प्लाट बुक कराया है। डेढ़ सौ गज का है।'पति ने कहा।

- पर हम कहां से लेंगे प्लाट? इस मकान का किराया ही मुश्किल से निकाल पा रहे हैं।

- ओ हो, भई 'दिल मांगे मोर' प्रापर्टी डीलर पूरा लोन कराके देता है। हल्का-सा खर्चा लेता है।

- लोन की किश्तें कहां से भरेंगे? पल्ले नहीं धेला, करेंदी मेला मेला।

- 'आसान किश्तों पर करा लेंगे। सब हो जाता है।' पति बजिद था।

- पर भरनी तो हमें ही पड़ेंगी। और फिर किश्तें ही नहीं, उनका ब्याज भी तो भरना होगा, कहां से भरेंगे?

- 'अगर दिक्कत हुई तो ब्याज भरने के लिए और लोन ले लेंगे।' पति ने कहा।

पत्नी को लगा जैसे कि कोई हाथ उन्हें अपनी जकड़न में लिए जा रहा है।

सम्पर्कः 09416152100

●●●

परिचर्चा

औपनिवेशक दासता का ज्ञान-काण्ड

कृष्ण कुमार

भारत लगभग दो सौ साल तक अग्रेंजी साम्राज्य के अधीन रहा। साम्राज्यवाद ने भारत के प्राकृतिक-भौतिक संसाधनों का केवल दोहन ही नहीं किया, बल्कि सांस्कृतिक वर्चस्व कायम करके दिमागों और आत्मा को गुलाम बनाने की कोशिश की। ज्ञान-विज्ञान व विचारों की प्रकृति वैश्विक होती है, लेकिन साम्राज्यवाद ने शिक्षा, पाठ्यचर्या के माध्यम से उपनिवेशों के नागरिकों में हीनता पैदा करने के लिए ज्ञान को हथियार की तरह प्रयोग किया। अपनी उपलब्धियों को श्रेष्ठ-अनुकरणीय, आधुनिक-प्रगतिशील बताया तो उपनिवेशों की उपलब्धियों को हेय व पिछड़ा। इसकी प्रतिक्रिया भी हुई उससे राष्ट्रवादी विचारधारा के साथ पुनरूत्थानवादी धारा भी पनपी जो उसी तरह से अपनी भाषा व संस्कृति को सर्वश्रेष्ठ व अनुकरणीय मानती थी। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान भारतीय बौद्धिक जगत इस गहरा संघर्ष, बेचैनी व जद्दोजहद है। 1947 में भारत राजनीतिक तौर पर तो आजाद हो गया, लेकिन साम्राज्यवाद ज्ञान की प्रणालियों-पद्धतियों में इतने गहरे तक घुसा है कि कई बार उसका अहसास भी नहीं होता। साम्राज्यवाद हमारे ज्ञान, शिक्षा, संस्कृति बोध किस प्रभावित कर रहा है इस परिचर्चा के लिए कृष्ण कुमार का आलेख दे रहे हैं। इस आलेख पर सहमति-असहमति पर टिप्पणी-प्रतिक्रिया अथवा इस विषय के दूसरे पहलुओं पर आलेख भेजकर इस परिचर्चा में शामिल हों। - सम्पादक

भारत की औपनिवेशिक दासता का जो सिलसिला प्लासी की लड़ाई से शुरू हुआ, वह लगातार जारी है। औपनिवेशिक दासता ने हमारे व्यवहार और चिंतन को इस कदर बदल दिया है कि रेहड़ी चलाने वाले व्यक्ति से लेकर हवाई जहाज में यात्रा करने वाला हर भारतीय अमेरिका पहुंचने की जल्दी में है। वह भारत में जीता है और सपने अमेरिका के देखता है। उसका व्यक्तित्व पूर्व और पश्चिम में बंट गया है तथा पहचान, अस्तित्व और अस्मिता खो गई है।

औपनिवेशिक दासता का प्रभाव काल विशेष तक ही नहीं रहता, बल्कि उसकी वैचारिकी युगों-युगों तक चलती रहती हैं। हम मासूम और मायूस बनकर अपने ही विरुद्ध अपने चेतना का निर्माण करते रहते हैं। पिछले तीन चार सौ सालों की घेराबंदी ने हमारे अतीत और इतिहास को ही नष्ट नहीं किया, बल्कि हमारी कल्पना के पैर कतर कर हमारी सृजनात्मकता में ठहराव पैदा कर दिया है। 'बदनसीबी से हमारी भाषा, स्मृति और कल्पना - चार सौ सालों से रेहन पर औपनिवेशक वर्चस्व के हवाले है। इसलिए बेतक्कलुफी से विनाश को विकास, पश्चिमीकरण को आधुनिकता और स्वयंसेवी संगठनों को आंदोलन कहा जाता है। यह ईस्ट इंडिया कम्पनी से मोसेंटो वालमार्ट तक की अनवरत औपनिवेशक यात्रा की वैचारिक-सांस्कृतिक परिणति है' ।(रामाज्ञा शशिधर)

औपनिवेशिक विचार भाषा से लेकर हमारे चिंतन और ज्ञान शिक्षण की प्रक्रियाओं तक फैला हुआ है। पिछले चार सौ सालों से वैश्विक ज्ञान में हमारी भागीदारी न के बराबर है। हमारा चिंतन और व्यवहार अलग-अलग खानों में बंट गया है। परिवार-समाज-समुदाय और शिक्षा के बीच संबंध नहीं रहा है। जीवन-व्यवहार की भाषा और शिक्षा की भाषा एक-दूसरे के विरुद्ध खड़ी हैं। जीवन-परिवेश से कट कर अंक बटोरु शिक्षा से तोता रटंत पैदा होते हैं, चिंतक और आविष्कारक नहीं। इस प्रकार हम ज्ञान के नए सृजन की बजाए पश्चिम की धुंधली फोटोस्टेट कापी बनते जा रहे हैं।

थोपी गई विदेशी भाषा बच्चों में ऐसी मानसिकता का निर्माण कर रही है जो अपने परिवेश, समाज, परम्परा के प्रति हीनता बोध को जन्म दे रही है। और पश्चिम की हर चीज के प्रति मुग्ध दृष्टि से देखता है। वह सामुदायिकता और देश प्रेम जैसी भावनाओं पर भारी पड़ती है। उसका आत्मविश्वास टूटता है और व्यक्तित्व में हीनताबोध गहराने लगता है और फिर प्रयोग और अनुसंधान करने वाले हर नया कार्य पर उसके पैर डगमगाने लगते हैं। यदि वह कभी नया ज्ञान और कौशल रच भी लें, तो औपनिवेशिक पण्डितों से मान्यता प्राप्त करने की जुगत लड़ाता रहता है। उनके रहम और शासकीय कृपा को अपने ज्ञान की प्रमाणिकता मानता है।

हमारा वर्तमान (हीनताबोध) अतीत के चिंतन और क्रियाकलापों का परिणाम है। हमें उन कड़ियों की छानबीन करनी पड़ेगी, जिन्होंने हमारे अतीत की तारतम्यता और गति को छिन्न-भिन्न करके, हमारी सोच और कल्पना को कुंद कर दिया। साम्राज्यवादी विद्वानों ने भारत को 'सपेरों-असभ्यों-लुटेरों' का देश कह कर मजाक उड़ाया गया। भारतीय मेधा को दरकिनार करके मैकाले का वह कथन - 'किसी भी अच्छे यूरोपीय पुस्तकालय की एक अलमारी ही पूरे भारत और अरब की सम्पूर्ण ज्ञान सम्पदा से अधिक है।' केवल कूटनीति पर नहीं था, बल्कि हमारे दिलो-दिमाग पर साधा

गया ऐसा अचूक निशाना था, जिसके घाव आज तक भरे नहीं हैं। जवाहर लाल नेहरू की यह टिप्पणी सही कहती है कि '' मैं पूर्वी और पश्चिमी दुनिया का एक विचित्र मिश्रण बन गया हूं, हर जगह बेगानापन महसूस होता है। कहीं भी अपनेपन का अहसास नहीं होता। जीवन के सम्बंध में मेरे विचार और दृष्टिकोण उस चीज से कम मेल खाते हैं, जिसे पूर्वी कहा जाता है। मैं न तो अतीत से छुटकारा पा सकता हूं और न हाल ही से जो कुछ प्राप्त किया है। उससे पश्चिमी दुनिया में मैं अजनबी और पराया हूं। मैं उसका हिस्सा नहीं हो सकता। लेकिन खुद अपने देश में मुझे कभी-कभी निर्वासित व्यक्ति जैसा महसूस करता हूं।'' (एन ऑटोब्योग्राफी, लंदन, 1947, पृ. 596.)

बार-बार दोहराया गया कि हर मायने में अंग्रेज भारतीयों से श्रेष्ठ होते हैं। उनके रंग, अक्ल और नस्ल का कोई जोड़ भारतीयों के पास नहीं है। किपलिंग की उद्घोषणा - 'पश्चिम पश्चिम है, पूर्व पूर्व है' के निहितार्थ पूर्व पर पश्चिम के श्रेष्ठता बोध ा से है। गोरे हमें लूटने नहीं, सभ्य बनाने आए हैं।

इस श्रेष्ठताबोध ने हमारे दिमाग का ऐसा अनुकूलन किया है कि आज भी बहुत से लोग अपने किस्सों-कहानियों-वार्ताओं में उनकी न्यायप्रियता और बहादुरी की मिशाल देते हैं और समझदार लोग (चंद्रबाबू नायडू, डा. मनमोहन सिंह) दोहराते हैं कि भारत का निर्माण अंग्रेजों ने किया। भुला दिया जाता है कि पश्चिम की वैज्ञानिक-औद्योगिक क्रांति भारतीय और अरबी ज्ञान की ऋणी है।

साम्राज्यवाद अपनी सत्ता को बरकरार रखने के लिए शासित जनता के बारे जानकारी एकत्रित करके उनमें 'छद्म चेतना' का निर्माण करता है, ताकि गुलाम अपने जीर्णोद्धार के लिए मालिक की कृपा पर निर्भर रहे। पहले वह उद्धार की योजना के तहत कार्य करता है। वह प्राचीन संस्कृति के उद्धार के बहाने उसके रचनात्मक एवं प्रेरक तत्वों को नष्ट करता है तथा अपने ज्ञान-विज्ञान और नवीन चेतना से शासित जनता का वैचारिक नेतृत्व भी करता है, जो उनके विद्रोह एवं गुस्से को काबू में रखता है। यह मानसिक उपनिवेशीकरण इस कदर सांस्कृतिक प्रभुत्व में तबदील हो जाता है कि उपनिवेश के बुद्धिजीवी भी अपने देश को पश्चिम की दृष्टि और विचार से समझने की कोशिश करते है। और जब यह प्रक्रिया सामान्य व्यवहार का हिस्सा बनकर गुडसेंस में तबदील हो जाती है तो हम साम्राज्यवाद के पैंतरों को जानने की समझ खो बैठते हैं। साम्राज्यवाद की असली विजय तब होती है जब गुलाम देश की जनता उसकी ही बोल बाणी बोलकर गर्व का अनुभव करती है। उसके जैसी बनने और संवरने की कोशिश करती है।

स्वतंत्रता आंदोलन हमारे लिए बहुत बड़ी प्रयोगशाला है। सफलताओं, असफलताओं का विराट पुंज। गुलाम देशों में विदेशी शासन से मुक्ति के प्रतिक्रिया-स्वरूप राष्ट्रवाद का जन्म होता है। वह अतीत से ऊर्जा ग्रहण करके वर्तमान संदर्भों में उसकी पुनर्व्याख्या प्रस्तुत करता है साथ ही महान अतीत एवं मिथकों के सरलीकरण से प्रतिक्रियावादी चेतना का निर्माण भी। वह सांस्कृतिक औजारों से साम्राज्यवाद से लोहा लेता है।

'भाषा के क्षेत्र में हिन्दी की स्थिति भारत के राष्ट्रपति जैसी है और अंग्रेजी को प्रधानमंत्री की हैसियत प्राप्त है। हिन्दी एक सम्मानजनक पद पर तो है, पर व्यवहार में दूसरे दर्जे पर है और सारे अधिकार अंग्रेजी के पास हैं। हिन्दी का प्रश्न अपनी भाषा के प्रति मोह, बल्कि एक नई किस्म के उपनिवेशवादी सोच के विरुद्ध लड़ने का है।' प्रो. नामवर सिंह की यह टिप्पणी केवल हिन्दी व भारतीय भाषाओं तक सीमित नहीं, बल्कि पूरी भारतीय मेधा पर है।

साम्राज्यवाद का वास्तविक उद्देश्य जनता के मानसिक जगत पर प्रभुत्व जमाकर, उसके उत्पादन पर नियंत्रण करना है। भाषा और संस्कृति के बिना मानसिक जगत पर नियंत्रण नहीं पाया जा सकता, इसलिए उपनिवेश की संस्कृति को मिटाकर और भाषा को टुकड़ों में तोड़ कर यह प्रक्रिया सम्पन्न की जाती है। आजकल हमारी भाषाओं में क्रियोलीकरण की प्रवृति बढ़ रही है तथा हिन्दी सहित अन्य भारतीय भाषाओं में अंग्रेजी शब्दों की भरमार है। ऐसा लगता है कि हिन्दी और लोक भाषाओं, राज्य भाषाओं से कट गया है, वे एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करती नजर आती है। हमें इंग्लिश के शब्दों से कोई आपत्ति नहीं, लेकिन यदि वाक्यों में लोकभाषाओं-राज्य भाषाओं के शब्दों की बजाए इंग्लिश के शब्दों का जोर रहेगा तो वह कबीर की बहता नीर की सधुक्कड़ी नहीं, बाजार के माल से बनी इंग्लिश बनेगी। जिसमें जीवन का सौंदर्य एवं रस नहीं, बल्कि कृत्रिमता होगी। साथ ही जिस प्रकार अफ्रीका की भाषाओं के व्याकरण को तोड़ कर, उनकी लिपि को नष्ट किया गया। समय के साथ वह खतरा भी हमारी भाषाओं पर मंडरा सकता है।
नए-नए मुखोटे लगाकर हमें ठगता रहता है।

भाषा, संस्कृति व सोच में माध्यम से साम्राज्यवाद हमारे जीवन के हर पक्ष पर छा रहा है। शासक वर्ग तो ज्ञान के साम्राज्यवादी स्रोतों पर बलि बलि जाऊं वाली मुद्रा में है ही, लेकिन आमजन में भी इसका प्रभाव बढ़ रहा है। चिंता का विषय यही है

सम्पर्क: 9416550290

फरिश्ते से बेहतर है इन्सान बनना
मगर इसमें पड़ती है मेहनत कुछ ज्यादा

हाली

सुरेखा की कविताएं

मुस्कराहट

वो जो मुस्कराती है
सर्फ और साबुन के पैकेट पर
कपड़ों, बल्ब, ट्यूबलाईट और
बीमा के विज्ञापनों में
वो जो मुस्कुराती है
हमारे कलेंडर और
मोबाईल फोन के होर्डिंग्स में
काश मुझे मिल जाए
सड़क या किसी गली के मुहाने पर
अपनी जीवन्त मुस्कान के साथ
काम करते हुए।

बागी लड़कियां

मैं जानती हूं
बहुत सारी बागी लड़कियों की पहचान
यहां तक कि उनके
नाम व पते भी
परन्तु आपको नहीं बताउंगी,
वरना हो सकता है
आप उन्हें ढूंढ निकाले
अपने घर के उस अन्दर वाले कमरे में
जिसकी कोई खिड़की बाहर नहीं खुलती।

लड़ाईयां

जो लड़ाइयों में शहीद हो गई
उन औरतों के नाम
शहीदों की सूची में कौन लिखेगा?
समाज के ठेकेदारों ने
इज्जत के नाम पर,
समाज की रक्षा के नाम पर,
समाज को चलाने के लिए
उन्हीं के द्वारा बनाए गए
नियम-कायदे-कानूनों
की रक्षा के नाम पर
जारी किए औरतों के खिलाफ फतवे,
लेकिन औरतें ने
स्वयं को बचाए रखने की
इस लड़ाई को लड़ा
सपनों को जिन्दा रखने के नाम पर,
प्रेम करने और
मानवीय गरिमा की रक्षा के नाम पर
इस लड़ाई का इतिहास लिखने
इस लड़ाई में हिस्सेदारी के लिए
तुम कब आओगी

एक अधूरी इच्छा

मैं खेलूं अपने गांव के गोरे में,
घर से कोई बुलावा ना आए,
रात हो तो छुप जाऊं
रेहडू के पहिए के नीचे,
और सो जाऊं चैन से,
कोई मुझे ना कहे काम के लिए,
मुझे याद ना आए
दादा जी को खाना खिलाना,
अपनी छोटी सी टोकनी से
ढेर सारा पानी ढोना,
मुझे याद ना आए
गोबर के उपले बनाना,
मैं नहाऊं अपने गांव के पोखर में,
मैं कुदूं पूरा दिन नहर में,
मैं खाऊं बरगद के बरबण्टे,
कोई मुझे ना पहचाने
मेरा कोई बुलावा ना आए।

महिलाओं के काम

बचपन में गुड्डे गुडिया खेल में ही
सीख लिया था हमने
रसोई का रसायन शास्त्र
और
कपड़े पर फलकारी का गणित
इसमें हम कभी फेल नहीं हुई
ऐसा नहीं था कि
हम सीख सकते थे केवल
रसोई का रसायन शास्त्र और
फलकारी का गणित
बल्कि जालसाजी के साथ
हमारा परिचय करवाया गया
रसायन शास्त्र और गणित से
यह कहते हुए कि यही कला
हमारे लिए सार्थक है
एक दिन हमारा परिचय
हमारे गांव की टेड़ी-मेड़ी गलियों
से दूर
शहर की चौड़ी सड़कों के भूगोल
के साथ हुआ
फिर उसके समाजशास्त्र और
उसके अर्थशास्त्र से हुआ
ऐसा नहीं था कि हम इनमें
ठीक-ठीक फेल या पास थी
परन्तु निपुण नहीं थी
क्योंकि हमने नहीं पढ़ी थी
अब तक इसकी पोथियां
परन्तु एक परिचय में हमारे लिए
फतवा जारी किया गया कि
भूगोल, राजनीति शास्त्र और अर्थशास्त्र
हमारे बूते से बाहर हैं।

परत दर परत

परत दर परत हैं हमारे ऊपर
मैं नहीं जानती कितनी परत हैं मुझ पर
कब किस खोल से बोलती हूं
कब उतार फेंकती हूं अपना कौन सा
खोल,
कब कितना नंगा नजर आती हूं,

कब कितनी घृणा पैदा करती हूं,
कितनी घृणा को छुपाकर
कब दिखाती हूं कितना प्यार,
सब परत दर परत
उतरता चढ़ता रहता है?
इसलिए अब कुछ याद नहीं आता
अब मैं
न ही अपने कहे पर यकीन करती हूं,
और न ही आपके कहे पर।

समय

कुछ लोग चर्बी के नीचे दबे हैं
बाकी पुर्जे की तरह घिसते जा रहें हैं
दोनों कहते हैं
समय मुश्किल बीतता है
एक चिलचिलाती धूप में
खून की तरह टपकते
पसीने से मापता है समय
और दूसरा
खाते रहने और
खाकर सो जाने की ऊब से।

महिलाओं की नजर में राजनीति -1

तानाशाहों के प्रति
हाशिए पर गए
लोगों का विरोध
उतना ही स्वाभाविक है
जितना फूल का खिलना
तितली का उड़ना
और
रात के सन्नाटे में
किसी झिंगुर की आवाज।

महिलाओं की नजर में राजनीति-2-

दुनिया के सारे असलहे की ताकत
इतनी नहीं है कि
वो कत्ल कर सके
एक परिन्दे की उड़ने की इच्छा
दुनिया में मौजूद
तमाम ताकतें मिलकर भी
पहरा नहीं दे सकती
मनुष्य की कल्पना पर

महिलाओं की नजर में राजनीति -3

उनके पास ताकत है,
असलाह है,
वे चाहें तो
बोलते मनुष्य की जीभ कतर लें,
वे चाहें तो उड़ते परिन्दे के पर कतर लें,
फिर भी
सारा असलाह नाकाफी
हमारी आंखों से टपकती घृणा को
प्यार में बदलने के लिए,
हमारी कल्पनाओं में
रोज कई बार जलती है इनकी दुनिया।
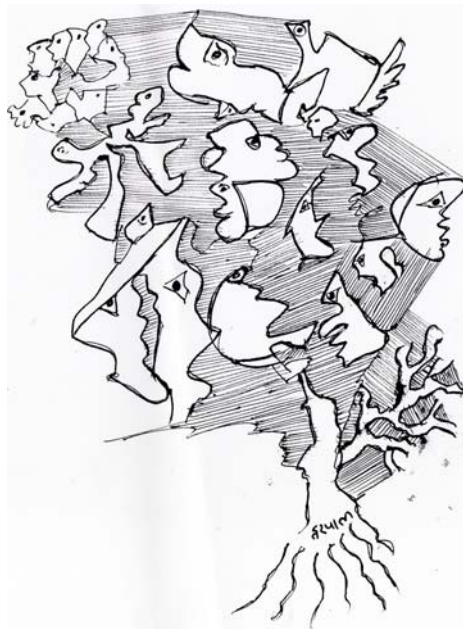
दुनियादारी-1

सखी दुनियादारों के बीच
कैसी चल रही है तुम्हारी दुनियादारी
सखी
उम्र ढलने के साथ भी
हमें नहीं आई दुनियादारी
सखी
हम अभी भी चीखतें हैं
अभी भी लगाते हैं नारे
अभी भी जिन्दा है
हमारा दुनिया को बदलने का सपना
सखी अभी भी जिन्दा हैं हमारी मूर्खताएं
सखी हम अभी भी हैं चंचल चित
सखी जब हम मिलेंगे
किसी बस स्टॉप, बाजार या सड़क पर
तो
अपनी दुनियादारी के बोझ के साथ
वही हिरनी जैसी कुदाक भरकर
क्या अब भी लिपटोगी मेरे गले से
वैसे ही जैसे लिपटती थी पहले।

दुनियादारी-2

सखी तुम्हारा प्रेमी
जो तुमसे कहता था
कि असम्भव है
तुम्हारे बिना मेरा जीवन
आजकल वह जीता है
ठीक-ठीक वैसे ही
जैसे जीता था तुम्हारे साथ।

स्वर्ग-1

जवान लड़कियां सर्वशक्तिमान के स्वर्ग से
खौफ लपेटकर निकलती हैं
तो शोहदों से सावधान और आतंकित रहती हैं
किसी मनचले से कभी-कभी
कुछ बतिया भी लेती हैं
यह एक राज है
यह जब-जब भी खुलता है या
अपने स्वतन्त्र निर्णय की तरह
खोल दिया जाता है

तो अगले दिन
पास-पड़ोस गांव-शहर
में फैली होती है
खबर इनकी आत्महत्या की।

स्वर्ग-2

जब-जब भी हम सब मिलकर
गुपचुप बतियायी
तभी परमेश्वर व साकार परन्तु
सर्वशक्तिमान
के स्वर्गों का जिक्र हमेशा आया
साकार परन्तु सर्वशक्तिमान यानी पिता
के स्वर्ग की सच्चाइयां मैं जानती थी
मैं जानती थी कि
इस स्वर्ग में इच्छाएं गढ़ने,
अपने जीवन के युटोपिया बनाने,
अपने लिए एकान्त तलाश करने के
साथ-साथ
हंसना और ज्यादा बोलना भी वर्जित है
वह सब भी यह जानती थी कि
हमारे जीवन का सौंदर्यशास्त्र
फल-फूल सकता था उन वर्जनाओं के
बाहर
हम सब यह भी जानती थी कि
साकार सर्वशक्तिमान का सौंदर्यशास्त्र
स्वयं के बारे में, अपने जवान होते बेटों
और स्वर्ग के मालिकों के लिए
यौन वासनाओं का औजार बनती
बेटियों के बारे में अलग-अलग है,
उनका सौंदर्य और उनके बेटों का सौंदर्य
ताकत में है
तो उनकी इच्छाओं में रहस्य रोमांच भरती
बेटियों का सौंदर्य
न्यायिक चेतना से बेदाग दिमाग
लम्बे लहराते गेसुओं
मोटी आंखों और उन पतले होठों में है
जो अन्याय के खिलाफ फड़फड़ाते नहीं,
इस सौंदर्यशास्त्र को हमने
अपनी शिक्षा ग्रहण करते समय
और ज्यादा आत्मसात किया
नखशिख खण्ड पढ़ते समय
हमने हाथ मसले कि
हमारी आंखों में लाल डोरे क्यों नहीं हैं?
हमारे कुल्हे क्यों ज्यादा बाहर हैं,
हमारे स्तन क्यों नहीं सही अनुपात में
उभरे
हमारी भौहें क्यों नहीं घनुषाकार हैं,
यह मलाल स्वर्ग के मालिकों के जहन में
भी था
इसलिए सभी गैर अनुपातिक चीजों को
अनुपातिक बनाने के लिए
नई-नई टैक्नोलोजी विकसित हुई
गली-गली ब्यूटीपार्लर खुले।

स्वर्ग-3

हे स्वर्ग के मालिको
मेरी सहेलियों के दिलों में रोष सही
फिर भी तुम्हारी सत्ता
अभी उन्हें स्वीकार्य है,
तुमने एक होकर
उन सबको संचालित किया
परन्तु अभी वह सब मिलकर
विद्रोह की तैयारी में नहीं,
इसलिए घबराओं मत
अभी हमारे देश के
सभी स्वर्ग सुरक्षित हैं
और पूरी दुनिया तुम्हारी।

स्वर्ग-4

मुक्ता स्वर्गवासी होना चाहती थी,
बचपन से अब तक उसने जाना था कि
स्वर्गवास को जाते समय
बड़ा जश्न होता है,
जिसका मनोरम दृश्य
ताउम्र मन मे बसा रहता है
स्वर्गवास को जाते समय नई-नई पोशाकें
और जेवर मिलते हैं
हसीन रातें और खुशहाल दिन मिलते हैं,
उसे सजने संवरने का बहुत शौक था
इसलिए वह स्वर्गवासी होना चाहती थी
वह भी मेरी दूसरी सहेलियों की तरह
हमारे देश के स्वर्गों की नारकीयता से
परीचित नहीं थी
और अब जब वह
परमेश्वर यानी पति के
स्वर्ग की नारकीयता से परिचित है
तब भी वह उस स्वर्ग में
उस तरफ सेंध लगाने में सक्षम नहीं है
जहां से उन्मुक्त जीवन का रास्ता
निकलता है।

दीवारें

दीवारें इनमें छिद्र नहीं
जो दिखा सकें बाहर की दुनिया
नजर भेदी क्षमता से ऊपर
की दीवारों के बाहर
हम नहीं जानते क्या है?
बस सुना है कि दीवारों के बाहर
भेड़िये रहतें हैं,
जो औरतों को देखते ही लपक लेते हैं
सुना है कि
बाहर खून-खराबा
और गुंडागर्दी है,
बाहर अन्याय है
बाहर इन्साफ नहीं मिलता
इसके साथ कहा गया
बाहर की हवा लगते ही
औरतें बिगड़ जाती हैं
परन्तु हमें नहीं बताया गया कि
बाहर बड़े-बड़े पोखर और नदियां हैं
बाहर झरने कल-कल करके बहतें हैं
बाहर नीला खुला आसमान है
बाहर ऐसी जमीन है
जिसका कोई ओर-छोर नहीं
बाहर बड़ी-बड़ी सड़कें हैं
जिन पर दौड़ती गाड़ियों के साथ
दुनिया की गति समझ में आती है
हमसे छुपाया गया कि
बाहर जमीन और आसमान मिलते हैं
यानी कि बाहर सब कुछ संभव है।

सम्पर्क :09467222260

●●●

हरियाणा में भाषायी विविधता

सुधीर शर्मा

सन् 1986 में जामा मस्जिद क्षेत्र की एक दुकान से मैंने एक पुराना ग्रामोफोन रिकार्ड खरीदा था (जो मेरे पास अब भी है) गायिका का नाम है महमूदा बेगम। गीत के बोल लिखे हैं, 'ए री मेरा न आया भरतार जल कः मरूंगी बाग मः।' वह 1938-40 के आसपास की रिकार्डिंग है। उन दिनों ग्रामोफोन रिकार्ड पर गायक या गायिका के नाम के अतिरिक्त गीत की भाषा, फिल्म या विधा का नाम भी लिखा जाता था। इस रिकार्ड पर नाम के आगे भाषा को इंगित करते हुए 'बांगरू' लिखा है। हरियाणा की इस प्रमुख भाषा का जो रोहतक, सोनीपत, जींद, भिवानी व पानीपत क्षेत्र में बोली जाती है, बहुत पहले से बांगरू कहा जाता रहा है। इसे सबसे पहले ज्यॉरज अब्राहम ग्रियर्सन ने 'बांगरू' या 'बांगड़ू' के नाम से अभिहित किया था। उन्नीस भागों में, 1903 और 1928 के बीच प्रकाशित, इस बृहद 'लिगुइस्टिक सर्वे आफ इंडिया' में 'बांगरू' और इस प्रदेश के लिए 'बांगर' का इस्तेमाल किया है।

समय के साथ-साथ परिस्थितियां बदली और 'बांगरू' भाषा के लोक नाटक (सांग), रागनी, कथाएं, गाथाएं, किस्से, कहानियां, लोक गीत, फिल्में, हास्य-व्यंग्य इतने प्रचारित-प्रसारित हुए कि एक सीमित क्षेत्र की भाषा ही हरियाणवी मानी जाने लगी। हरियाणा के प्रतिष्ठित भाषाविद् डा. बलदेव सिंह का मत है कि ''यहां जिस हरियाणी की बात की जा रही है, वह सारे हरियाणा की बोली नहीं है, अपितु रोहतक और सोनीपत की बांगरू है। इसके अतिरिक्त हरियाणा के में ब्रज, मेवाती, अहीरवाटी, बागड़ी, कुरुक्षेत्र-करनाल की कौरवी आदि कई बोलियां हैं।'' हरियाणा जनपदीय भाषाओं का एक सुंदर गुलदस्ता है, एक विस्तृत फलक है जहां भाषाओं के कई रंग हें। इन भाषाओं का अपना इतिहास है, अपनी विशिष्ट पृष्ठभूमि है। यद्यपि इनके बीच कोई अभेद्य सीमा-रेखा तो नहीं खींची जा सकती, पर इनके अस्तित्व को अनदेखा भी नहीं किया जा सकता।

इससके पहले कि अन्य भाषाओं का जिक्र करें, यहां यह बताना भी आवश्यक है कि बांगरू अनायास ही प्रचारित और प्रसारित नहीं हुई। इसे लोगों तक सशक्त ढंग से पहुंचाने में इस क्षेत्र के रचनाकारों, कलाकारों, संगीतकारों, अभिनेताओं व शोधकर्त्ताओं की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका है। अधिकतर 'सांगी' बांगरू-भाषी क्षेत्र के रहे हैं। लोक-नाट्य सांग प्रसार का बहुत सशक्त माध्यम पहले भी था, आज भी है, क्योंकि यह गायन-वादन, संवाद, नृत्य, हास्य व उपदेश का बांगरू में मनोरंजक पैकेज है। हरियाणा की फिल्में भी इसी भाषा में बनी और आसपास क्षेत्रों में, विशेषकर पश्चिमी उत्तर प्रदेश में चाव से देखी गई। इस क्षेत्र के काफी लोग सेना में पहले भी थे, आज भी हैं। विभिन्न फौजी छावनियों में जवानों के मनोरंजन के लिए सांग जाते रहे हैं, जिससे भाषा को भी 'एक्सपोजर' मिला और हरियाणा संस्कृति के जीवन मूल्यों को भी। इस आवागमन से लोक-कलाकारों के लिए भी बाहर की दुनिया की खिड़की खुली। फौजी मेहर सिंह की अधिकतर रागनियां फौज की जिंदगी पर ही आधारित हैं। रेडियो स्टेशन का रोहतक में होना बांगरू भाषा की विभिन्न विधाओं के कलाकारों के लिए काफी सहायक रहा है। अब मुंबई की फिल्मों में भी यह भाषा पहुंच गई है। यह लोक भाषा और हरियाणा दोनों के लिए अच्छी शुरूआत है। शोधकर्त्ताओं और संस्कृति समीक्षकों ने भी इस लोक भाषा पर सराहनीय कार्य किया है, लेकिन जहां तक इसका प्रदेश के विभिन्न भागों में सक्रियता से लोकप्रिय होने का प्रश्न है, उस स्थिति के आने में लगता है अभी समय लगेगा।

भाषाओं के संदर्भ में हरियाणा का 'इन्सुलर कल्चर' है। यानी एक द्वीप जैसी संस्कृति है, जहां हर भाषा अपने-अपने द्वीप में --सीमित क्षेत्र में-- सिमटी हुई है और एक 'द्वीप' अन्य क्षेत्रों से कोई लेना-देना नहीं। परिणामस्वरूप मेवात के मुसलमान जोगियों द्वारा गाया जाने वाला 'पांडू का कड़ा' और 'हनुमान कथा' से रोहतक अपरिचित है और भिवानी के जोगी गायकों के 'निहाल दे', 'अमर सिंह राठौर' और 'हरफूल सिंह' के किस्सों से अनभिज्ञ हैं। अतः इन भाषाओं की पृष्ठभूमि और महत्व को समझना आवश्यक है।

हरियाणा के दक्षिण में अहीरवाटी भाषा बोली जाती है, जिसे हीरवाटी, अहीरी और हीरी भी कहते हैं। पहले इसे उत्तर-पूर्वी राजस्थानी भाषा की या बांगरू की उपभाषा माना जाता था, पर अब इसे एक अलग भाषा के रूप में स्वीकार कर लिया गया है, जिसकी अपनी पहचान है। यद्यपि इसकी शब्दावली बांगरू से बहुत मिलती-जुलती है। यह अधिक शालीन, विनम्र व शिष्ट है। बातचीत व संबोधन में सम्मानसूचक 'जी' का प्रयोग किया जाता है, जैसे 'मां जी', 'बाई जी' आदि। बड़े बुजुर्गों के लिए 'तू' का प्रयोग नहीं किया जाता। रिवाड़ी इसका केंद्र बिंदू है। गांव बडव्वा के लोक कवि कल्लू भाट ने अहीरवाल के उन प्रमुख गांवों के नाम गिनवाए हैं, जहां यह भाषा बोली जाती है। वे अहीरवाल को 'अनोखा' और 'देवताओं का निवास' बताते हैं। वे कहते हैं-

'अहीरवाल नौखा भाइयो, देवतां का देस बास
सुणो भाइयो करके ख्याल, कोसली, कनीना, खास
डैरोली और नांगल, कहिए, गढ़ी कोठड़ी सहारणवास
गंडराला, बहरोड़, कहिए, आसिया की पीथड़वास
जोड़िया, नसीपुर, कहिए, नीरपुर रिवाड़ी, पास
पांछापुर, गुरावड़ा, धारूहेड़ा, पाल्हावास
नंगली, निसाड़, नाहड़ गाम मैं गिणाऊ खास'

अहीरवाल में अनेक संत कवि हुए हैं, जिन्होंने यहां की लोक प्रचलित भाषा को अपनाया और धर्म तथा अध्यात्म पर श्रेष्ठ रचनाएं की हैं। इनमें संत नितानंद का नाम सर्वोपरि है। इस क्षेत्र में अलीबख्श के 'तमाशे' (लोक-नाट्य) बहुत लोकप्रिय रहे हैं। यद्यपि उनका जन्म राजस्थान के गांव मुंडावर में हुआ था, वे रिवाड़ी को ही अपनी कर्मभूमि मानते थे। अपने लोकप्रिय लोक नाट्य 'निहाल दे' के समापन पर वे कहते थे -

'राजपूत हू टिकावत, मेरा अलीबख्श है नाम
नगर मुडावर सुबस बसियो, है मेरा निजधाम
रिवाड़ी बना रहे गुलजार तमाशा किया बीच बज़ार

अहीरवाल के जोगियों ने सारंगी पर 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की घटनाओं को गाकर देशभक्ति की भावना को गांव-गांव जाकर पहुंचाया। डा. सत्यवीर मानव जिन्होंने 'दक्षिणी हरियाणा के लौकिक कवियों और काव्य' पर काम किया है, का मत है कि 'यह क्षेत्र धर्म, दर्शन एवं साहित्य की प्राचीनतम एवं अत्यधिक उर्वरा धर्मस्थली रही है।'

अहीरवाटी और बांगरू से मिलती-जुलती बागड़ी भाषा भी हरियाणा में बोली जाती है। यह नाम बागड़ से बना है। अपनी अलग पहचान के लिए ही इस क्षेत्र के लोग अपने नाम के साथ 'बागड़ी' बड़े गर्व से जोड़ते हैं। वर्तमान हरियाणा के दक्षिणी तथा राजस्थान के उत्तरी भाग को प्राचीनकाल से बागड़ के नाम से जाना जाता है और इस क्षेत्र की भाषा को बागड़ी कहते आए हैं। बागड़ में कौन सा क्षेत्र शामिल है, इस पर विद्वान भी सहमत नहीं है। पर जहां तक भाषा का प्रश्न है हरियाणा में बागड़ी सिरसा, डबवाली, आदमपुर, सिवानी, लुहारू व हिसार में बोली जाती है। यद्यपि इसमें राजस्थानी, अहीरवाटी और बांगरू के रंग झलकते हैं, पर इसकी अपनी अलग पहचान है और स्थानीय लोक संस्कृति की महक है। हरियाणा में आयोजित युवा-समारोहों में व अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रमों में ऐसे लोक गीत प्रायः सुने जा सकते हैं, जैसे यह :

'मोरिया आच्छो बोल्यो रः ढलती रात मः
म्हारा हीवड़ा म बहगी र दुधार
मैं तो बोल्यो ए म्हारी मौज म
थारै किस बिध बहगी ए कटार'

या फिर एक अन्य लोक गीत

'उड़ उड़ र म्हारा काला रै कागला
जद म्हारा पीवजी घर आवै
घी खांड रो जीमण जिमाऊं
सोना म चोंच मढांऊ र कागला
जद म्हारा पीव जी घर आवै'

इस क्षेत्र में गुरु जम्भेश्वर द्वारा निर्धारित 20 जमा 9 नियमों का पालन करने वाला बिश्नोई समाज न केवल अपनी मान्यताओं के कारण, बल्कि अपनी भाषा के कारण भी अपनी पहचान बनाए हुए है। गुरु जम्भेश्वर ने परम्परागत लोक वाणी द्वारा ही अपना संदेश व उपदेश अपने अनुयायियों तक पहुंचाया है।

दिल्ली से 83 किलोमीटर दूर मथुरा की ओर हरियाणा के जिला पलवल में एक गांव है बनचारी, जिसके लोक-कलाकारों ने ब्रज भाषा की 'रसिया' गायिकी को बड़े-बड़े नगाड़े बजाकर न केवल भारत, बल्कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्ध किया है। हरियाणा में ब्रज भाषा फरीदाबाद से लेकर पलवल, हसनपुर, होडल क्षेत्र में बोली जाती है। ब्रज भाषा एक प्राचीन भाषा है, जिसको सूरदास, रहीम, रसखान, केशव दास अन्य कवियों ने अपनी रचनाओं से सुशोभित किया है।

इतिहासकार मानते है कि संत कवि सूरदास का जन्म सन् 1418 में फरीदाबाद के निकट सीही गांव में हुआ था। ब्रजभाषा का हिन्दी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। होली के दिनों में रोहतक के निकट गांव खरक के गोविन्द राम ढप पर अपनी मंडली के साथ नाचते हुए यह रसिया गाते हैं।

'ब्रज मण्डल देस दिखा दयो रसिया
तोरे बिरज म मोर बोहत है
बोलत मोर फटै छतियां
तोरे बिरज म गैया बहोत है
पी पी दूध भए पठिया''

यह उदाहरण इसलिए महत्वपूर्ण है कि हरियाणा में रसिया केवल ब्रजमंडल में नहीं, अन्य स्थानों पर भी गाया और सुना जाता है और यह विधा प्रांत की भाषाई विविधता को सुदृढ़ करती है।

हरियाणा में एक और महत्वपूर्ण भाषा है -- मेवाती जिसके द्वारा हम राजस्थानी संस्कृति और भाषा के साझेदार है। यह भाषा अलवर, भरतपुर तथा धौलपुर जिलों के अतिरिक्त हरियाणा के मेवात क्षेत्र में बोली जाती है। जहां यह फिरोजपुर, झिरका, नूह, नगीना, पुन्हाना, हथीन, तावडू आदि स्थान इसके बोलने वाले रहते हैं। मेवात में मुख्य रूप से रीति-रिवाज हिन्दुओं के समान हैं। मुसलमान लोक-गायक 'पांडू का कड़ा' व अन्य हिन्दू गाथाएं सारंगी, ढोलक और भपरां पर गाते हैं। मेवाती पर उर्दू के अतिरिक्त ब्रज, अहीरववाटी व राजस्थानी का प्रभाव दिखाई देता है। हरियाणा की अन्य बहुत सी भाषाओं की भांति मेवाती भी मेवात के सीमित

क्षेत्र में सिकुड़ी हुई है। असगर खां मेवाती के अतिरिक्त हरियाणा में रेडियो या अन्य मीडिया पर हरियाणा का कोई मेवाती लोक कलाकार मेवाती के माध्यम से अपनी कोई पहचान नहीं बना पाया है। नूह के सिद्दिक अहमद साहब मेव ने मेवात की संस्कृति पर पुस्तक लिखी है, पर इस प्रकाशन के बारे में मेवात के बाहर जानकारी कम है। जैसा हमने देखा कि हरियाणा में कुछ भाषाएं ऐसी हैं जो उनके अधिकतर बोलने वालों के नाम से जानी जाती हैं जैसे अहीरों की अहीरवाटी या मेवों की मेवाती पर कुछ भाषाओं की प्राचीन पृष्ठभूमि है जैसे कौरवी। हरियाणा में यह कुरुक्षेत्र, यमुनानगर तथा अम्बाला जिलों की लोकभाषा है। विद्वान इसे महाभारत काल से जुड़ा हुआ मानते हैं। उस समय के लंबे चौड़े कुरु प्रदेश की राजधानी हस्तिनापुर (मेरठ) थी। इसका नामकरण कुरुवंशीय सुहोत्र के पुत्र हस्तिन ने अपने नाम पर किया था। माना जाता है कि उस समय अम्बाला से बिजनौर तक का विस्तृत क्षेत्र महान कुरु जनपद था। कालांतर में यहां के निवासी कौरव इनका भू-प्रदेश कुरु प्रदेश और भाषा कौरवी कहलाई जाने लगी। कौरवी का हिन्दी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। भाषा और संस्कृति के मामले में कौरवी और बांगरू में बहुत समानता है। मेरठ के बागवत को कौरवी का केंद्र माना जाता है।

हरियाणा में लोक भाषाएं ही नहीं, उर्दू भी बहुत धुंधली हो गई है। स्वतंत्रता से पहले और उसके कई वर्षों बाद तक उर्दू यहां बहुत प्रचलित थी। शहरों और कस्बों में लोग उर्दू के 'प्रताप' और 'मिलाप' समाचार पत्र पढ़ कर दिन आरंभ करते थे। कालेजों में उर्दू लिटरेरी सोसाइटिज थीं, जिनमें तरह-मिसरा दिया जाता था, जिसके आधार पर छात्र-छात्राएं गज़ल लिखते और सुनाते थे। उर्दू को आम आदमी तक पहुंचाने में प्रदेश के कद्दावर नेता चौधरी छोटूराम की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। वे बार-बार कहते थे कि उनके संघर्षों व प्रयासों के प्रेरणा स्रोत डा. मोहम्मद इकबाल थे। चाहे गांव हो या शहर या विधान सभा चौधरी छोटूराम हमेशा इकबाल के शेर बोला करते थे। उनका पसंदीदा शेर आज भी उनकी समाधि पर उर्दू लिपि में लिखा हुआ देखा सकता है।

'यकीं मोहकम, अमल पैहम, मुहब्बत फास हे आलम
जिहादे जिंदगी में यह हैं मर्दों की शमशीरें'

'दृढ़ विश्वास, उस पर पूर्ण अमल और मुहब्बत ऐसी जो दुनिया पर विजय पा ले, जिंदगी के संघर्ष में मर्दों की यही तलवारें हैं।'

उस समय के बहुत से युवाओं को सुन-सुन कर ही इकबाल के शेर याद हो गए थे। रोहतक से प्रकाशित 'जाट गजट' भी काफी दिनों तक चलता रहा। यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में हरियाणा में उर्दू बहुत कम हो गई है, पर समाप्त नहीं हुई। कोर्ट-कचहरी की भाषा आज भी उर्दू है। अम्बाला के उर्दू प्रेमी डीसीएम (दिल्ली) के इंडो-पाक मुशायरे के साथ अपने शहर में भी मुशायरा आयोजित करवाते रहे हैं। हाल ही में प्रो. रामनाथ चसवाल आबिद आलमी की याद में रोहतक में आयोजित मुशायरा (जिसकी निज़ामत लेखक की थी) बहुत सफल आयोजन रहा। हर वर्ष युवा समारोहों और उत्सवों में मंच संचालक उर्दू के सैंकड़ों शेर बोलते हैं और श्रोता भी उनका भरपूर आनंद लेते हैं। हरियाणा में गज़ल, नज़्म और कव्वाली के चाहने वालों का भी एक बड़ा वर्ग है। कालेज तथा विश्वविद्यालयों ने इन्हें प्रतियोगिताओं का एक आइटम रखा है, जिसमें युवा वर्ग काफी रूचि दिखाता है। कठिनाई यह है कि उर्दू ज़ुबान को बोलना और सुनना तो प्रचलित है, पर पढ़ना-पढ़ाना नहीं है। हरियाणा को गर्व है कि यह प्रदेश अल्ताफ हुसैन हाली की जन्म भूमि और लंबे अरसे तक कर्मभूमि भी रहा है।

हरियाणा को एक अलग प्रशासनिक इकाई बने लगभग 50 वर्ष हो गए हैं, पर अभी तक यहां की भाषाई विविधता को सुनियोजित ढंग से प्रतिनिधित्व करने वाला लोक संस्कृति का कोई संगठन नहीं। इन भाषाओं के शब्द, मुहावरे, लोकोक्तियां, गीत व अन्य सांस्कृतिक विधाएं लुप्त होती जा रही हैं। कुछ बुजुर्ग बचे हैं जो इस विरासत को बचा कर रखे हुए हैं, लेकिन इस पीढ़ी के अंत के बाद इस सांस्कृतिक सामग्री का भी अंत हो जाएगा। डा. बलदेव सिंह ने सही चेतावनी दी है कि ''प्रचार और प्रसार साधनों की अधिकता के कारण मानक भाषा बोलियों को आत्मसात् करती जा रही है...अगले पचास वर्षों में यदि हरियाणी का पूर्ण हिन्दीकरण हो जाए तो कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए।'' अतः सभी लोकभाषाओं का न केवल संरक्षण हो, बल्कि विभिन्न लोक विधाओं --'रागनी, रसिया, कथा, गाथा, साका, हास्य, व्यंग्य, सबद, भजन, दौड़, गीत इत्यादि -- को व्यापक रूप से सुरूचिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत व प्रसारित किया जाए, क्योकि नाजिश प्रतापवादी के लफ्जों में

जबान बनती है चौपाल में जवां की तरह
जबान बनती है बैठक में दास्तां की तरह
जबान ढलती है कूचों में कारखानों में

न दफ्तरों न कहीं फाइलों में ढलती है
जबान धरती के सीने से लग के चलती है

जमीं का हुस्न है खेतों की ताजगी है जबां
रहट की लय है तो पनघट की रागनी है जबां
जबां मचलती है मिट्टी में चहचहों की तरह
जबां उबलती है आंगन में चहचहों की तरह

जहां भी छांव घनी हो कयाम करते चलो
अदब जहां भी मिले एहतराम करते चलो

सम्पर्क : सरकुलर रोड रोहतक, मोः 09729636170 ●●●

आलेख

मेवाती लोक जीवन की मिठास

डा. माजिद

इत दिल्ली उत आगरा मथुरा सू बैराठ।
काला पहाड़ की शाळ में बसै मेरी मेवात।।

इस मेवाती दोहे में मेवात का भौगोलिक फैलाव दिल्ली से लेकर फतेहपुर सीकरी के बीच बताया गया है, जिसमें गुड़गांव, फरीदाबाद, भरतपुर, दौसा, अलवर, मथुरा, आगरा, रेवाड़ी जिलों के बीच का भाग शामिल है। इस पूरे क्षेत्र को मेवात के नाम से जाना जाता रहा है, लेकिन आजादी के बाद पुनर्गठन हुआ और मेवात सिमट कर अलवर से लेकर सोहना तक और हथीन से लेकर तिजारा, भिवाडी तक रह गया है। तात्पर्य यह है कि पहले की अपेक्षा मेवात काफी छोटा हो गया है। इस क्षेत्र में अधिकता में मेव जाति निवास करती है। उसी के नाम पर इसका नाम मेवात पड़ा।

भारत में इस तरह क्षेत्रों के जातियों के नाम पर पहले से ही हैं। जैसे अहीरवाल, जंटियात, मीणावाही आदि। मेवात को पहले से ही लोग पसंद करते आए हैं। इसीलिए इसको मेवा भी कहा जाता रहा है। इस क्षेत्र का अपना इतिहास रहा है। इनके लिए वतन हमेशा धर्म व जाति से ऊपर रहा। राजा हसनखां मेवाती ने बाबर का साथ न देकर राणा सांगा का साथ दिया था और भी बहुत से किस्से प्रसिद्ध हैं।

एक-एक क्षेत्र की और उसमें बसने वाली कौम की अपनी अलग भाषा, लोक साहित्य, लोक संस्कृति तथा सोच होती है। जो उसको कई मायनों में दूसरे क्षेत्रों से अलग करती है। कहने की आवश्यकता नहीं कि भाषा मनुष्य के पास ऐसी वस्तु है, जो समग्रता में उसके चरित्र का निर्धारण करती है। भाषा ही मनुष्य के भावों व विचारों की वाहिका है। मनुष्य को मनुष्य बनाने का श्रेय भाषा को ही प्राप्त है। यही वह साधन है, जिसके कारण वह दया, ममता, करूणा आदि उच्च भावों से मंडित है। दुनिया की सभी संस्कृतियां भाषा के जरिए ही पहचानी जाती हैं। संस्कृति के अलावा ज्ञान-विज्ञान की अन्य बातें भी हम भाषा के जरिए सीखते हैं।

भाषा का निर्माण किसी विशेष जाति, धर्म, वर्ग अथवा सम्प्रदाय द्वारा नहीं होता है। यह तो स्वाभाविक रूप से बनती-बिगड़ती है। डा. पं. सुभरोकोव ने लिखा है - ''भाषाओं की रचना पढ़े - लिखे लोगों द्वारा नहीं, बल्कि लोगों द्वारा और सिर्फ सोचने-विचारने वाले लोगों द्वारा नहीं, बल्कि सभी तरह के लोगों द्वारा की जाती है।'

सांस्कृतिक दृष्टि से मेवात में हिन्दू और मुसलमान काफी घुले-मिले हुए हैं। वो होली, दीवाली, ईद आदि त्यौहारों को मिल कर मनाते रहे हैं। यहां धर्म के मामले में उदारता रही है। भाषिक दृष्टि से भी यहां हिन्दू और मुसलमानों में भेद करना कठिन है। पहले कहा जा चुका है कि मेवात वासी, छल, कपट, धोखा आदि से कोसों दूर माने जाते है।

हृदय से निकली बात चाहे वह बातचीत हो, लोकगीत हो, लोकगाथा हो, चाहे कोई और माध्यम हो उसमें भोलापन आना स्वाभाविक है और भोलापन अपने-आप में मीठा व रसीला होता है। मेवाती में शिष्ट साहित्य न के बराबर है। यहां अपना लोक साहित्य है, जिसमें लोकगीत, लोक दोहे, लोक कथा, लोक गाथा तथा पहेलियां खूब प्रचलित हैं। मेवाती दोहों के माध्यम से मीठा बोलने और परोपकार करने के लिए इस प्रकार प्रेरित किया गया है।

'खट रस, मिठ रस, प्रेम रस, कन रस लीजो तोल,
सब रस भाई जुबान में चाहे जैसो बोल।।

अर्थात खट्टा, मीठा, प्रेम और कड़वापन इसी जबान में निहित है। यह मनुष्य पर निर्भर करता है वह कैसा बोले अर्थात इसमें मीठा बोल बोलने के लिए उत्साहित किया गया है।

कागा कोयल एक सा, बैठा एकई डाल।
बोली सू परख लै, ई कोयल ई काग।।

अर्थात् मनुष्य की वाणी से ही पहचान होती है।

लोक साहित्य लोक मन का आईना होता है। मेवात भी उससे अछूता नहीं है। मेवाती लोक गीतों को सुनते ही अवसान भी या तो थिरकने लगता है या करूणा से भर जाता है।
एक श्रृंगारी गीत दृष्टव्य है -

राजा हम प चलै न तेरी चाक्की
हमारी पतली सी कमरिया रे
ना गोरी मारुं ना गोरी छेडूं
दुहरी लगा दूं पीसणहारी,
तिहारी पतली सी कमरिया रे
राजा हम प खिंचे ना तेरो पाणी
हमारी बाली सी उमरिया रे
ना गोरी मारुं न गोरी छेडूं
दुहरी लगा दूं पणिहारी,
तिहारी बाली उमरिया रे

इसमें नायक नायिका के लिए पूरी तरह समर्पित है। संयोग, श्रृंगार का मनोहारी चित्रण हुआ है।
एक और गीत वियोग श्रृंगार से संबंधित है देखिए -

अइये मेरो रो-रो गुलीबंद भीजे
अईये सुबकिन सू गलो मेरो दूखे
सास मेरी दीखे, ससुर मेरो दीखे
अइये हरबाबी बलम ना दीखे
अइये मेरो रो-रो गुलीबंद भीजे
देवर भी दीखे, दौराणी भी दीखे
अइये छरचंदो बलम ना दीखे
अईये मेरो रो-रो गुलीबंद भीजे।

इस गीत में प्रोषितपतिका, पति को संबोधित करते हुए कहती है कि मैंने रो-रो कर बुरा हाल बना लिया है। यहां पर सभी हैं पर तुम नहीं हो।

मेवाती महाभारत में एक जगह बड़ी कलात्मकता से कुरुक्षेत्र का वर्णन किया है। युद्ध से पहले युद्ध के लिए जगह खोजी जाती है। उसी समय मेवाती में कहा गया एक लोकगाथा गीत का अंश प्रस्तुत है।

हीन अचम्बो देख, बाप ने बेटा मारो
तनक करी ना काण, पकड़ धोरा में डालो
ऊपर सूं, माटी धरी, नक्को दियो जमाय
अरजन या भुम्म है चाक लै, हीन पिता पूत कूटवाय

यहां मेवाती की कलात्मकता देखते ही बनती है। पहले दोहों के बारे चर्चा हो चुकी है। नीति परक और श्रृंगारिक दोहे कहने की परम्परा मेवात में पुरानी है। नीति हमेशा मंगलमय होती है। उसमें किसी का अहित नहीं होता और जिस बोली से किसी का अहित नहीं होता, वह मीठी लगती है तथा समाज के लिए लाभदायक होती है।

1. पर नारी पैनी छुरी, मत लगाओ अंग
   रावण जैसा खप गया पर नारी के संग।।
2. पर नारी पैनी छुरी, तीन ठोड़ सू खाय
   बान भटे, जोबन घटे, लाज कुटम की जाए।।
3. जै सुख चहावै जीव को, काम छोड़ दे चार,
   चोरी, चुगली, जामनी, चौथी पराई नार।।

मेवाती में ऐसे हजारों दोहे हैं, जो किसी भी समय सुनाए जा सकते हैं और सुनने वाला प्रभावित हुए बगैर नहीं रह सकता।

मेवात का अपना एक लोकगीत प्रकार है। उसी को लोग मेवाती गीत समझते हैं। यह दो पंक्तियों का छोटा सा गेय मुक्तक होता है। इसकी लय और तान और समय-समय पर बदलती रहती हैं। इसके द्वारा क्षणिक हृदय उद्‌गार बड़े ही सटीक ढंग से उजागर होते हैं जैसे -

कस कू रोकेगो मोटर में भक्क कै सीट
खंदा दै माई मत रोके।।

यह गीत कोमल भावना से ओतप्रोत है। इसमें पति पत्नी को लाने उसके मायके में जाता है। तब उसकी सास उसकी पत्नी को उसके साथ भेजने से मना कर देती है। तब वह निराश होकर चल देता है। तभी उसकी पत्नी गीत के माध्यम से अपनी मां से कह उठती है। माई मुझे इसके साथ भेज दो। रास्ते में यह सीट किस लिए रोकेगा। अर्थात हर बार जब मैं इसके साथ जाती हूं, तो यह भागकर बस में सीट खोजता है। मेवाती गीतों में अधिकतर गीत दाम्पत्य जीवन पर आधारित हैं।

मेवात में बहुत सी लोकगाथाएं प्रचलित हैं, जिनमें राज बासक की बात, कृष्ण मूजरी की बात, महादेव गौरा को छल, इन लोकगाथा गीतों को मेवात में बात कहा जाता है। मेवात में इनको गाने वाली जाति मीरासी होते हैं। ये पूरी रातभर मेवों को संगीत के साथ इनको सुनाते रहे हैं। एक लोक गाथा गीत का अंश प्रस्तुत है -

इतनी सुणकर बात, घात भीतर धर लीनी
धरो भीलनी भेस, गेल परबत की लीनी
पोहंची हून जार, बीणती ढौले लकड़ी
देखी शंकर नार, मची वाके दिल में हुड़की
तेरा अजब कंटीला नैन, बणी तू सुंदर नारी
धोनी धोया दंत, बोलती लागे प्यारी
काई तू कारीगर ने घड़ी, अरस सू परी उतरी
देही प दो गुरज, जिगर सू दीखे न्यारी
सुण भीलनी तोसू कहूं, सुनो हमारी बात
सारा परवत की राणी करूं, जै तू रहे हमारे साथ।।

देसा की टेक

पंडित को देसा ने खाने पर बुलाया। घर की दहलीज पर पांव रखते ही पंडित चिल्लाया, 'हट, हट!' मानो किसी जानवर को भगा रहा हो। देसा ने उससे पूछा कि क्या बात है। पंडित ने उसे समझाया, 'मैंने स्वर्ग में सुअर को घूमते देखा। मैं उसे भगा रहा था।'

देसा ने पत्नी को समझा दिया कि पंडित को खाना परोसते समय घी शक्कर नीचे छुपा देना। थालियों में शक्कर के ऊपर घी और अपनी थाली में केवल शक्कर देखकर पंडित इधर-उधर देखने लगा। देसा ने पूछा, 'कुछ चाहिए आपको?' पंडित ने कहा ' मुझे घी डालना भूल गए'। देसा ने आंखे तरेरते हुए कहा, 'जब आप स्वर्ग तक देख सकते हैं, फिर आपको शक्कर के नीचे घी दिखाई नहीं दिया?'

हिन्दू धर्म के मिथक मेव समाज में मेवाती बोली में बड़े ही कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किए गए हैं।

आखिर में कहा जा सकता है। यहां शब्दों की बनावट, लहजा, मिठास से ओतप्रोत है।

मेवात में बहन से, बांहण, लाली, भैंना कहकर पुकारा जाता है। 'भाई-बाहण कहां सूं आई है।' बहन- 'भई मैं तो हींनी सू आई हूं।' यहां भाई से बीरा, भई, लाला कहकर बुलाया जाता है। मां से माई कहकर पुकारते हैं। यहां पिता, मां, और पति को 'तू' कहकर बुलाया जाता है।

मेवात में एक जैसी बोली नहीं है। जो कई तरह से बोली जाती है। इनका लहजा, शब्दों की बनावट भिन्न-भिन्न है। अलवर जिले में बोली जाने वाली बोली भी एक बानगी देखिये -

आपा ई तो लड़ैं, आपा ई जेल जावां
आपा ई लुटे, भाया सारी गलती हमारी है।
भाया ना तो हम पढ़ां, न लिखां, हम तो ढोर हां ढोर।।

हरियाणा में भयाना की बोली - एक बानगी

हमी तो लड़ें, हमीं जेल जावें, हमीं लुटां-खुसां, भई ऐसो अ सारी गलती हमारी है। देखा न हम पढें, न लिखें, हम तो ढोर या ढोर ही हैं।

हृदय को छूने वाला एक संवाद -

भई यहां कोय तू
भई मैं तो सिहरावट को हूं
यार तैने जब सू कीना बताई, तू तो रिश्तेदार है।
आजा बैठजा, थोड़ी रूक्कै चलो जाए।
ओ छोरा पैप्सी ला भक्क कै।
यहां मेहमान नवाजी चरमोत्कर्ष पर है।

जहां गरीब व अनपढ़ लोगों की अधिकता हो, वहां सभ्य, सुसंस्कृत व शब्दों की जादूगरी होना कठिन है, लेकिन हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि मिठास का संबंध भावना से होता है। कोमल भावना रखने वाला मनुष्य कटुभाषी होना मुश्किल है। उसमें बेढबपन हो सकता है पर कटुता नहीं।

मेवात बोली के लिहाज से व्यवहार के लिहाज से और कोमल भावनाओं के लिहाज से मेवा है। यहां ज्यादातर सरकारी कर्मचारी दूसरे क्षेत्रों से संबंध रखते हैं लेकिन वे आने के बाद यहां से जाने का नाम नहीं लेते। वो इसमें रम जाते हैं। दूसरी बात यह है कि मेवात में मेव समाज ने अभी तक धर्मशाला या सेलहर नहीं बनाया है। इसका कारण यह है कि बाहरी अनजान आगंतुक को किसी घर में बिना हिचक ठहरने की इजाजत मिल सकती है। कुछ असामाजिक तत्व समाज को बदनाम किए हुए हैं लेकिन आज भी अधिकता में भोलापन विद्यमान है।

सम्पर्क : 09416274185

●●●

आलेख

हरियाणा में पंजाबी भाषा व साहित्य की वस्तुस्थिति

डा. कुलदीप सिंह
सहायक प्रोफेसर, पंजाबी विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय कुरुक्षेत्र

हरियाणा प्रांत तब अस्तित्व में आया, जब एक नवम्बर 1966 को पंजाब को तीन भागों में विभाजित किया गया। इस बंटवारे से सिर्फ तीन (पंजाब, हरियाणा, हिमाचल) भूखंडों ने ही अपना अस्तित्व ग्रहण नहीं किया, अपितु इससे इनकी संस्कृति और भाषा को भी एक नया स्वरूप व पहचान मिली।

हरियाणा में ठेठ हरियाणवी बोलने वाले लोगों को पंजाबी संगीत की धुनों पर थिरकते हुए देखा जा सकता है, परन्तु पंजाबी भाषा को बोलने व समझने में असमर्थता उनके चेहरे से साफ झलकती है। परन्तु पंजाबी खानपान, पहरावे, पंजाबी संगीत के प्रति दीवानगी हरियाणवी लोग खूब पसंद करते हैं। इसी तरह हरियाणा में रहने वाले पंजाबी भाषी लोग हरियाणवी को अच्छी तरह से समझते हैं और जरूरत पड़ने पर हरियाणवी बोली व मुहावरे को अच्छी तरह से बोलते भी है। हरियाणवी संगीत की धुनों पर उन्हें भी थिरकते हुए देखा जा सकता है।

किसी भी राष्ट्र का भविष्य केवल उसकी प्राकृतिक सम्पदा, संसाधनों, उद्योगों, विज्ञान व तकनीकी पर ही आश्रित नहीं होता, अपितु उसकी शिक्षा पर भी निर्भर करता है। अगर वह शिक्षा उस राष्ट्र व राज्य के लोगों द्वारा बोले जाने वाली मातृभाषा में होगी तो वहां के लोगों का भविष्य और भी ज्यादा खुशहाल होगा। रसूल हमजातोव मातृभाषा के संबंध में लिखते हैं कि 'बच्चों के लिए इससे बड़ी बदकिस्मती और क्या हो सकती है कि बच्चे उस भाषा से वंचित रह जाएं, जो भाषा उसकी मां बोलती है। जिंदगी में सबसे ज्यादा बच्चा मां से ही सीखता है।'

पंजाबी भाषा, संस्कृति व पंजाबी लोगों के परिश्रम की लोकप्रियता पूरी दुनिया में है। इसी कारण कनाडा, मलेशिया आदि देशों ने पंजाबी भाषा को दूसरी भाषा का दर्जा भी दिया हुआ है। अन्य देशों में भी पंजाबी भाषा के अध्ययन-अध्यापन व शोध के पुख्ता प्रबंधा के लिए पंजाबी विभाग खोले गए हैं। हरियाणा प्रांत में पंजाबी दूसरी भाषा का दर्जा रखती है, परन्तु इस भाषा को सीखने की सुविधा समूचे हरियाणा में नहीं, बल्कि केवल वहीं है, जहां पंजाबी भाषी रहते हैं और वं भी सिर्फ सरकारी स्कूलों में। सरकार से अनुदान प्राप्त स्कूलों, सीबीएसई व अन्य प्राईवेट स्कूलों में यह सुविधा

नगण्य है। कालेजों में पंजाबी भाषा की पढ़ाई की सुविधा भी सिर्फ उन्हीं क्षेत्रों में है, जहां पंजाबी भाषी रहते हैं। कालेजों में यह सुविधा सिर्फ बीए के पाठ्यक्रम में ही है जहां विद्यार्थी ज्यादातर ऐच्छिक विषयों व कहीं-कहीं जरूरी विषय के दौरान पंजाबी भाषा को पढ़ सकते हैं। एम.ए. पंजाबी विषय की पढ़ाई केवल करनाल के एक कालेज, यमुनानगर में दो कालेजों, अम्बाला के सरकारी कालेज, सिरसा के सरकारी कालेज व फतेहाबाद के एक कालेज में है। जहां तक विश्वविद्यालयों का संबंध है तो सिर्फ कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय कुरुक्षेत्र में ही एम.ए. पंजाबी, एम.फिल. पंजाबी, पीएच.डी. की पढ़ाई करवाई जाती है। अन्य विश्वविद्यालयों में पंजाबी भाषा के विभाग तक नहीं हैं। यहां तक कि सिरसा में स्थित चौ. देवीलाल विश्वविद्यालय में भी पंजाबी भाषा का विभाग अभी तक नहीं खोला गया, जबकि सिरसा पंजाबी बहुल क्षेत्र है। विश्वविद्यालयों में अनुवाद के कोर्स में हिन्दी से अंग्रेजी व अंग्रेजी से हिन्दी की सुविधा तो है, परन्तु पंजाबी भाषा के प्रति उदासीन रवैया है। स्कूलों, कालेजों, विश्वविद्यालयों में पंजाबी अध्ययन एवं अध्यापन को बढ़ावा देने के साथ क्षेत्रीय स्तर पर पंजाबी रेडियो चैनल, टीवी चैनल को खोलने की तरफ भी कदम उठाए जाने की जरूरत है।

अक्सर हरियाणा में पंजाबी संस्था या विभाग को छोड़ कर और जितनी भी सरकारी या गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा जितनी भी भाषण व लेखन प्रतियोगिताएं होती हैं, उसमें अभिव्यक्ति का माध्यम सिर्फ हिन्दी या अंग्रेजी भाषा ही होता है, परन्तु पंजाबी भाषा के प्रति यह रवैया नकारात्मक होता है। जिसके कारण पंजाबी भाषी विद्यार्थी इस तरह की प्रतियोगिताओं में भाग लेने से वंचित रह जाते हैं।

हरियाणा में पंजाबी भाषा की स्थिति को समझने के लिए दो महत्वपूर्ण बिन्दुओं को पंजाबी भाषा व साहित्य के साहित्यिक संदर्भ में देखना व समझना बहुत ज्यादा जरूरी है। पहला तो यह कि 'हरियाणा का पंजाबी साहित्य और दूसरा यह कि 'हरियाणा में रचित पंजाबी साहित्य'। जब हम 'हरियाणा का पंजाबी साहित्य' कहते हैं, तो इससे अभिप्राय है कि वह साहित्य जिसमें पंजाबी साहित्य की अपनी एक सांस्कृतिक और भाषायी विशेषता हो। परन्तु क्या इस स्थिति में हम समुचित पंजाबी साहित्यकारों व उनकी साहित्यिक कृतियों को 'हरियाणा का पंजाबी साहित्य' की श्रेणी में रख सकते हैं। जवाब लगभग 'ना' में मिलेगा, क्योंकि हरियाणा प्रांत के गठन के पश्चात यहां पर जितने भी साहित्यकारों ने साहित्यिक सृजना की उनकी मूल पृष्ठभूमि या तो पश्चिमी पंजाब की है या फिर पूर्वी पंजाबी की या फिर बंटवारे से पहले के पंजाब की। इसलिए उनकी रचनाओं का भाषायी व सांस्कृतिक आधार पंजाबी है, परन्तु उसमें हरियाणा की भूगौलिक स्थिति, संस्कृति व भाषा की झलक इसके विशुद्ध रूप में देखने को नहीं मिलती। इस वस्तुस्थिति को ध्यान में रखकर अगर हम यह कहें कि हरियाणा में जो पंजाबी साहित्य रचा जा रहा है, उसे 'हरियाणा का पंजाबी साहित्य' कहने की बजाए 'हरियाणा में रचित पंजाबी साहित्य' कहा जाए तो ज्यादा तर्कसंगत व उपयुक्त लगता है, क्योंकि इसमें हरियाणा की भोगौलिक स्थिति, संस्कृति व बोली की ठेठता व पेशकारी का अभाव है। यह तर्क इसलिए भी विचारणीय हो सकता है कि हरियाणा में जब तक जितने भी पंजाबी साहित्यकार हुए हैं और जिनका जन्म हरियाणा बनने से पहले हुआ, इस दृष्टि से हरियाणा इनका कर्मक्षेत्र रहा है जन्मभूमि नहीं। इसलिए उनके द्वारा रचित पंजाबी साहित्य में हरियाणा की मूल समस्याओं, संस्कृति, हरियाणवी मुहावरे व बोली का अभाव देखने को मिलता है। इस दृष्टि से सही मायने में हरियाणा में रचे जा रहे पंजाबी साहित्य को 'हरियाणा का पंजाबी साहित्य' कहने की बजाए 'हरियाणा में रचित पंजाबी साहित्य' कहना ज्यादा उपयुक्त लगता है। परन्तु भविष्य में हरियाणा प्रांत में पंजाबी साहित्यकारों की जो नई पीढ़ी आ रही है, जिनका जन्मक्षेत्र, शिक्षा क्षेत्र व कर्मक्षेत्र भी हरियाणा है, उनके द्वारा रचित पंजाबी साहित्य में यहां की संस्कृति व भाषा का हरियाणवी मुहावरों में देखने को मिल रहा है, जो हरियाणा में पंजाबी भाषा की स्थिति व विकास और हरियाणा के पंजाबी साहित्यकारों के लिए एक शुभ संकेत हैं। स्कूलों, कालेजों में अध्ययनरत विद्यार्थियों में ज्यादातर गिनती ठेठ हरियाणवी बोलने वाले विद्यार्थियों की होती है। यह पंजाबी भाषा के विकास के लिए शुभ संकेत है।

पंजाबी-हरियाणवी व हरियाणवी-पंजाबी की एक नई इबारत हरियाणा में रचित पंजाबी साहित्य में लिखी जा रही है, जो हरियाणा के पंजाबी साहित्य को फलने-फूलने में अहम् भूमिका अदा करेगी। हरियाणा में अगर पंजाबी भाषा को समृद्ध बनाना है, तो यहां के जनजीवन को विशेष तौर पर पंजाबी साहित्य में साहित्यिक सृजना का आधार बनाना होगा। तभी हरियाणा में रचित पंजाबी साहित्य की विशेष पहचान बनेगी।

सम्पर्क : 09466242485

●●●

देसा की टेक

राजा : 'दरबारियों का क्या कर्तव्य है?'

देसा: 'सबसे पहले तो दरबारियों को अपनी रीढ़ की हड्डी की कसरत करनी चाहिए, जिससे वह राजा के सामने हमेशा झुके रह सकेंगे। दूसरे, चापलूसी नहीं, हमेशा सच बोलना चाहिए, ताकि राजा को धोखे में न रखा जाए।'

देसा की बात राजा को जची।

ब्रजेश कृष्ण की कविताएं

सब जानती है पृथ्वी

पृथ्वी को सब मालूम है
सब जानती है पृथ्वी
हम में से जब कोई नहीं था
तब भी थी पृथ्वी
तभी से सभी कुछ देखती है पृथ्वी

देखो-देखो पहली बार कोई हल चला रहा है
देखो-देखो पहली बार कोई कपड़ा बुन रहा है
देखो-देखो पहली बार बन रही है नाव
देखो उठ रही है पहली रोटी की सुगन्ध
चल पड़ा है पहले कुम्हार का पहिया
देखो-देखो हँस रही है पृथ्वी

अभी-अभी रख दिया है किसी ने
राजसिंहासन पृथ्वी की छाती पर
और मुस्कराया है दर्प से
देखो-देखो निकल पड़ा है अश्वमेध का घोड़ा
और रौंद रहा है पृथ्वी
बन रहे हैं दुर्ग, प्रासाद,
नगर, प्राचीर, किले, कंगूरे,
फहरा रही हैं पताकाएं
बांटी जा रही है पृथ्वी
काटी जा रही है पृथ्वी
नहीं थमता जय-पराजय का सिलसिला
जीतता नहीं है कोई
हारता नहीं है कोई

हारती है सिर्फ पृथ्वी
कराहती है सिर्फ
देखो अब गढ़ी जा रही हैं कूटलिपियां
रचे जा रहे हैं ग्रंथ, संविधान
आकाश छू रही हैं अट्टालिकाएं
भागदौड़, बारूद, धुआं, ध्वंस
उड़ाए जा रहे हैं पहाड़
खोद कर लूटी जा रही है नदी
पृथ्वी के पेट से निकाला जा रहा है लालच

तैनात हैं भयानक हथियार
पृथ्वी के हर छोर पर
ये कैसा समय है
कि अपनी धुरी पर पृथ्वी के घूमने के पहले ही
बदल जाते हैं हम

ये कैसी डरावनी परछाइयाँ
कि छिप रहे हैं हम
अपनी ही चालाक हँसी के पीछे
तहस-नहस हो रहे हैं घोंसले
डूब रही है पक्षियों की आवाज
मर रहा है हवा का संगीत

डर रही है पृथ्वी
सिकुड़ रही है पृथ्वी

मगर
सिर्फ इतिहास नहीं है पृथ्वी
सिर्फ भूगोल नहीं है पृथ्वी
पृथ्वी के पास नहीं है समय पश्चाताप का
अपनी कक्षा में अनवरत घूमते हुए
हर समय सम्भव है उसका पृथ्वी बने रहना

देखो-देखो
उस ओर तो देखो
जहाँ खंडहर को चीर कर
पीपल उगा रही है पृथ्वी

वत्सला है पृथ्वी
वसुंधरा है पृथ्वी

कृष्णाबाई का सवाल

पाँच घरों में पूरे महीने भर तक
बर्तन माँजने के बाद
कृष्णाबाई कमाती है छै सौ रुपये
उसके बारह बरस के लड़के ने
अपने ही घर से चुराए वे रुपये

और खरीद कर ले आया
छै सौ के जूते चुपचाप

सवाल यह है कि
कृष्णाबाई अब कहाँ रोये? किससे लड़े?
उन घरों से?
बाजार से?
बेटे से?
या खुद से?

छूटी हुई जगह में बूढ़े

शब्दों और सूचनाओं
की है बहुतायत
मगर समय कम पड़ रहा है इन दिनों

ठहर कर सोचना समझा जा रहा है
समय की बरवादी
और जारी है विचार से परहेज

कीमती और शानदार जूतों की चाह में
बहुत तेजी से बीत रही है
जिन्दगी इन दिनों

समय से बाहर
छूटी हुई जगह में बैठे कुछ बूढ़े
बहुत कुछ कहना चाहते थे इन दिनों
मगर एक युवा लड़का
फ्लैश लाइट चमकाकर
गुजरा कुछ इस तरह
कि शब्दों की बहुतायत के बावजूद
वे अबोले रह गए इन दिनों

अब तक बचे रहने की खुशी में

दिन भर के काम के बाद
घुसता है वह घर में
ईश्वर को धन्यवाद देता हुआ
कि लौट सका है वह
बगैर किसी हादसे के
उसके जीवन में बची है बस
हादसे से बचे रहने की खुशी

पचास से ऊपर का वह आदमी
देखता है दीवार पर टँगा नक्शा
नक्शे में बनी है समूची पृथ्वी
पृथ्वी पर बहुत कुछ
मगर नक्शे में नहीं है वह
उसका शहर या घर

पचास से ऊपर का आदमी
जानता है अच्छी तरह
कि नक्शे में नहीं होते
उस जैसे लोग, घर या शहर
मगर वह टाँगता है
अपने चेहरे को नक्शे के ऊपर

हादसे से अब तक
बचे रहने की खुशी में

1348, सैक्टर-5, कुरुक्षेत्र (हरियाणा)- मो. 09416106707

●●●

जगदीप 'राही' की कविता

मुस्कान

तीखी छुरी-सा
आभास देती है
एक कप
चाय के साथ
परोसी गई
बजाज़ की मुस्कान
धकियाने की-सी
ज़लालत का
अहसास देती है
जरूरत से ज्यादा
पसारी गई
आश्वासन और
मदद की मुस्कान।
घबरा जाता हूं
जब भी कोई
मेरे सामने
मुस्कुराता है

सम्पर्कः गांव बेलरखा, तहसील नरवाना(जींद) मो : 99966-43901

जयपाल की कविताएं

हो सकता है

हो सकता है
आपकी बेटी निकली हो स्कूल
और आपने अभी-अभी पढ़ी हो कोई बलात्कार की खबर

आपकी बहन अभी-अभी बैठी हो डोली में
और अभी-अभी किसी नवब्याहता ने खा लिया हो जहर

आपके मौहल्ले में पैदा हुई हो एक बेटी
और किसी के घर से उठी हो रोने की आवाज!

हो सकता है
आप जाएं अपने पैतृक गांव
वहां आपको दिख जाए सर्वखाप चबूतरा
पेड़ों पर झूलते रस्सी के फंदे
दलितों की बस्ती से उठता हुआ धुआं
किसान की जेब में रखी सल्फास
नौकर की फटी हुई कमीज
मजदूर की टूटी हुई चप्पल!

हो सकता है
आपकी कविता में हो आम आदमी का दर्द
और आपको मान लिया जाए आतंकवादी
आपके हाथ में हो एमएफ हुसैन की पेंटिंग
भगत सिंह की जेल डायरी या पाश की कविताएं
और आपको समझ लिया जाए देश की सुरक्षा के लिए खतरा!

पंच परमेश्वर

मेरी बेटी को माफ कर देना परमेश्वर जी
दरअसल वह नहीं समझ पा रही
कि प्रेम करने से पहले जाति कैसे पूछे
गोत्र कहां से पता करे
प्रेम की यह अनोखी विधि उसकी समझ से बाहर है
वह नहीं जानती
कि कुछ जातियां बड़ी होती हैं।
कुछ छोटी होती हैं
और कुछ अछूत होती हैं
उसे नहीं पता
कि प्रेम मां-बाप की मर्जी से हो सकता है
अपनी मर्जी से नहीं हो सकता
प्रेम केवल अपनी जाति में हो सकता है
पर अपने गोत्र में नहीं हो सकता
न छोटी जाति में हो सकता है
दलित जाति में तो बिल्कुल नहीं
वह नहीं जानती
कि प्रेम से गांव की नाक कट जाती है
गांव कहीं मुंह दिखाने लायक नहीं रहता
लेकिन प्रेम को फांसी पर लटकाने से
गांव की नाक बच जाती है
और सिर ऊंचा हो जाता है

परमेश्वर जी
उसे तुम्हारे हुक्के से निकली
जात-गोत, प्रेम और विवाह की गुडगुडिया परिभाषाएं समझ नहीं आती

वह नहीं जानती
कि हुक्का सुप्रीम कोर्ट का जज होता है
और उसका फैसला अंतिम होता है
उसे नहीं पता
कि पंच परमेश्वर होता है
और परमेश्वर कुछ भी कर सकता है

उसे तुम्हारी मूछों और पगड़ी के साम्राज्य की जरा भी परवाह नही
न ही वह तुम्हारी लाठी की ताकत से डरती है
वह तो तुम्हारी लाठी तोड़ देने की बात करती है
और हुक्का फोड़ देने की बात करती है
परमेश्वर का तो उसे पता ही नहीं कि क्या होता है
मेरी बेटी तो मेरे खिलाफ चली गई परमेश्वर जी
देखना कहीं तुम्हारी बेटी भी तुम्हारे खिलाफ न चली जाए।

सम्पर्कः 112-ए न्यू प्रताप नगर, अम्बाला शहर-134007

●●●

मदन भारती की कविताएं

वह पढ़ने लगी थी

चार दिवारी में कैद,
आसमां को तकने लगी थी,
खिड़कियों से निकल कर नज़रें
अब मचलने लगी थी,
गांव की वह भोली लड़की
जिंदगी को परखने लगी थी।
खानदानी परम्परा की कथाएं
अब समझने लगी थी।
दुनिया से खंडित नए रिश्तों की
कल्पनाएं वह गढ़ने लगी थी।
अपनों की प्रहरी नजरें
दर-ओ-दीवार की लकीरें
अब वह पढ़ने लगी थी।
हवेली की मजबूत दीवारें
अब हिलने लगी थी
वह सजने लगी थी
संवरने लगी थी।
गांव की वह भोली लड़की
उछलने लगी थी।
दरअसल वह लड़की
अब पढ़ने लगी थी।

बची हुई लड़कियां

हंस रही हैं
गा रही हैं,
सपने नए सजा रही हैं

बची हुई लड़कियां.........
लड़ रही हैं,
गिर रही हैं
मर रही हैं आगे बढ़ रही हैं

संभल रही हैं
बची हुई लड़कियां.........
इतिहास में लड़ी हैं
आजादी की कड़ी हैं
आज भी ये बता रही हैं
बची हुई लड़कियां.........
ख्वाब सजा रही हैं
नए नियम बना रही हैं
सपने बना रही हैं
बची हुई लड़कियां.........
नया गीत गुनगुना रही है।
मन की बता रही हैं
जहमतें उठा रही है।
प्रेम रचा रही हैं
बची हुई लड़कियां.........
संस्कृति नई बना रही हैं
हौंसले जता रही हैं
डर रही हैं
सहम रही हैं
बची हुई लड़कियां.........
मन की कह रही हैं
हर बात सुना रही हैं
नए राग रच रही हैं
नए सुर सजा रही हैं
बची हुई लड़कियां.........
शोर मचाएंगी
अपना हक जताएंगी
बची हुई लड़कियां.........

सम्पर्कः 09466290729

●●●

हरियाणा में खेती-किसानी का गहराता संकट

डा. महावीर शर्मा, हिसार

पूरे देश में पिछले दो दशकों से खेती लगातार घाटे का सौदा बनती जा रही है। इसके परिणामस्वरूप खेती-किसानी से जुड़े करोड़ों लोगों का जीवन यापन कर पाना कठिनतम होता जा रहा है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार देश में औसतन हर घंटे 15 किसान आत्महत्या कर रहे हैं। अब तक तीन लाख से भी ज्यादा किसान आत्महत्या कर चुके हैं। गंभीर बात तो यह है कि यह आंकड़ा आधा अधूरा है। बहुत सारी आत्महत्याएं बीमारी आदि के कारण बताकर इसमें नहीं जोड़ी जाती हैं। हरित क्रांति का अग्रणी प्रदेश होने के बावजूद भी वर्तमान में हरियाणा इस संकट का अपवाद नहीं है, बल्कि कई मायनों में तो यहां संकट और भी ज्यादा गहरा है।

हरियाणा में सीधे तौर पर छोटे और मंझले किसान व भूमिहीन लोग ही बंटाई या ठेके पर जमीन लेकर खेती करते हैं। बड़ी जोतों के मालिक ज्यादातर अबसेंटी फार्मर हैं व शहरों में रहते हैं या शहर व गांव दोनों जगह रिहायश बनाए हुए हैं। इसी हिस्से को पिछले 20 वर्षों की सारी सरकारी छूट व नौकरियों का बड़ा हिस्सा मिला है। साथ ही ये वर्ग पक्ष-विपक्ष की सभी राजनीतिक पार्टियों में दबदबा भी रखता है। इसलिए खेती किसानी के संकट से यह अप्रभावित है। वास्तविक रूप से खेती किसानी करने वाले 50 प्रतिशत से भी ज्यादा दलित व पिछड़ी जातियों से संबंधित हैं। बेशक इसमें आधा हिस्सा सवर्ण जातियों के आर्थिक रूप पिछड़े लोग भी हैं। उपरोक्त तथ्य कई बड़े विवादों को जन्म देता है। जैसा कि इस बार यह प्राकृतिक आपदा के कारण बर्बाद हुई फसलों के मुआवजा वितरण के समय जमीन मालिकों और वास्तविक किसानों के अनगिनत झगड़ों के रूप में सामने आया।

हरियाणा 44212 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। 2011 की जनगणनना में इसकी आबादी ढाई करोड़ बताई गई है। पिछले दशक की वृद्धि दर 2.5 प्रतिशत सालाना है। इसी दौरान शहरी आबादी में 6 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है व ग्रामीण आबादी में इतनी ही कमी। इन दोनों कारणों से ही खेती की जमीन गहराई से प्रभावित हुई है। देश की राजधानी दिल्ली के तीन तरफ एनसीआर हरियाणा का है।

पिछले दस सालों में सोनीपत गुड़गांव फरीदाबाद व झज्जर जिलों की खेती लायक जमीन का बड़ा हिस्सा रीयल एस्टेट कम्पनियों, बड़े कार्पोरेट व भू-माफिया ने सरकारों से गठजोड़ करके हथिया लिया है। यह प्रक्रिया अब मेवात, पलवल, करनाल व पानीपत तक भी पहुंच चुकी है। हरियाणा के बाकी हिस्सों में भी बड़े पावर प्लांटस, उद्योग, रिहायशी व प्राईवेट शिक्षण संस्थान, विलासिता स्थल व एक्सप्रेस वे बनाने के लिए बड़े पैमाने पर जमीन का अधिग्रहण किया गया है। सरकार के पास इसका कोई सही आंकड़ा नहीं है। पर एक मोटे अनुमान के अनुसार हरियाणा बनने के बाद से लेकर लगभग एक तिहाई खेती लायक जमीन उपरोक्त कार्यों में चली गई है। इसका एक दूसरा गंभीर प्रभाव यह होता है कि खेती सिंचाई में प्रयुक्त होने वाले पानी का बड़ा हिस्सा उपरोक्त कार्यों में चला जाता है। परिणामस्वरूप जल संकट व भूमिगत जल का अंधाधुंध दोहन। यहां तक कि शीर्ष अदालत को इस दोहन पर रोक लगानी पड़ रही है। इसी पृष्ठभूमि के मद्देनजर ही हरियाणा की खेती की प्रक्रिया का अध्ययन करना उचित रहेगा।

हरियाणा के सिंचित क्षेत्रों में दशकों से गेहूं-धान व गेहूं-अमेरिकन कपास (नरमा) फसल चक्र अपनाया जा रहा है। बरानी इलाकों में ग्वार-बाजरा/सरसों-जौ फसल चक्र अपनाया जाता है। दालों की खेती न के बराबर है। शहरों के नजदीक के कुछ क्षेत्रों में सब्जियों व चारे की खेती होती है। हरित क्रांति की शुरूआत में ही, मुख्य फसलों की उपज बढ़ाने के लिए बौनी किस्में विकसित की गई जो पानी व रासायनिक खाद के इस्तेमाल से भरपूर पैदावार देती हैं। यह सारी प्रक्रिया दो स्तंभों पर टिकी थी। ये हैं एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन व एकीकृत कीट प्रबंधन। इनके मायने हैं सही समय पर सही मात्रा में मुख्य व सूक्ष्म पोषक तत्वों व कीटनाशियों का प्रयोग सुनिश्चित करना। यह जिम्मेवारी डाली गई कृषि विश्वविद्यालय व कृषि-विभाग पर। बड़े स्तर पर टीमें गठित की गई, जिन्हें मिट्टी-पानी आदि की जांच करके फसलानुसार खादों की मात्रा तय करके व उसका डालने का समय, किसानों को समझाना था। साथ ही कीटनाशियों के प्रयोग के मामले में आर्थिक कगार स्तर (ईटीएल) किसानों को समझाना था। यह प्रत्येक फसल में अलग-अलग कीटों की संख्या का औसतन स्तर होता है, जिसको पार करने के बाद ही कीटनाशी का प्रयोग आर्थिक रूप से किसानों के लिए फायदेमंद होता है। वरना कीटनाशियों का छिड़काव केवल पैसे की ही बर्बादी होता है। यह आर्थिक कगार

स्तर सुबह के समय हर खेत में 8-10 पौधों पर पत्तों व अन्य हिस्सों पर कीटों की गिनती करके तय करना होता है। हर फसल का व हर कीट का अलग-अलग आर्थिक कगार स्तर निश्चित है।

असल में हुआ क्या? खाद, बीज व कीटनाशी बनाने वाली कम्पनियों ने (जिनमें से ज्यादातर बहुर्राष्ट्रीय हैं।) युद्धस्तर पर सेल्जमेनों की भर्ती करके व हरियाणा के हर गांव तक अपनी डीलर-नेटवर्क तैयार करके 100 प्रतिशत किसानों तक अपनी पहुंच बनाकर खादों व दवाइयों का अंधाधुंध प्रयोग करवाया। इस तरह इस पूरे कार्यक्रम का अपहरण कर लिया गया और इसे एक शानदार 'बिक्री कैम्पेन' में बदल दिया गया। सरकारी संस्थानों ने इसे रोकने की बजाए इसमें सहयोग का ही रवैया अपनाया। नतीजा, सभी फसलों की पैदावार एक स्तर पर आकर ठहर ही नहीं गई, बल्कि गिरना शुरू हो गई। अंधाधुंध खादों के प्रयोग से विशेषकर यूरिया व डीएपी से भूमि की उर्वरा शक्ति कमजोड़ पड़ गई। भूमिगत जल प्रदूषित हो गया व कीटों का प्रयोग बढ़ गया। इसको रोकने के लिए कीटनाशियों का अंधाधुंध प्रयोग करवाया गया, जिससे पूरी खाद्य श्रृंखला प्रदूषित हो गई। मित्र कीटों व पक्षियों का पूर्णतः सफाया हो गया। मित्र कीटों की अनुपस्थिति में हर दूसरे-तीसरे साल कोई एक कीट महामारी बनने लगा। उदारहणार्थ कपास में 2001 में अमेरिकन सुंडी व 2013 व 2014-15 में सफेद मक्खी, जिससे पूरे-पूरे क्षेत्रों में 80 से 90 प्रतिशत तक फसल बर्बाद हो जाती है। इसका एक बड़ा दुष्परिणाम जल है।

दूध व सब्जियां, फल व अन्य सभी खाद्य पदार्थों के प्रदूषित होने के कारण कैंसर जैसी खतरनाक बीमारी व तेजी से फैलना। एक-एक गांव में कैंसर के सौ-सौ रोगी मौजूद हैं। पशुओं में गंभीर लाईलाज बीमारियां आनी शुरू हो गई है। स्वास्थ्य सेवाओं का निजीकरण होने के बाद कैंसर के इलाज में बड़े पैमाने की लूट हो रही है। लोग लगातार बर्बाद हो रहे हैं।

केवल उपज की मात्रा कम होने की ही बात नहीं है। पिछले एक दशक में कृषि में प्रयोग होने वाली हर चीज का दाम आठ से दस गुणा बढ़ा है। जबकि फसलों के दामों में पिछले चार सालों में ही (गेहूं व परमल धान को छोड़ कर) भारी गिरावट दर्ज की गई है। गेहूं व परमल धान का भी सरकारी खरीद मूल्य बहुत ही कम है। इसे लागत का डेढ़ गुणा करने की बात कही गई थी पर यह लागत के आसपास ही ठहरा हुआ है। इन सारी परिस्थितियों में आमदनी लगातार कम होती गई है व लागत व खर्च बढ़ता ही गया है। परिणामस्वरूप कर्ज का फंदा कसता ही जाता है। फिर यह फंदा प्राकृतिक आपदा या कीटों की महामारी के साल में फांसी के फंदे में बदल जाता है। सरकारें तब फसल बीमे की ठगी व औना-पौना मुआवजे की नौटंकी करती हैं। तब यह सारा घटनाक्रम बहुत ही वीभत्स दृश्य में बदल जाता है।
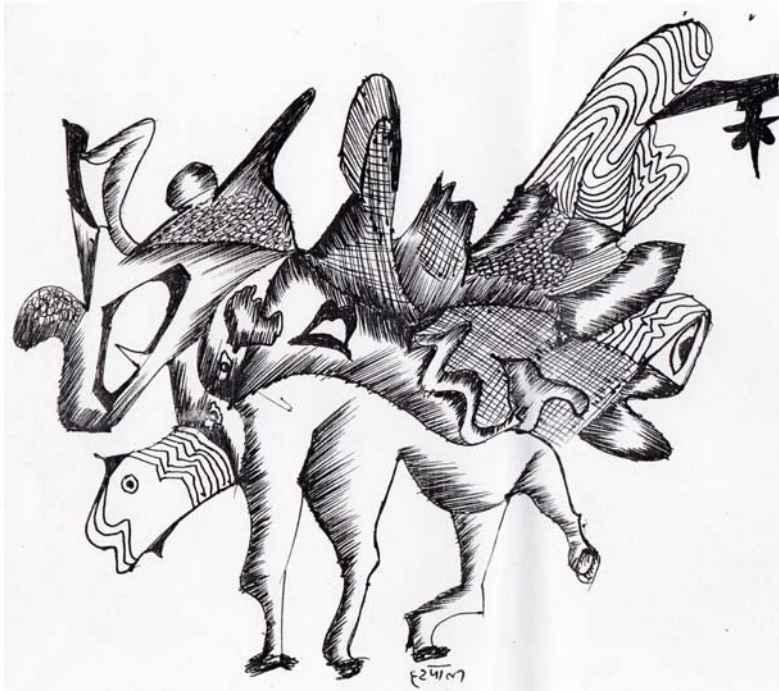
खेती का घाटे का सौदा बनना, नीतियों का मामला है। यह खेती के कारपोरेटीकरण का मामला है। यह एक अंतर्राष्ट्रीय मसला है। इसके मायने हैं, फसल के बीजों, भावों, सबसिडी व तकनीकों का फैसला अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर डब्ल्यूटीओ आदि में होना। भारत में अभी भी आधी आबादी सीधे तौर पर खेती-किसानी से जुड़ी है। यहां उपरोक्त माडल के लागू होने का मतलब होगा 60 करोड़ लोगों का बेरोजगार हो जाना। इतनी बड़ी संख्या को कहां खपाया जाएगा, जबकि दूसरे सभी क्षेत्रों में रोजगार लगातार सिकुड़ता जा रहा है। हरियाणा उपरोक्त माडल के लागू होने की अग्रणी प्रयोगशाला है। भारी संख्या में किसानों को बड़ी रकम के क्रेडिट कार्ड देकर वापस यही पैसा मालों के उपयोग में लगवा लेने की सरकारी योजना इसी साजिश का हिस्सा है। यह एक तरह से बड़े पैमाने पर खेती की जमीनों का जबरन हस्तांतरण साबित होगा।

सम्पर्क : 09253240576

●●●

आलेख

हरियाणा में कीटनाशकों का कहर

रणबीर सिंह दहिया

कीट नाशकों के अनियन्त्रित इस्तेमाल ने हरित क्रांति के दौरान हरियाणा में जमीन, पशुओं और मानव जाति को काफी नुकसान पहुंचाया है। कीटनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग से पर्यावरण से लेकर जनजीवन को होने वाले नुकसान से हम सभी परिचित हैं। पर इसके प्रयोग को लेकर जैसी सावधानी की सरकार से अपेक्षा थी वैसी कहीं देखने में नहीं आ रही है। इन कीटनाशकों की मानव शरीर में जाँच करने की मशीन तक रोहतक के चिकित्सा महाविद्यालय में नहीं है।

कृषि मंत्री शरद पवार ने राज्यसभा में यह स्वीकार किया था कि 67 कीटनाशक जो पूरी दुनिया में प्रतिबंधित और नियंत्रित हैं, भारत में मुक्त रूप से उपयोग किये जा रहे हैं। एक प्रश्न के उत्तर में कृषि मंत्री ने बताया कि एन्डोसल्फान सहित 13 कीटनाशकों को नियंत्रित आयात की अनुमति दी गयी है।

भारत सरकार के कृषि विभाग द्वारा अभी हाल में जारी रिपोर्ट के अनुसार देश भर के विभिन्न हिस्सों में फल, सब्जियों,अण्डों और दूध में कीटनाशकों की उपस्थिति पर किए गए अध्ययन से स्पष्ट हुआ है कि इन सभी में इनकी न्यूनतम स्वीकृत मात्रा से काफी अधिक मात्रा पाई गई है। इस रिपोर्ट के अनुसार सत्र 2008 और 2009 के बीच देश के विभिन्न हिस्सों से एकत्र किए गए खाद्यान्न के नमूनों का अध्ययन देश की 20 प्रतिष्ठित प्रयोगशालाओं में किया गया तथा अधिकांश नमूनों में डी.डी.टी.,लिण्डेन और मानोक्रोटोफास जैसे खतरनाक और प्रतिबंधित कीटनाशकों के अंश इनकी न्यूनतम स्वीकृत मात्रा से अधिक मात्रा में पाए गए हैं। इलाहाबाद से लिए गए टमाटर के नमूने में डी.डी.टी.की मात्रा न्यूनतम् से 108 गुनी अधिक पाई गई है, यहीं से लिए गए भुट्टे के नमूने में प्रतिबंधित कीटनाशक हेप्टाक्लोर की मात्रा न्यूनतम स्वी त मात्रा से 10 गुनी अधिक पाई गई है, उल्लेखनीय है कि हेप्टाक्लोर लीवर और तंत्रिकातंत्र को नष्ट करता है।

गोरखपुर से लिए सेब के नमूने में क्लोरडेन नामक कीटनाशक पाया गया जो कि लीवर, फेफड़ा, किडनी, आँख और केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को नुकसान पहुँचाता है। अहमदाबाद से एकत्रित दूध के प्रसिद्ध ब्रांड अमूल में क्लोरपायरीफास नामक कीटनाशक के अंश पाए गए है यह कीटनाशक कैंसरजन्य और संवेदीतंत्र को नुकसान पहुँचाता हैं।

मुम्बई से लिए गए पोल्ट्री उत्पाद के नमूने में घातक इण्डोसल्फान के अंश न्यूनतम स्वीकृत मात्रा से 23 गुना अधिक मात्रा में मिले हैं। वही अमृतसर से लिए गए फूलगोभी के नमूने में क्लोरपायरीफास की उपस्थिति सिद्ध हुई है।

असम के चाय बागान से लिए गए चाय के नमूने में जहरीले फेनप्रोपथ्रिन के अंश पाए गए जबकि यह चाय के लिए प्रतिबंधित कीटनाशक है।

गेहू और चावल के नमूनों में ऐल्ड्रिन और क्लोरफेनविनफास नामक कीटनाशकों के अंश पाए गए हैं ये दोनों कैंसर कारक है।

इस तरह स्पष्ट है कि कीटनाशकों के जहरीले अणु हमारे वातावरण के कण-कण में व्याप्त हो गए हैं। अन्न, जल, फल, दूध और भूमिगत जल सबमें कीटनाशकों के जहरीले अणु मिल चुके हैं और वो धीरे-धीरे हमारी मानवता को मौत की ओर ले जा रहें हैं। ये कीटनाशक हमारे अस्तित्व के लिए खतरा बन गए हैं। कण-कण में इन कीटनाशकों की व्याप्ति का कारण है आधुनिक कृषि और जीवन शैली। कृषि और बागवानी में इनके अनियोजित और अंधाधुंध प्रयोग ने कैंसर, किडनी रोग, अवसाद और एलर्जी जैसे रोगों को बढ़ाया है। साथ ही ये कीटनाशक जैव विविधता के लिए खतरा साबित हो रहे हैं। आधुनिक खेती की राह में हमने फसलों की

देसा की टेक

एक बार नेताओं से भरी बस देसा के खेत के खंभे से टकराई। टक्कर इतनी जोरदार कि लोग मर भी सकते थे। देसा ने आवाज सुनी तो दौड़ कर वहां पहुंचा।

दो दिन बाद पुलिस नेताओं को खोजते वहां आ पहुंची। वे देसा से नेताओं के बारे में पूछने लगे। देसा ने कहा -- 'मैंने सभी को दफना दिया।'

'क्या सभी मर गए।' पुलिसवाले ने पूछा।

देसा ने कहा कि-- 'कुछ कह रहे थे कि वे नहीं मरे। पर आप तो जानते ही हैं - ये नेता कितना झूठ बोलते हैं।''

कीटों से रक्षा के लिए डी.डी.टी, एल्ड्रिन, मेलाथियान एवं लिण्डेन जैसे खतरनाक कीटनाशकों का उपयोग किया इनसे फसलों के कीट तो मरे साथ ही पक्षी, तितलियाँ फसल और मिट्टी के रक्षक कई अन्य जीव भी नष्ट हो गए तथा इनके अंश अन्न, जल, पशु और हम मनुष्यों में आ गए।

पिछले कुछ समय से पंजाब की खेती फिर से सुर्ख़ियों में है। मुख्य कारण यह भी रहा है कि खेती में रासायनिक खादों और कीटनाशकों की खपत बढ़ती गई। यही नहीं, फिर ऐसे कीटनाशक भी इस्तेमाल होने लगे जो ज्यादा घातक थे। पंजाब में यह सबसे अधिक हुआ है और इसके भयावह नुकसान हुए हैं। इन कीटनाशकों के संपर्क और फसलों में आए उनके असर से कैंसर सहित अनेक गंभीर बीमारियां पनपी हैं। हालत यह हो गई कि पंजाब के मालवा क्षेत्र से राजस्थान की ओर जाने वाली एक ट्रेन को इसलिए 'कैंसर ट्रेन' के नाम से जाना जाने लगा था, क्योंकि सस्ते इलाज के लिए हर रोज इस बीमारी के शिकार लगभग सौ लोग बीकानेर जाते थे। गनीमत है कि इससे संबंधित खबरों में जब यह तथ्य सामने आने लगा कि कीटनाशकों के बेलगाम इस्तेमाल के कारण ही पंजाब के मालवा क्षेत्र में यह स्थिति बनी है, तो राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने इस पर स्वतः संज्ञान लेकर राज्य सरकार को जरूरी कार्रवाई करने के निर्देश दिए। नतीजतन पंजाब सरकार ने सेहत के लिए बेहद खतरनाक साबित हो रहे कीटनाशकों के उपयोग, उत्पादन और आयात पर पाबंदी लगा दी है। गौरतलब है कि पिछले कुछ सालों से पंजाब के बठिंडा, फरीदकोट, मोगा, मुक्तसर, फिरोजपुर, संगरूर और मानसा जिलों में बड़ी तादाद में गरीब किसान कैंसर के शिकार हो रहे हैं। सत्तर के दशक में पंजाब में जिस हरित क्रांति की शुरुआत हुई थी, उसकी बहुप्रचारित कामयाबी की कीमत अब बहुत सारे लोगों को चुकानी पड़ रही है। उस दौरान ज्यादा पैदावार देने वाली फसलों की किस्में तैयार करने के लिए रासायनिक खादों और कीटनाशकों का बेलगाम इस्तेमाल होने लगा। किसानों को शायद यह अंदाजा न रहा हो कि इसका नतीजा क्या होने वाला है। लेकिन क्या सरकार और उसकी प्रयोगशालाओं में बैठे विशेषज्ञ भी इस हकीकत से अनजान थे कि ये कीटनाशक तात्कालिक रूप से भले फायदेमंद साबित हों, लेकिन आखिरकार मनुष्य की सेहत के लिए कितने खतरनाक साबित हो सकते हैं?

विज्ञान एवं पर्यावरण केंद्र, चंडीगढ़ स्थित पीजीआई और पंजाब विश्वविद्यालय सहित खुद सरकार की ओर से कराए गए अध्ययनों में ये तथ्य उजागर हो चुके हैं कि कीटनाशकों के व्यापक इस्तेमाल के कारण कैंसर का फैलाव खतरनाक स्तर तक पहुंच चुका है। लेकिन विचित्र है कि चेतावनी देने वाले ऐसे तमाम अध्ययनों को सरकार ने सिरे से खारिज कर दिया और स्थिति नियंत्रण में होने की बात कही। देर से सही, राज्य सरकार ने इस मसले पर एक सकारात्मक फैसला किया है तो इसका स्वागत किया जाना चाहिए। कीटनाशकों की बाबत किसानों को जागरूक करने के साथ-साथ कैंसर के इलाज को गरीबों के लिए सुलभ बनाने की दिशा में कदम उठाना राज्य सरकार की जिम्मेदारी है।

यह ध्यान रखने की बात है कि कीटनाशक या रासायनिक खाद छिड़कने के जोखिम भरे काम में लगे ज्यादातर लोग दूसरे राज्यों से आए मजदूर होते हैं और उन्हें स्वास्थ्य बीमा या सामाजिक सुरक्षा की किसी और योजना का लाभ नहीं मिल पाता है। पंजाब के अनुभव से सबक लेते हुए देश के दूसरे हिस्सों में भी कीटनाशकों के इस्तेमाल को नियंत्रित करने और खेती के ऐसे तौर-तरीकों को बढ़ावा देने की पहल होनी चाहिए जो सेहत और पर्यावरण के अनुकूल हों।

फसलों में अंधाधुंध प्रयोग किये जा रहे पेस्टीसाइड के कारण दूषित हो रहे खान-पान तथा वातावरण को बचाने के लिए जींद कृषि विभाग में एडीओ के पद पर कार्यरत डा. सुरेंद्र दलाल ने वर्ष 2008 में जींद जिले से कीट ज्ञान की क्रांति की शुरूआत की थी। डा. सुरेंद्र दलाल ने आस-पास के गांवों के किसानों को कीट ज्ञान का प्रशिक्षण देने के लिए निडाना गांव में किसान खेत पाठशालाओं की शुरूआत की थी। डा. दलाल किसानों को प्रेरित करते हुए अकसर इस बात का जिक्र किया करते थे कि किसान जागरूकता के अभाव में अंधाधुंध कीटनाशकों का प्रयोग कर रहे हैं। जबकि कीटों को नियंत्रित करने के लिए कीटनाशकों की जरूरत है ही नहीं, क्योंकि फसल में मौजूद मांसाहारी कीट खुद ही कुदरती कीटनाशी का काम करते हैं। मांसाहारी कीट शाकाहारी कीटों को खाकर नियंत्रित कर लेते हैं। डा. दलाल ने किसानों को जागरूक करने के लिए फसल में मौजूद शाकाहारी तथा मांसाहारी कीटों की पहचान करना तथा उनके क्रियाकलापों से फसल पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में बारीकी से जानकारी दी। पुरुष किसानों के साथ-साथ डा. दलाल ने वर्ष 2010 में महिला किसान खेत पाठशाला की भी शुरूआत की और महिलाओं को भी कीट ज्ञान की तालीम दी।

यह इसी का परिणाम है कि आज जींद जिले में कीटनाशकों की खपत लगभग 50 प्रतिशत कम हो चुकी है और यहां के किसान धीरे-धीरे जागरूक होकर जहरमुक्त खेती की तरफ अपने कदम बढ़ा रहे हैं। आज यहां की महिलाएं भी पुरुष किसानों के साथ मिलकर कीट ज्ञान की इस मुहिम को आगे बढ़ा रही हैं। दुर्भाग्यवश वर्ष 2013 में एक गंभीर बीमारी के कारण डा. सुरेंद्र दलाल का देहांत हो गया था। इससे उनकी इस मुहिम को बड़ा झटका लगा था लेकिन उनके देहांत के बाद भी यहां के किसान उनकी इस मुहिम को बखुबी आगे बढ़ा रहे हैं।

कीटनाशक किस तरीके से शरीर में पहुँचता है ?

1. पानी में कम घुलनशील कीटनाशक वे वसा और कार्बनिक तेलों में आसानी से घुल जाते हैं। आसपास के जल स्रोतों में रहने वाले प्राणियों में और वनस्पति में भी इनके अंश संचित हो जाते हैं और जब ये जीव या वनस्पति दूसरे किसी जीव द्वारा खाये जाते हैं तो ये उनके शरीर की वसा में संचित हो जाते हैं।
2. पानी के जल स्रोतों के माध्यम से।
3. फलों, सब्जियों के माध्यम से
4. भूसे और पशु आहार से पशुओं में और फिर मनुष्य में।
5. हवा के माध्यम से- जब हम छिड़काव करते हैं तो कीटनाशक की छोटी-छोटी बूँदें हवा में मिल जाती हैं। इसी कारण हमें कीटनाशक की महक आती है। जब हम खुली हवा में साँस लेते हैं तो ये बूँदें हमारे फेफड़ों में पहुँच जाती हैं। फिर रासायन फेफड़े की गीली दीवारों से हो कर खून में पहुँच जाता है। इस से बचने के लिए मुँह पर कपड़ा बाँध कर रखें। बिना मुँह ढके छिड़काव का मतलब है ज़हरीले रसायन को पीना।
6. त्वचा के द्वारा। हम सभी जानते हैं कि हमारी त्वचा में छोटे-छोटे छिद्र होते हैं। इन छिद्रों से पसीना एवं तैलीय पदार्थ निकलता है। जब हम शारीरिक मेहनत करते हैं तो शरीर पर पसीने की एक पतली परत बन जाती है। यह परत कीटनाशक के अणुओं को घोल लेती है। फिर हमारी त्वचा इसे सोख लेती है। साँस के माध्यम से भी यह हमारे शरीर में जा सकता है । कभी-कभी कीटनाशक हमारे शरीर पर गिर जाता है। इस से वह और अधिक मात्रा में हमारे शरीर में पहुँच जाता है। हवा की दिशा के विपरीत छिड़काव करते समय खतरा और भी बढ़ जाता है। तब साँस द्वारा भी यह हमारे शरीर में पहुँचने लगता है।

इसलिए हमें शरीर को पूरी तरह ढक कर ही छिड़काव करना चाहिए। ऐसा न करने पर हमारी त्वचा पर अच्छी मात्रा में ज़हर जमा हो जाएगा। इस ज़हर को हमारे शरीर के अन्दर जाने में अधिक समय नहीं लगेगा। एक बात और, हम इस ज़हर को साँस के माध्यम से बाहर नहीं निकाल पाते। इसी तरह त्वचा द्वारा भी इसे शरीर के बाहर (वाष्पीकरण द्वारा) नहीं निकाला जा सकता। दूसरी बात, हमारे शरीर के विभिन्न अंग भिन्न-भिन्न गति से कीटनाशक को सोखते हैं।
7. मुँह द्वारा। हमारे मुँह के रास्ते भी कीटनाशक बहुत जल्दी शरीर में पहुँच सकता है। बहुत से किसान या मज़दूर छिड़काव के दौरान बीड़ी इत्यादि पीते हैं। इस बीच वे पानी पीने या कुछ खाने के लिए भी एक-दो बार रुकते हैं। अगर छिड़काव शाम तक होना है तो वे उसी या बगल वाले खेत में खाना भी खाते हैं।

छिड़काव वाले खेत के आसपास काफ़ी मात्रा में कीटनाशक जमा हो जाते हैं। जहाँ सीधे छिड़काव नहीं किया जाता वहाँ भी कीटनाशक की सफ़ेद परत पौधों की पत्तियों पर देखी जा सकती है। उसी तरह की सफ़ेद परत वहाँ की सभी वस्तुओं पर जमी रहती है। इन में बरतन या खाने का सामान भी हो सकता है। अगर पानी खुला रखा है तो कीटनाशक के कुछ कण उस में भी घुल जाते हैं।

इसलिए खेत के पास खाते-पीते या धूम्रपान करते हुए हम ज़रूर कुछ कीटनाशक खा लेते हैं। बिना नहाए-धोए खाने-पीने से भी उस का कुछ भाग हमारे शरीर में पहुँच जाता है। धूम्रपान करते हुए या कुछ खाते हुए छिड़काव करने वालों को तो ईश्वर ही बचाये।
8. बर्तन एवं कपड़ों से। छिड़काव के बर्तन, बाल्टी एवं उपकरण भी होता है, जिस से दिन में काम किया है। कीटनाशक शरीर पर, कपड़ों पर, बर्तनों तथा उपकरणों पर चढ़े हुए हैं।

परिणाम यह है कि जनस्वास्थ्य के प्रति सतर्क कई विकसित देश तो हमारे फल-सब्जियों के निर्यात पर पाबंदी लगाने जैसे कदम भी उठा रहे हैं। इसके बावजूद हमारे देश में वैसी सतर्कता और चेतना देखने को नहीं मिल रही है जैसी कि इतने संवेदनशील मुद्दे पर अपेक्षित है। क्या है समस्या और कैसे हो इस का हल ? हमें समय रहते चेतना होगा ।

कीटनाशकों से होने वाली बीमारियां-

कीटनाशकों के प्रयोग से मनुष्य कई प्रकार की बीमारियों की चपेट में आ सकता है। सबसे प्रमुख है - इम्यूनोपैथोलोजिकल इफैक्टस-आटो इम्युनिटी,अक्वायरड इम्युनिटी,हाईपर सैंसिविटी के स्तर पर विकार अलग अलग ढंग से, कारसिनोजैनिक इफैक्ट, मुटाजेनिसिटी, टैटराजैनिसिटी, न्यूरोपैथी, हैपेटोटोक्सीयिसटी, रिपरोडक्टिव डिस्आर्डर, रिकरैंट इन्फैक्सन्ज। इन पर यहां विस्तार से चर्चा न करके कुछ बीमारियों के बारे चर्चा की जा रही है।

1- तीव्र विषाक्तता (एक्यूट प्वायजनिंग)ः
इसमें कीटनाशक प्रयोग करने वाला व्यक्ति ही इसकी चपेट में आ जाता है। इनके प्रभाव में आने के तुरन्त बाद या 24 घण्टे के अन्दर इनके कुप्रभाव सामने आने लगते हैं। कितना गहरा असर होगा यह कीटनाशक की मात्रा पर भी निर्भर करता है। हमारे देश में तो यह समस्या काफी देखने में आती है। इसमें सिर दर्द होना, जी मितलाना,चक्कर आना, पेट में दर्द, चमड़ी और आंखों में परेशानी, बेहोश हो जाना व मृत्यु तक शामिल हैं।

2 - क्रोनिकः असर लम्बे समय तक कीटनाशक के शरीर में इकट्ठे होते जाने के कारण होते हैं। कीटनाशक के प्रयोग से होने वाली दूसरी बड़ी बीमारियां हैं

कैंसर : विशेष रूप से खून और त्वचा के कैंसर इस कारण से काफी देखने में आते है। इनके प्रभाव में आने वाले लोगों में दिमाग के, स्तनों के, यकृत-जिगर-लीवर के, अगनश्य- पैंर्कियाज के, फेफड़ों-लंग्ज के कैंसर का रिस्क बढ़ जाता है।

लगभग 20 प्रतिशत खाद्य पदार्थों में भारत में कीटनाशकों के अवशेष की मात्रा टोलरेंस लेवल से ज्यादा पाई गई है। जबकि अन्तराष्ट्रीय स्तर पर यह 2 प्रतिशत ही है। महज 49 प्रतिशत भारतीय खाद्य पदार्थों में नो डिटैक्टेबल रेजिड्यू पाये गये जबकि अन्तराष्ट्रीय स्तर पर यह प्रतिशत 80 का था।

मेरे तीस पैंतीस साल के अनुभव मुझे यह सोचने पर मजबूर करते रहे कि पेट दर्द की लम्बी बीमारी जहाँ बाकी सभी टेस्ट नार्मल आते हैं उन मरीजों में पेट दर्द का कारण ये कीटनाशक ही होते हैं। रिसर्च के लिये सुविधा न होने के कारण मेरा ये मिशन पूरा नहीं हो सका।

कैंसर के मरीजों की संख्या बढ़ती जा रही है

वर्ष	2011	2012	2013	2014
	मरीज/मौत	मरीज/मौत	मरीज/मौत	मरीज/मौत
उतर प्रदेश	170013/74806	175404/77178	180945/79616	186638/82121
पंजाब	23506/10343	24006/10563	24512/10785	25026/11011
हरियाणा	21539/9477	22122/9734	22721/9998	23336/10268
चण्डीगढ़	893/393	915/403	937/413	960/423
जम्मू कश्मीर	10668/4703	11052/4863	11428/5028	11815/5198
हिमाचल	5836/2568	5966/2625	6097/2683	6230/2741
उत्तराखंड	8663/3798	8899/3916	9173/4037	9455/4160

स्रोतः केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय की और से लोक सभा में 11जुलाई 2014 को पेश की गई रिपोर्ट

इसके अलावा श्वांस संबंधी बीमारियां और शरीर के अपने डिफेंस तंत्र के कमजोर होने की समस्या इसके कारण काफी देखने में आती है। कई बार यह नर्वस प्रणाली को चपेट में ले लेता है। इसी प्रकार चमड़ी की बीमारियां भी इनके प्रभाव के कारण ज्यादा होती हैं। नपुंसकता की संभावना बढ़ जाती है।

मां की औरनाल के रास्ते गर्भ में बच्चे में ये कीटनाशक प्रवेश पा जाते हैं और जन्म जात विकृतियों का रिस्क बढ़ जाता है खासकर तंत्रिका तंत्रिका-नरवस सिस्टम के।

इसी प्रकार पारकिन्सोनिज्म बीमारी का रिस्क 70 प्रतिशत बढ़ जाता है। बच्चों में अग्रेसिवनैस बढ़ने का कारण भी हो सकते हैं। किसानों में आत्म हत्याएं करने की मानसिकता पैदा करने में भी इनके कुप्रभावों की भूमिका हो सकती है।

कीटनाशकों के कारखानों, घर में, खाने में, पानी में, पशुओं में मौजूद कीटनाशक हमारे शरीर में पहुंच कर हमारे फैट में, खून में इकट्ठा होते रहते हैं और नुकसान पहुंचाते हैं। स्टॉक होम कन्वैंसन ऑन परसिस्टैंट आरगेनिक पोलुटैंटस के मुताबिक 12 में से 9 खतरनाक और परसिस्टैंट कैमिकल ये कीटनाशक हैं। कई सब्जियों और फलों में धोने के बावजूद कीटनाशकों के अवशेष पाये गये हैं। अंडों में, मीट में, भैंस और गाय के दूध में भी इन कीटनाशकों के अवशेष पाये गये हैं।आज कल के बच्चों में बढ़ता अग्रेसिव एटीच्यूड व किसानों में बढ़ती आत्महत्या की मानसिकता में भी इन कीटनाशकों के अवशेषों की भूमिका देखी जा रही है।

कीटों और सूक्ष्म जीवों को मारने में प्रयुक्त होने वाला कीटनाशक मूल रूप से यह जहर ही है। अगर कीटनाशकों का दुरूपयोग किया जा रहा है तो इसके बहुत गंभीर परिणाम हो सकते हैं। यह उन सभी के लिए हानिकारक होता है जो कि इसके संपर्क में आता है। किसान-कम-उपभोक्ता, जानवर सभी के लिए यह नुकसानदेह हो सकता है। इसलिए कीटनाशकों के इस्तेमाल पर सवालिया निशान खड़े हो गए हैं। उपयोग तभी किया जाना चाहिए जबकि उनकी जरूरत हो। भारत के कुछ क्षेत्रों जैसे हरियाणा, पंजाब, पश्चिमी उत्तरी प्रदेश, आंध्रप्रदेश से विशेषरूप से कीटनाशकों का अधिक प्रयोग करने की खबरें आ रही हैं।

कीटनाशकों के उपयोग का सबसे बेहतर तरीका यह है कि उनका इस्तेमाल 'इंटीग्रेटिड पेस्ट मैनेजमेंट' के अंतर्गत किया जाए। अर्थात कीटनाशकों का प्रयोग कीट नियंत्रण के अन्य उपायों के साथ एक उपाय के रूप में किया जाए। एकमात्र उपाय के रूप में नहीं किया जाए। भारत में यह देखने में आता है कि अधिकांश लोग कीट नियंत्रण के लिए कीटनाशकों पर निर्भर हो गए हैं। प्रायः तब भी कीटनाशकों का छिड़काव कर दिया जाता है जबकि उनकी जरूरत ही न हो। जबकि कीटनाशकों को प्रयोग तब होना चाहिए जबकि ऐसा लगे कि फसल में कीट लगना बढ़ सकता है। इसके साथ ही गैर रासायनिक जैविक कीटनाशकों के प्रयोग को भी प्राथमिकता देने की जरूरत है।

सम्पर्कः 09812139001

रिपोर्ट

पानीपत थर्मल प्लांट का पास-परिवेश

-आशु वर्मा/अंशु मालवीय

पानीपत थर्मल प्लांट के सामने से गुजरते समय अक्सर दैत्याकार चिमनियां और उनसे निकलता धुआं, दूर तक फैली राख की पहाड़ियां और बंजर खेत, धूल और फैली राख से अटी बस्तियां, गर्द से सने पेड़, उदास और बेरौनक दुकानें ध्यान खींचती थी। जवाहर लाल नेहरू ने जिन बड़े सार्वजनिक प्रतिष्ठानों को आधुनिक युग के मंदिर और 'कमांडिंग हाइट्स' कहा था, उन्हीं में से एक, इस प्लांट के आसपास की हवा इतनी बोझिल क्यों महसूस होती है? हवा में एक घुटन क्यों तारी रहती है? क्या वास्तव में यह 'आधुनिक भारत के मंदिर' ही हैं? मन में प्रश्न उठता कि अगर ये मंदिर हैं तो देश के तमाम जगहों में बन रहे पावर प्लांटों के खिलाफ आंदोलन क्यों चल रहे हैं? और लोगों का विरोध कहां तक उचित है? इन्हीं बातों को जानने-समझने और अपनी आंखों से देखने हम पानीपत थर्मल प्लांट गए और उसके आसपास के गांवों के लोगों से बातचीत की। अमर उजाला, पानीपत के पत्रकार श्री प्रीतपाल ने इस काम में हमारी बहुत मदद की। उनके हवाले से जो जानकारियां हमें मिलीं वह परेशान करने वाली हैं।

यह प्लांट 1974 में 110 मेगावाट बिजली उत्पादन के साथ शुरू हुआ और आज यहां 1368 मेगावाट बिजली का उत्पादन हो रहा है, प्लांट का परिसर 2182 एकड़ में फैला हुआ है, जिसमें से प्लांट से निकलने वाली राख के लिए 900 एकड़ जमीन में तालाब (ऐश पौण्ड) बना हुआ है। इस पौण्ड की गहराई 25 मीटर है। बिजली उत्पादन के लिए इस प्लांट में रोज 20,000 टन कोयला लगता है जो धनबाद (झारखंड) और इंडोनेशिया से मंगवाया जाता है। इस 20,000 टन कोयले से 17,000 टन राख बनती है जिसे पानी के साथ पाइपों के जरिए ऐश पौण्ड में डाला जाता है। दशकों से लगातार राख और पानी बहाए जाने से मीलों तक फैला भयानक दलदल बन गया है जो पानी की तलाश में आए जानवरों को लील जाता है। राख के साथ पानी मिलाए जाने से आसपास के लगभग दस गांवों का भूजल स्तर शून्य हो गया है। फसलें खराब हो जाती हैं, मकानों में भयंकर सीलन है और रेह, सेम या नूनी जमी रहती है। काफी सारे मकानों में दरार आई हुई है। नए मकान भी ज्यादा दिन नहीं बच पाते। लोग दहशत-भरा जीवन जी रहे हैं। प्रीतपाल जी ने खुखराना गांव का सरकारी स्कूल दिखाया, जो बेहद जर्जर हालत में था। दीवारों में भयंकर सीलन थी, ईंटें झड़ी हुई थी। एक अजीब सी मनहूसियत पूरे प्रांगण में पसरी हुई थी। जमीन के नीचे पड़े हुए पानी के पाईप की चूड़ी बंद थी, फिर भी लगातार पानी बह रहा था। हमें बताया गया कि भूजल के शून्य स्तर पर होने के कारण पानी बहुत ऊपर आ गया है। बहुत से खेत अधिक पानी के कारण खराब हो गए हैं।

प्लांट से लगातार निकलने वाली राख के कारण 25 मीटर गहरा राख का तालाब भरते-भरते अब जमीन की सतह तक पहुंचा है। आसपास के गांवों में लगातार राख उड़-उड़ कर आती रहती है और जब हवा चलती है तब खुखराना, सुताण, आसन, लुहारी, जाटकलां और अन्य गांव राख से ढंक जाते हैं। यह राख दस किलोमीटर के दायरे में उड़ कर जाती है और आपके कपड़े, शरीर, मुंह, फेफड़े, मकान, पशु सब को अपनी गिरफ्त में ले लेती है। हर जगह राख ही राख होती है। कोई बाहर सो नहीं सकता।

लोगों ने बताया कि विश्व बैंक ने पहले राख के प्रबंधन के लिए पैसा दिया था, पर उसका इस्तेमाल नहीं किया गया। अब तो इस मद में कोई पैसा भी नहीं आता। राख से सीमेंट बनाने के लिए जेपी सीमेंट की फैक्टरी लगी है, पर उसमें रोज निकलने वाली 1700 टन राख में से मात्र 200 टन ही इस्तेमाल होती है। पहले ईंट भट्ठे कुछ राख लेते थे, पर ईंट की गुणवत्ता खराब हो जाने से उन्होंने राख लेना बंद कर दिया। अब मुफ्त देने पर भी वे नहीं लेते।

इस राख के कारण टी.बी. से आसपास के गांवों के लगभग 40 लोगों की मौत हो चुकी है। खुखराना के एक सरपंच की मौत भी टी.बी. से ही हुई थी - खुखराना के नंबरदार ने एलर्जी से खराब हुआ अपना हाथ दिखाया। आसपास के गांवों के 80 प्रतिशत लोग दमा, एलर्जी, टीबी या आंख के रोगी हो चुके हैं। पहले कभी इन गांवों में मेडिकल कैंप लगते थे और प्लांट से डाक्टर आते थे, पर अब धीरे-धीरे यह सब बंद हो गए हैं। उच्च न्यायालय का आदेश था कि यहां के बाशिंदों की हर हफ्ते जांच होनी चाहिए, कुछ दिनों तक जांच हुई, पर थोड़े समय बाद वह भी बंद हो गई। गांवों के उप स्वास्थ्य केंद्र में शायद ही कोई दवाई मिलती है। लोगों के स्वास्थ्य और जीवन को किस्मत के भरोसे छोड़ दिया गया है।

लोगों ने बताया कि लगातार बीमार रहने के कारण अब एक बीमारी ठीक होने से पहले दूसरी बीमारी पकड़ लेती है। इस

इलाके में मलेरिया और टाईफाईड आम है। पहले पीने का टैंकर आता था, अब वह भी आना बंद हो गया है। हैंडपंपों से शोरायुक्त पानी आता है। जिन लोगों की आर्थिक हालत थोड़ी ठीक है, उन्होंने तो आर.ओ. लगवा लिए हैं। पर गरीब तो वही पानी पी रहे हैं, जो प्लांट से निकल कर ऐश पौण्ड में जाता है और सीपेज के द्वारा पंपों तक पहुंच जाता है। सुताना गांव में कोई अपनी लड़की की शादी नहीं करना चाहता। लोगों ने बताया कि प्लांट लगने के बाद सरकार की ओर से आसपास के लोगों के स्वास्थ्य या उनकी दूसरी समस्याओं का पता लगाने के लिए कभी कोई सर्वे नहीं करवाया गया।

लोगों का कहना था कि फसलों पर धूल की परत जमा रहती है और बाजार में उसके दाम कम मिलते हैं। मार्च - अप्रैल में जब फसलों की कटाई होती है, तब राख की आंधी के कारण खुखराना और जाट कलां गांवों में कटाई के लिए मजदूर नहीं मिलते। खुखराना गांव के लोगों ने बताया कि प्लांट के लिए जब सरकार यह जमीन ले रही थी, तो यहां के बाशिंदों और किसानों को आने वाले समय मे यहां के पर्यावरण और लोगों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले इन दुष्प्रभावों के बारे में नहीं बताया गया था।

किसानों को यह अफसोस है कि आज उनके जिन खेतों की कीमत एक करोड़ प्रति एकड़ है, वह उनसे बेहद सस्ते दामों पर ली गई थी। 1970 में बहुत सारे किसानों को मात्र 580 रुपए तो कुछ को 2000 रुपए प्रति एकड़ जमीन का मुआवजा मिला। 1977 में 8000 रुपए और 1990 में 70000 रुपए प्रति एकड़ जमीन की कीमत मिली। आज किसान अपनी जमीनों से भी हाथ धो बैठे हैं और स्वास्थ्य से भी। अपने बच्चों को देने के लिए उनके पास बीमारियों के अलावा कुछ भी नहीं है। कुछ लोगों को तो मुआवजा भी नहीं मिला। लोगों ने बताया कि एमरजैंसी के समय जमीन ली गई। पहले हमने पैसे लेने से इन्कार किया था। फिर ले ली। पहले जेसीबी नहीं थी। सबको काम मिल जाता था। आज प्लांट में भी जिन्हें काम मिला है, उनकी संख्या ज्यादा नहीं है।

खुखराना गांव के मौजूदा सरपंच ने बताया कि गांव वालों ने उच्च न्यायालय में मुकद्दमा लड़ा कि स्वास्थ्य कारणों से उन्हें कहीं और बसाया जाए। मुकद्दमे के लिए भी उन्हें अपना वकील करना पड़ा, ताकि कोई गड़बड़ी न हो जाए। फैसला आए भी दस साल बीत चुके हैं कि इस गांव को विस्थापित कर अब पास के सौदापुर गांव में बसाना है, अभी तक न तो उन्हें सौदापुर में बसाया गया है और न ही किसी प्रकार की ग्रांट सरकार की ओर से मिल रही है। इसके विरोध में कई गांवों की महापंचायत भी हो चुकी है। दूसरे, सरकार ने गांव में बसाने के लिए सिर्फ 54 एकड़ जमीन ही तय की है। बहुत सारी जमीन, मसलन पंचायती जमीन के कुछ हिस्सों को छोड़ दिया गया है। लाल डोरे के अंदर की जमीन का ही मुआवजा तय हुआ है। गांव का कुल मुआवजा 1.5 लाख प्रति एकड़ निर्धारित किया गया है।

खुखराना, सुताना और आसपास के दस गांव के लोग देश की राजधानी दिल्ली की जगमगाहट के बदले अपने पुरखों की जमीन खो बैठे हैं। खुद तिल-तिलकर मर रहे हैं और विरासत में अपने बच्चों को अंधकारमय भविष्य देने को अभिशप्त हैं। ये विकास के ऐसे भयानक मॉडल का शिकार हो गए हैं जिसमें आम मनुष्य के जीवन की कोई कद्र नहीं और जो आम आदमी के जीने के अधिकार तक को चोट पहुंचाता है। जो लोगों को अपनी जगह जमीन से उखाड़ देता है और पर्यावरण का भयानक विनाश करता है। यह मॉडल पहले लुभावने सपने दिखाता है और फिर आसपास के प्रभावित लोगों को बीच भंवर में छोड़ कर उन्हें पूरी तरह लाचार बना देता है।

नेहरू के 'आधुनिक युग के मंदिर' तो फिर भी सार्वजनिक क्षेत्र के अधीन थे। उनके लिए सरकार जवाबदेह थी। आज निजीकरण और उदारीकरण के दौर में निजी पूंजी को लूट की खुली छूट है और उसके मार्ग में आने वाली हर कानूनी अड़चन को हटाया जा रहा है, चाहे भूमि अधिग्रहण कानून हो, श्रम कानून हो या पर्यावरण संबंधी कानून, सबको विकास दर के आगे कुर्बान किया जा रहा है। इस नए दौर में विकास के इस विनाशकारी मॉडल की कितनी भारी कीमत चुकानी पड़ेगी, इसका अनुमान लगाना मुश्किल है।

●●●

देसा की टेक

ईश्वर का भय दिखाकर अपना धंधा चमकाने वाले धर्म के धंधेबाज अपने को ज्ञानी घोषित करते रहे और दूसरों को बेवकूफ।
देसा ने उनकी शिकायत की। देसा को सफाई देने के लिए कहा।
मुल्ला ने कहा, 'इन सभी को कागज और पेन दिया जाए, जिससे ये मेरे प्रश्न का जवाब लिख दें।'
इन सभी को कागज और पेन दे दिए, तब देसा ने सवाल पूछा, 'रोटी का मतलब क्या?'
सभी लोगों ने अपना-अपना उत्तर लिखकर जज को कागज पकड़ा दिए। जज ने जवाब पढ़े। पहले ने लिखा था! 'रोटी एक खाद्य है।' दूसरे ने लिखा था, 'पानी में गूंथे आटे को चकले पर बेलकर बनाया गया एक पदार्थ है।' तीसरे ने लिखा था, 'रोटी ईश्वर का वरदान है।' चौथे ने लिखा था, 'रोटी का मतलब मूर्ख को छोड़ कर सभी जानते हैं।' पांचवें ने लिखा था, 'रोटी का सही अर्थ मुश्किल है'
पांचों का जवाब जानकर देसा ने कहा, 'जिस चीज को ये रोज देखते हैं, खाते हैं, उसका अर्थ भी इन सबने अलग-अलग बताया है। फिर जिस ईश्वर को इन्होंने कभी देखा ही नहीं, उसके बारे में ये लोग कैसे बता सकते हैं। अब बताइए क्या इस तरह ये लोगों को ईश्वरीय ज्ञान के नाम पर बेवकूफ नहीं बनाते।

नवजागरण के अग्रदूत

मौलाना अल्ताफ हुसैन 'हाली' पानीपती

सुभाष चंद्र

शायरों के हैं सब अन्दाज़े-सुख़न देखे हुए
दर्दमन्दों का टुकड़ा और बयां सबसे अलग
माल है नायाब पर गाहक हैं अक्सर बेख़बर
शहर में खोली है 'हाली' ने दुकां सबसे अलग

नवजागरण के अग्रदूत मौलाना अल्ताफ हुसैन 'हाली' हरियाणा के ऐतिहासिक शहर पानीपत के रहने वाले थे। 'हाली' उर्दू के शायर व प्रथम आलोचक के तौर पर प्रख्यात हैं। हाली का जन्म 11 नवम्बर 1837 ई. में हुआ। इनके पिता का नाम ईजद बख्श व माता का नाम इमता-उल-रसूल था। जन्म के कुछ समय के बाद ही इनकी माता का देहान्त हो गया। हाली जब नौ वर्ष के थे तो इनके पिता का देहान्त हो गया। 1856 में हाली ने हिसार जिलाधीश के कार्यालय में नौकरी कर ली। 1857 के स्वतंत्रता-संग्राम के दौरान अन्य जगहों की तरह हिसार में भी अंग्रेजी-शासन व्यवस्था समाप्त हो गई थी, इस कारण उन्हें घर आना पड़ा। दिल्ली निवास (1954-1956 के दौरान हाली के जीवन में जो महत्त्वपूर्ण घटना घटी वह थी उस समय के प्रसिद्ध शायर मिर्जा गालिब से मुलाकात व उनका साथ। हाली ने जब गालिब को अपने शेर दिखाए तो उन्होंने हाली की प्रतिभा को पहचाना व प्रोत्साहित करते हुए कहा कि 'यद्यपि मैं किसी को शायरी करने की अनुमति नहीं देता, किन्तु तुम्हारे बारे में मेरा विचार है कि यदि तुम शे'र नहीं कहोगे तो अपने हृदय पर भारी अत्याचार करोगे'।

1863 में नवाब मुहमद मुस्तफा खां शेफ़्ता के बेटे को शिक्षा देने के लिए हाली जहांगीराबाद चले गए। इसके बाद हाली को रोजगार के सिलसिले में लाहौर जाना पड़ा। वहां पंजाब गवर्नमेंट बुक डिपो पर किताबों की भाषा ठीक करने की नौकरी की। हाली के जीवन में असल परिवर्तन यहीं से हुआ। 1874 में 'बरखा रुत' शीर्षक पर मुशायरा हुआ, जिसमें हाली ने अपनी कविता पढ़ी। यह कविता हाली के लिए और उर्दू साहित्य में सही मायने में इंकलाब की शुरूआत थी। अब हाली का नाम उर्दू में आदर से लिया जाने लगा था। चार साल नौकरी करने के बाद ऐंग्लो-अरेबिक कालेज, दिल्ली में फारसी व अरबी भाषा के मुख्य अध्यापक के तौर पर कार्य किया। 1885 ई. में हाली ने इस पद से त्याग पत्र दे दिया।

हाली ने अपनी शायरी के जरिये ताउम्र अपने वतन के लोगों के दुख तकलीफों को व्यक्त करके उनकी सेवा की। वे शिक्षा व ज्ञान को तरक्की की कुंजी मानते थे। उन्होंनें अपने लोगों की तरक्की के लिए पानीपत में स्कूल तथा पुस्तकालय का निर्माण करवाया। पानीपत में आज जो स्कूल आर्य सीनियर सेकेण्डरी स्कूल के नाम से जाना जाता है पहले यह 'हाली मुस्लिम हाई स्कूल' था, जो देश के विभाजन के बाद आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब को क्लेम में सौंप दिया गया था। शिक्षा के प्रति उनकी प्रतिबद्धता को देखते हुए 1907 में कराची में 'आल इण्डिया मोहम्डन एजुकेशनल कान्फ्रेंस' में हाली को प्रधान चुना गया। हाली की विद्वता को देखते हुए 1904 ई. में 'शमशुल-उलेमा' की प्रतिष्ठित उपाधि दी गई, यह हजारों में से किसी एक को ही हासिल होती थी। आखिर के वर्षों में हाली की आंख में पानी उतर आया, जिसकी वजह से उनके लेखन-पाठन कार्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा। 31 दिसम्बर,1914 ई. को हाली इस दुनिया को अलविदा कह गए। शाह कलन्दर की दरगाह में हाली को दफ़ना दिया गया।

हाली ने कविताओं के अलावा आलोचना की पुस्तक 'मुकद्दमा-ए-शेरो शायरी', कवि सादी की जीवनी 'हयाते सादी', सर सैयद की जीवनी 'हयाते जावेद' तथा गालिब की जीवनी 'यादगारे गालिब' की रचना की। कविताओं में 'मुनाजाते बेवा', 'बरखा रुत', 'हुब्बे वतन', तथा 'मुसद्दस-ए- हाली' बहुत लोकप्रिय हैं।

जीवन के छोटे-छोटे से दिखने-लगने वाले पक्षों पर उन्होंने कविताएं लिखी और उनमें व्यावहारिक-नैतिक शिक्षा मौजूद है। मनुष्य के लिए क्या उपयुक्त है और क्या नहीं इस बात पर विचार करते हुए उन्होंने अपनी बेबाक राय दी है। फिर विषय चाहे

साहित्य में छन्दों-अंलकारों के प्रयोग का हो या जीवन के किसी भी पहलू से जुड़ा हो। 'चण्डूबाजी के अंजाम', 'कर्ज लेकर हज को न जाने की जरूरत', 'बेटियों की निस्बत', 'बड़ों का हुक्म मानो', 'फलसफ-ए-तरक्की', 'हकूके औलाद' आदि बहुत सी कविताएं हैं, जिनमें हाली की सीख उन्हें अपने पाठक का सलाहकार दोस्त बना देती है।

हाली हिन्दुस्तान के उन शायरों में से हैं जिन्होंने साहित्य में आधुनिक मूल्यों, विचारों को अपने साहित्य की विषयवस्तु बनाया। मौलाना हाली ने इस बात को पहचाना कि स्त्री को अपनी गुलाम बनाने के लिए पितृसत्तावादी व वर्चस्वी वर्ग ने उसको शक्ति के स्रोत ज्ञान, संपति व बल से दूर कर दिया। स्त्री को इनसे वंचित करके ही पुरूष उस पर अपना शासन कायम कर सका है, इसलिए पुरूष ने स्त्री को ज्ञान से दूर रखने के लिए इस बात का आक्रामक प्रचार किया कि वह इसे प्राप्त करने के काबिल ही नहीं है।

हाली के लिए देश-प्रेम कोई अमूर्त अवधारणा नहीं है। उनके देश-प्रेम की परिभाषा इतनी व्यापक है कि उसमें अपने वतन के पेड़ पौधे, पशु-पक्षी, व वनस्पति सब कुछ के प्रति प्रेम शामिल है। देश-सेवा को उसकी सीमा की रक्षा तक ही सीमित नहीं किया जा सकता। हाली के लिए देश-प्रेम व देश-सेवा का अर्थ देश की जनता के जीवन में आ रही कठिनाइयों को दूर करने से था। देश-कौम की चिंता ही हाली की रचनाओं की मूल चिंता है। कौम की एकता, भाईचारा, बराबरी, आजादी व जनतंत्र को स्थापित करने वाले विचार व मूल्य हाली की रचनाओं में मौजूद हैं।

भारत में हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, फारसी, जैन, बौद्ध आदि सभी धर्मों को मानने वाले व विभिन्न भाषाएं बोलने वाले लोग रहते है। धार्मिक बहुलता भारतीय समाज की विशेषता है, भारत की एकता व अखंडता के लिए धर्मनिरपेक्षता निहायत जरूरी है। हाली के लिए मानवता की सेवा ही ईश्वर की भक्ति व धर्म था। वे कर्मकाण्डों की अपेक्षा धर्म की शिक्षाओं पर जोर देते थे। वे मानते थे कि धर्म मनुष्य के लिए है न कि मनुष्य धर्म के लिए। जितने भी महापुरूष हुए हैं वे यहां किसी धर्म की स्थापना के लिए नहीं, बल्कि मानवता की सेवा के लिए आए थे। इसलिए उन महापुरूषों के प्रति सच्ची श्रद्धा मानवता की सेवा में है न कि उनकी पूजा में। यदि धर्म से मानवता के प्रति संवेदना गायब हो जाए तो उसके नाम पर किए जाने वाले कर्मकाण्ड ढोंग के अलावा कुछ नहीं हैं, कर्मकाण्डों में धर्म नहीं रहता।

हाली ने तत्कालीन साहित्य की प्रमुख धारा की आलोचना की। हाली ने सचेत तौर पर पुरानी परम्परा से पीछा छुड़ाया। हाली ने लिखा कि ''शायरी की बदौलत चन्द रोज झूठा आशिक बनना पड़ा, एक ख्याली माशूक की चाह में बरसों दशते-जूनू की वह खाक उड़ाई, कैस व फरहाद को गर्द कर दिया। कभी नालय नीमशबी से रबेमसकन को हिला डाला, कभी चश्मे-दरियावार से तमाम आलम को डुबो दिया। आहोफुंगा के जोर से कर्रोवया के कान बहरे हो गये। शिकायतों की बौछार से जमाना चीख उठा। तानों की मार से आसमान छलनी हो गया। जब रश्क का तलातुम हुआ तो सारी खुदाई को रकीब समझा। यहां तक आप अपने से बदनुमा न हो गये। बारहा तेगेअब्रू से शहीद हुए और बारहा एक ठोकर से जी उठे। गोया जिन्दगी एक पैहरन था कि जब चाहा उतार दिया और जब चाहा पहन लिया। मैदाने कयामत में अक्सर गुजर हुआ। बहिश्त व दोजख की अक्सर सैर की। बादानोशी पर तो खुम-के-खुम लुढ़का दिये और फिर भी सैर न हुए।

कुफ्र से मानूस और ईमान से बेजार रहे, खुदा से शोखियां की, बीस बरस की उम्र से चालीस बरस तक तेली के बैल की तरह इसी चक्कर में पिफरते रहे और अपने नजदीक सारा जहां तय कर चुके। जब आंख खुली मालूम हुआ, कि जहां से चले थे, अब तक वहीं हैं।

निगाह उठाकर देखा तो दांए-बांए, आगे-पीछे एक मैदाने-वसीअ नजर आया, जिनमें बेशुमार राहें चारों तरफ खुली हुई थी और ख्याल के लिए कहीं रास्ता तंग न था। जी में आया कि कदम बढ़ायें और उस मैदान की सैर करें। मगर जो कदम बीस बरस से एक चाल से दूसरी चाल न चले हों और जिनकी दौड़ गज-दो-गज जमीन में महदूद रही हो, उनसे इस वसीअ-मैदान में काम लेना आसान नहीं था। इसके सिवा बीस बरस बेकार और निकम्मी गर्दिश में हाथ-पांव चूर हो गए थे और ताकते-रफतार जवाब दे चुकी थी, लेकिन पांव में चक्कर था, इसलिए बैठना दुश्वार था। जमाने का नया ठाठ देखकर पुरानी शायरी से दिल सैर हो गया था और झूठे ढकोसले बांधने से शर्म आने लगी थी। न यारों के उभारों से दिल बढ़ता था न साथियों के रोष से कुछ जोश आता था।''

जनता के जीवन से जुड़ने की इस बेचैनी ने ही हाली के लिए नए नए विषयों के द्वार खोल दिए। हाली कविता को मात्र विद्वानों व कथित 'सहृदयों' के वाग्विलास की चीज नहीं मानते थे, कविता उनके लिए आम जनता की बेहतरी का साधन थी। इनकी कविताओं से लोग अपनी पीड़ा को इसीलिए महसूस कर सके कि ये उसी जुबान में थी जिसमें जनता अपनी पीड़ा का अहसास करती थी। मौलाना हाली की कविता 'मुनाजाते बेवा' की भाषा से प्रभावित होकर ही महात्मा गांधी ने कहा था कि ''अगर हिन्दुस्तानी जुबान का कोई नमूना पेश किया जा सकता है तो वो मौलाना हाली की नज्म 'मुनाजाते बेवा' का है।''

मौलाना अल्ताफ हुसैन 'हाली' की कविताएं आज के संदर्भ में निहायत प्रासंगिक हैं। आज जिस दौर से भारतीय समाज गुजर रहा है, उसमें हाली की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है। हाली ने आम जनता की जिन समस्याओं को अपनी रचनाओं का विषय बनाया था वे अभी समाज से समाप्त नहीं हुई हैं, बल्कि कई

मामलों में तो वे और भी गम्भीर रूप धारण कर रही हैं। हाली ने किसान जीवन को, जनता के भाईचारे को, बराबरी के न्यायपूर्ण समाज की स्थापना को मुख्य तौर पर अपनी कविताओं का विषय बनाया।

आज साम्राज्यवाद जिस तरह से अपना शिकंजा कस रहा है, उसने पूरे सामाजिक ताने-बाने को हिलाकर रख दिया है। किसानों का जीवन दूभर हो गया है। वे कर्ज के बोझ से इस कदर दब गए हैं कि आत्महत्या के अलावा उनको अपने जीवन का कोई हल नजर नहीं आता। रोजगार के लिए दर-दर भटकने व हर दफतर में रोजगार पाने वाले चित्रों का जो वर्णन किया है वह स्थिति अभी दूर नहीं हुई है।

पितृसत्ता की विचारधारा समाज में अभी अपनी जगह बनाए हुए है, जो समाज व परिवार में समानता व जनतंत्र स्थापित होने में बाधा बनकर खड़ी है। जब समाज की आधी आबादी समान अधिकार और विकास के समान अवसरों से वंचित रहेगी, तब समाज में न्याय व शान्ति की स्थापना नहीं हो सकती।

सांस्कृतिक बहुलता वाले देशों को धर्मनिरपेक्षता ही एकजुट रख सकती है। धर्मनिरपेक्षता भारत के लिए कोई नई चीज नहीं है। विभिन्न संस्कृतियों और धर्मों के लोग सह-अस्तित्व के साथ हजारों सालों से साथ-साथ रह रहे हैं। हाली ने जाति, धर्म, क्षेत्र व भाषायी संकीर्णताओं को देश के लिए घातक मानते हुए इनको दूर करने के लिए वातावरण निर्मित किया था। जनता की एकता व भाईचारे को तार-तार करने वाली शक्तियां समाज में खुला खेल खेल रही हैं। साम्प्रदायिकता ने एक दार्शनिक आधार गढ़ लिया है। साम्प्रदायिकता के कारण भारत का विभाजन हुआ और अब तक साम्प्रदायिक हिंसा में हजारों लोगों की जानें जा चुकी हैं और लाखों के घर उजड़े हैं, लाखों लोग विस्थापित होकर शरणार्थी का जीवन जीने पर मजबूर हुए हैं।

हाली ने धार्मिक पाखण्ड व अंधविश्वास को समाज के पिछड़ेपन का जिम्मेदार ठहराते हुए इसे समाज से दूर करने की आवाज उठाई थी, लेकिन आज ये शक्तियां खूब फल फूल रही हैं। धर्म के नाम पर जनता में संकीर्णता, अंधविश्वास, भाग्यवाद और अतार्किकता को लाद रही हैं। बाहरी आडम्बरों व कर्मकाण्डों को ही धर्म के रूप में स्थापित करती है। धर्म को उसकी नैतिक व मानवीय शिक्षाओं से अलग करके नमाज पढ़ना, दाढ़ी-चोटी रखना, जनेऊ-तिलक धारण करना या अन्य धार्मिक पहचान के चिन्हों को ही धर्म के रूप में प्रतिष्ठित कर रही हैं। हाली का मानना था कि धर्म कुछ मूल्यों-आदर्शों का समुच्चय है, जिन्हें व्यक्ति को आचरण में उतारना है। हाली न केवल हरियाणा की बल्कि समूचे भारत की विरासत हैं।

यहां स्त्री-जीवन पर केन्द्रित हाली की कविता 'चुप की दाद' को प्रकाशित कर रहे हैं।

हाली की कविता

चुप की दाद

(1905 ई.)

ऐ मांओं बहनों, बेटियों, दुनियां की ज़ीनत[1] तुमसे है
मुल्कों की बस्ती हो तुम्ही, क़ौमों की इज़्ज़त तुमसे है
तुम घर की हो शहज़ादियाँ, शहरों की हो आबादियाँ
ग़म गीं दिलों की शादियाँ, दुख-सुख में राहत तुम से है

तुम हो तो गुरबत है वतन, तुम बिन है वीराना चमन
हो देस या परदेस जीने की हलावत[2] तुम से है
नेकी की तुम तस्वीर हो, इफ़्फ़त की तुम तदबीर हो
हो दीन की तुम पासबाँ, ईमाँ सलामत तुम से है

फ़ितरत[3] तुम्हारी है हया, तीनत[4] से है महरो वफ़ा
घुट्टी में है सब्रों रज़ा, इन्साँ इबारत तुम से है
मरदों में सच वाले थे जो सत बैठे अपना कब का खो
दुनियां में ऐ सतवन्तियों! ले देके अब सत तुम से है

मोनिस[5] हो ख़ाविन्दों[6] की तुम, ग़मख़्वार फ़रजन्दों[7] की तुम
तुम बिन है घर वीरान सब, घर भर की बरकत तुम से है
तुम आस हो बीमार की, ढारस हो तुम बेकार की
दौलत हो तुम नादार[8] की, उसरत[9] में इशरत[10] तुम से है

आती हो अक्सर बेतलबदुनिया में जब आती हो तुम
पर मोहनी से अपनी याँ घर भर पे छा जाती हो तुम
मैके में सारे घर की थीं गो मालिको मुख़्तार तुम
पर सारे कुंन्बे की रहीं बचपन से ख़िदमतगारतुम

माँ बाप के हुक्मों पे पुतली की तरह फिरती रहीं
ग़मख़्वार बापों की रहीं माँओं की ताबेदार[11] तुम
दिन भर पकाना रेंधना, सीना, पिरोना, टाँकना
बैठी ना घर पर बाप के ख़ाली कभी ज़िन्हार[12] तुम

रातों को छोटे भाई बहनों की ख़बर उठ उठ के ली
बच्चा कोई सोते में रोया और हुई बेदार[13] तुम
ससुराल में पहुँची तो वाँ एक दूसरा देखा जहाँ
जा उतरी गोया देस से परदेस में एक बार तुम

1 सजावट 2 मिठास 3 स्वभाव 4 स्वभाव 5 गम खाने वाली 6 पति 7 बेटा 8 गरीब 9 कंगाली 10 आराम 11 सेवक 12 हरगिज 13 जागना

वाँ फ़िक्र थी हर दम नाखुश न हो तुम से कोई
अपने से रंजिश के कभी पाओ न वाँ आसार तुम
बदले न शौहर की नज़र, सुसरे का दिल मैला न हो
आँखों में सास और ननद की खटको न मिस्ले ख़ार[14] तुम

पाला बुरों से गर पड़े, बदखू[15] हों सब छोटे बड़े
चितवन पे मैल आने न दो, गो दिल में हो बेज़ार तुम

ग़म को ग़लत करती रहो ससुराल में हँस बोल कर
शर्बत के घूंटों की तरह पीती रहो खूने ज़िगर

●●●

शादी के बाद एक एक को थी आरज़ू[16] औलाद की
तुम फंस गयीं जंजाल में ख़ालिक[17] ने जब औलाद दी
दर्दों के दुख तुमने सहे, जापे की झेलीं सख़्तियाँ
जब मौत का चक्खा मज़ा तब तुम को ये दौलत मिली

मैके में और ससुराल में सबके हुए दिल बाग़ बाग[18]
घर में उजाला तो हुआ पर तुम पे बिपता[19] पड़ गई
खाना पहनना ओढ़ना अपना गयी सब भूल तुम
बच्चों के धन्दे में तुम्हें अपनी न कुछ सुध बुद्ध रही

तब तक भी समझो ख़ैर थी जब तक भले चंगे थे सब
पर सामना आफ़त का था गर हो गया मन्दा कोई
सूली पे दिन कटने लगे रातों की नींदें उड़ गयीं
एक एक बरस की हो गयी एक एक पल एक एक घड़ी

बच्चों की नेवा में तुम्हें गुजरे हैं जैसे दस बरस
क़द्र इसकी जानेगा वही दम पर हो जिसके यूँ बनी
की है मुहिम जो तुम ने सर मर्दों को इसकी क्या ख़बर
जाने पराई पीड़ वो जिसकी बिवाई हो फटी

था पालना औलाद का मर्दों के बूते से सिवा
आख़िर ये ऐ दुखियारियो! ख़िदमत[20] तुम्हारे सर पड़ी
पैदा अगर होतीं न तुम बेड़ा न होता पार ये
चीख़ उठते दो दिन में अगर मर्दों पे पड़ता भार ये

●●●

लेतीं ख़बर औलाद की माएं न गर छुटपन[21] में याँ
ख़ाली कभी का नस्ल से आदम की हो जाता जहाँ

ये गोश्त[23] का एक लोथड़ा परवान चढ़ता किस तरह
छाती से लिपटाए न हरदम रखती गर बच्चे को माँ

वो दीन और दुनिया के मसले जिन के वाज़ और पन्द[24] से
ज़ुल्मत[25] में बातिल[26] की हुआ दुनिया में नूरे हक़ अयाँ
वो इल्म और हिकमत के बानी जिन की तहक़ीक़ात से
ज़ाहिर हुए आलम में इसरारे ज़मीनों आसमाँ

वो शाहे किश्वर[27] गीर इसकन्दर कि जिसकी धाक से
थे बेद की मानिन्द लरज़ाँ[47] ताजदाराने जहाँ
वो फ़ख्रे शाहाने अज़म किसरा कि जिसके अद्ल[28] की
मशरिक़ से ता मग़रिब ज़बानों पर है जारी दास्ताँ

क्या फूल फल ये सब उन्हीं कमजोर पौधे के न थे
सींचा था माँओं ने जिन्हें ख़ूने जिगर से अपने याँ
क्या सुफ़ियाने बा सफ़ा, क्या आरिफ़ान[29] वा खुदा
क्या औलिया क्या अम्बिया, क्या ग़ौस क्या क़ुतबे ज़माँ

सरकार से मालिक की जितने पाक बन्दे हैं बढ़े
वो माँओं की गोदों के ज़ीने[30] से हैं सब उपर चढ़े

●●●

अफ़सोस! दुनिया में बहुत तुम पर हुए जोरो जफ़ा
हक़ तलफ़ियाँ[31] तुमने सहीं बेमहरियां झेली सदा
अक्सर तुम्हारे क़त्ल पर क़ौमों ने बाँधी है कमर
दें ताके तुम को यक क़लम, खुद लौहे हसती से मिटा

गाड़ी गईं तुम मुद्दतों मिट्टी में जीती जागती
हामी तुम्हारा था मगर कोई ना जुज़ ज़ाते खुदा
ज़िन्दा सदा जलतीं रहीं तुम मुर्दा ख़ाविन्दों[32] के साथ
और चैन से आलम[33] रहा ये सब तमाशे देखता

ब्याही गयीं उस वक़्त तुम, जब ब्याह से वाक़िफ़ न थीं
जो उम्र भर का अहद[34] था वो कच्चे धागे से बंधा
ब्याहा तुम्हें याँ बाप ने ऐ बेज़बानों! इस तरह
जैसे किसी तक़सीर पर मुजरिम[35] को देते हैं सज़ा

गुज़री उम्मीदों वीम में जब तक रहा बाक़ी सुहाग
बेवा[36] हुई तो उम्र भर फिर चैन क़िस्मत में ना था

14 कांटा 15 बुरी आदत 16 इच्छा 17 खुदा 18 प्रसन्नता 19 विपति 20 सेवा 21 बचपन 23 मांस 24 नसीहतें 25 अंधेरा 26 झूठ 27 दुनिया 28 इंसाफ 29 पहचानने वाले 30 सीढ़ी 31अधिकार हनन 32 पति 33 संसार 34 वचन 35 अपराधी 36 विधवा

तुम सख़्त से सख़्त इम्तहां देती रहीं
कीं तुमने जानें तक फ़िदा कहलायीं फिर भी बेवफ़ा
गो सब्र का अपने न कुछ तुम को मिला इनाम यॉँ
पर जो फ़रिश्ते[37] से ना हो वो कर गयीं तुम काम यॉँ

●●●

की तुमने इस दारूल-महन[38] में जिस तहम्मुल[39] से गुज़र
ज़ेबा है गर कहिए तुम्हें फ़ख़्रें बनी नोए बशर
जो संग दिल सफ़्फ़ाक[68] प्यासे थे तुम्हारे ख़ून के
उनकी हैं बेरहमियाँ[40]मशहूर आलम में मगर

तुम ने तो चैन अपने खरीदारों से भी पाया न कुछ
शौहर[41] हों उस में या पिदर[42], या हों बिरादर[43] या पिसर[44]
उल्फ़त तुम्हारी कर गयी घर दिल में जिस बेदीद के
वो बदगुमाँ तुम से रहा ऐ बदनसीबो उम्र भर

गो नेक मर्द अक्सर तुम्हारे नाम के आशिक़ रहे
पर नेक हों या बद, रहे सब मुत्तफ़िक़[45] इस राह पर
जब तक जिओ तुम इल्मो दानिश[46] से रहो महरूम[47] यॉँ
आई हो जैसी बेख़बर वैसी ही जाओ बेख़बर

तुम इस तरह मज़हूल[48]और गुमनाम दुनिया में रहो
हो तुम को दुनिया की, न दुनिया को तुम्हारी हो ख़बर
जो इल्म मर्दों के लिए समझा गया आबे हयात[49]
ठहरा तुम्हारे हक़ में वो ज़हरे हलाहिल[50] सर बसर

आता है वक़्त इंसाफ़ का नज़दीक है यौमुल हिसाब[51]
दुनियां को देना होगा इन हक़ तलफ़ियों का वाँ जवाब

●●●

गुज़रे थे जग तुम पर हमदर्दी न थी तुम से कहीं
था मुनहरिफ़[52] तुम से फ़लक[53], बरगश्ता[54] थी तुम से ज़मीं
दुनिया के दाना और हकीम इस ख़ौफ़ से लरज़ां थे सब
तुम पर मुबादा इल्म की पड़ जाए परछायीं कहीं

ऐसा न हो मर्द और औरत में रहे बाक़ी न फ़र्क़
तालीम पाकर आदमी बनना तुम्हें ज़ेबा नहीं
यॉँ तक तुम्हारी हज़्व[55] के गाए गए दुनियां में राग
तुम को भी दुनियां की कुहन[56] का आ गया आख़िर यकीं

इल्मो हुनर से रफ़्ता रफ़्ता[57] हो गयीं मायूस तुम
समझा लिया दिल को के हम खुद इल्म के क़ाबिल नहीं
जो ज़िल्लतें लाज़िम हैं दुनियां में जिहालत के लिए
वो ज़िल्लतें सब नफ़स पर अपने गवारा तुमने कीं

समझा न तुम को एक दिन मर्दों ने क़ाबिल बात के
तुम बेवफ़ा कहलायीं लेकिन लोंडियाँ बन कर रहीं
आख़िर तुम्हारी चुप दिलों में अहले दिल के चुभ गई
सच है के चुप की दाद आख़िर बे मिले रहती नहीं

बारे ज़माना नींद के मारों को लाया होश में
आया तुम्हारे सब्र पर दरयाए रहमत जोश में

●●●

नौबत[98] तुम्हारी हक़रसी की बाद मुद्दत आई है
इंसाफ़ ने धुंदली सी एक अपनी झलक दिखलाई है
गो है तुम्हारे हामियों को मुश्किलों का सामना
पर हल हर एक मुश्किल यूं ही दुनियां में होती आई है

अटके हैं रोड़े चलती गाड़ी में सदा सच्चाई की
पर फ़तह[58] जब पायी है सच्चाई ने आख़िर पाई है
ऐ बेज़बानों की ज़बानों, बेबसों के बाज़ुओं
तालीमे निस्वाँ[59] की मुहिम जो तुम को अब पेश आयी है

ये मरहला आया है तुम से पहले जिन क़ौमों को पेश
मंज़िल पे गाड़ी उनकी इसतक़लाल[60] ने पहुँचाई है
है राई भी पर्वत अगर दिल में नहीं अज़्में[61] दुरुस्त
पर ठान ली जब जी में फिर पर्वत भी हो तो राई है

ये जीत भी क्या कम है खुद हक़ है तुम्हारी फश्त[62] पर
जो हक़ पे मुँह आया है आख़िर उसने मुँह की खाई है
जो हक़ के जानिबदार हैं बस उनके बेड़े पार हैं
भोपाल की जानिब से ये हातिफ़ की आवाज़ आई है

है जो मुहिम दरपेश दस्ते ग़ेब है इस में निहाँ
ताईदे हक़ का है निशाँ इम्दादे सुल्ताने जहाँ

●●●

37 देवता 38 आजमाइश का घर 39 सब्र 40 निर्दय 41 पति 42 बाप 43 भाई 44 बेटा 45 सहमत 46 ज्ञान 47 वंचित 48 अन्जान 49 अमृत 50 जान लेने वाला जहर 51 हिसाब का दिन 52 इंकार करने वाला 53 आकाश 54 रूठना 55 बुराई 56 पुरानापन 57 धीरे धीरे 58 विजय 59 औरतें 60 हिम्मत 61 इरादा 62 पीढ़ी

संवाद

फिर आयेगा सांगों का जमाना

सांग कला की मशहूर हस्ती स्वामी खीमा गोरड़ से सुभाष की बातचीत

सांग कला की मशहूर हस्ती स्वामी खीमा गोरड़ मशहूर सांगी हरदेवा स्वामी के बेटे थे, जिन्होंने सांग कला को नये आयाम दिये। सांगों के पितामह व जनक कहे जाने वाले किशनलाल भाट की परम्परा को आगे बढ़ाने वालों में पं0 दीपचन्द के बाद हरदेवा स्वामी का ही नाम आता है। खीमा को सांग के कुछ गुण तो अपने पिता से विरासत में मिले तथा उन्होंने अपने पिता हरदेवा स्वामी के खास चेले मशहूर सांगी बाजे भगत के सानिध्य में सांग सीखा। खीमा का जन्म विक्रमी सम्वत् 1979 को हुआ था। खीमा ने गांव के स्कूल से ही चार जमात पास की। 14 साल की उम्र में सांग में आये। खीमा स्वामी ने तीन साल तक बाजे भगत के साथ सांग किये। इसी बीच विक्रमी संवत् 1993 में बाजे भगत का कत्ल हो गया। खीमा ने सिर्फ बाजे भगत के ही सांग किये हैं। 80 वर्ष हरियाणवी सांग कला के महत्वपूर्ण स्तम्भ से 1999 में रोहतक में रागनी लेखन कार्यशाला में सुभाष की हुई बातचीत के अंश।

सुभाष - आपके अनुसार सांगों का प्रचलन कब और किसने किया?

खीमा गोरड़ - सांगों का प्रचलन किशनलाल भाट ने किया था जो उतर प्रदेश के रहने वाले थे। लगभग 300 साल पहले हुई। सांग में एक जनाना बनता था। एक घाघरी जिसे पुराने जमाने में खारा कहा जाता था पहनता तथा एक आंगी पहनता था। पैरों में बड़े-बड़े घुंघरू होते थे। एक ठुमरी वाला और खड़े-बड़े गाते थे। उसके बाद एक कागज के घोड़े वाला आया और नाचा करता था। उसके बाद हमारे दादा दीपचन्द ने इसमें काफी बदलाव किया। एक सारंगी वाला, एक ढोलक वाला एक नगाड़े वाला तथा एक टेकची वाला। फिर तीन नचिनये बनाये। पहले सांगी घर-घर खाना खाया करते। फिर उन्होंने खुद का खाना बनाना शुरू किया। उसके बाद उन्होंने मशालची तैयार किया। बाद में मशालची बन्द करके चार तख्त खरड़ बिछवा कर उसके उपर आसमाना तनवा दिये। उन्होंने चौकलिया गाये, दोये गाये, चौबोले गये तथा सांग में पैसा लेना बन्द कर दिया। उसके बाद उन्होंने उस स्थान के पास जहां सांग होता था एक परांत रखवा दी ताकि लोग उसमें अपना दान डाल सकें। सन 1914 में अंग्रेजों के जमाने में भर्ती के बारे में प्रचार किया। यहां रोहतक में वायरासराय लोग काफी भर्ती हुए, कोई शोर-शराबा नहीं हुआ। पं. दीपचन्द के कारण बहुत से लोग भर्ती हुए और उन्होंने कुर्सीनसीन हुआ। यानी उनका बहुत बड़ा सम्मान हुआ। यानी रायबहादुर की पदवी दी।

सुभाष - सांगों का समाज पर क्या प्रभाव पड़ा?

खीमा गोरड़ - अच्छे कार्यक्रमों पर लोग बहुत अमल करते थे। खासकर धार्मिक सांगों पर। मैंने ऐसा देखा कि लोग सांग देखकर रो पड़ते थे। सांग सच्चाई पर चलने की प्रेरणा देते हैं। सांगों के माध्यम से पुरानी कहानी, कथाएं लोगों के सामने आईं। इनमें दिखाया गया कि पहले लोग कैसे धर्म-कर्म पर चलते रहे हैं। यह एक ऐसी कला है जिसके माध्यम से समाज में फैली बुराइयों के खिलाफ लोगों को चेताया गया। इसके साथ उन्हें सस्ता व सभ्य मनोरंजन सुलभ कराया गया। सांगों के माध्यम से लोगों के दिलों में देशभक्ति की भावना भरी गई। आजादी की लड़ाई में भी सांगों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। गांवों में चौपालों, गऊशालाओं, मंदिरों व अनेक पाठशालाओं के निर्माण का श्रेय सांगों को ही जाता है। सांगों के माध्यम से भठगांव में गऊशाला बनवाई थी। हरियाणा में यह गऊशाला पहली थी। इसलिए सांगों के माध्यम से समाज पर काफी सकारात्मक असर पड़ा।

सुभाष - आजादी की लड़ाई में सांगों की भूमिका के बारे में थोड़ा और विस्तार से बताइए?

खीमा गोरड़ - कोई खास असर नहीं। पं. दीपचन्द ने एक रागनी गाई थी कि भर्ती होले, तमने मिले फूल बूट' काफी प्रसिद्ध हुआ और बहुत से लोग भर्ती भी हुए। उनमें एकता की व देशप्रेम की भावना भरी गई।

सुभाष - पं. दीपचन्द को तो अंग्रेजों का समर्थक कहा जाता है। इसमें कहां तक सच्चाई है?

खीमा गोरड़ - यह बिल्कुल गलत है तथा यह कुछ खास लोगों द्वारा उन्हें बदनाम करने की ओच्छी साजिश है।

सुभाष - सांग के अलावा उस जमाने में मनोरंजन के और क्या क्या साधन थे?

खीमा गोरड़ - रामलीला ही थी। इसे यहीं के कलाकार खेलते थे। रामलीलाएं उस समय समाज में काफी लोकप्रिय थी। और लोग भी इनसे काफी जुड़े हुए थे। वे चाहे धार्मिक भावना के कारण ही हों।

सुभाष - सांग आज उतने लोकप्रिय नहीं रहे जितने कि पहले थे। इसका आप क्या कारण मानते हैं?

खीमा गोरड - आपस की फूट, शराब का प्रचलन, टी.वी, सिनेमा तथा युवा पीढ़ी अश्लीलता की ओर बढ़ रही है। वह अश्लील साहित्य पढ़ती है। आज की युवा पीढ़ी सांगों को अनपढ़ों व गांव के लोगों का मनोरंजन का साधन मानती हैं। पढ़े लिखे लोग सांग पसन्द नहीं करते। आज की युवा पीढ़ी भटकाव के दौर में है। इस का असर सांगों पर

पड़ा है।

सुभाष - आपने कहा कि सांगों पर फिल्मों, टी.वी. का असर पड़ा है?

खीमा गोरड - टी.वी. में नाचना गाना, लडकियों का नांच यही सब तो चाहिए आज की युवा पीढ़ी को। टी.वी. ने शालीनता को भी खत्म कर दिया है। आज लोग भी ऐसे हो गये हैं कि सांगों को अनपढ़ों या बूढ़े लोगों का मनोरंजन का साधन मानते हैं। एक तरह से अपसंस्कृति समाज में बढ़ी है और इसका हमारी लोककला सांग पर काफी बुरा प्रभाव पड़ा है।

सुभाष -आपने बाजे भगत के सानिध्य में काम किया है उन्होंने सांग को नया रूप देने के लिए क्या किया? सांग की पहचान के लिए क्या कोई नया कदम उठाया था?

खीमा गोरड - उन्होंने दिन में सांग करने शुरू किये। यही नहीं पहले सांगी रूपया लेने के लिए नीचे उतरते थे। लेकिन भगत जी ने अपने कलाकारों को नीचे उतरने से रोका। इसके बाद ऊपर ही रूपये लेने की प्रथा शुरू हुई। बाद में उन्होंने यह भी बन्द करवा दी। उन्होंने मंच पर एक पीतल की परांत रखवा दी। जिसमें दानी अपने पैसे डालने लगे। उस समय चांदी के रूपये मिलते थे। उन्होंने चार नाचने वाले बना दिये। उनमें एक मैं, सुलतान, झम्मन, जम्मुवा मीर थे। उससे पहले सांग में नाचने वाले चार नहीं होते थे।

सुभाष - बाजे भगत को एक कलाकार के रूप में आप कैसे देखते हैं?

खीमा गोरड़ - बहुत साधारण थे, एक कलाकार के रूप में बाजे भगत महान कलाकार थे। दूसरा वे अपने समवर्ती कलाकारों में इक्कीस थे। तभी तो अंग्रेजों ने बाजे भगत को कुर्सी प्रदान की थी। आजादी से पहले किसी काले आदमी को अंग्रेजों ने पहली बार कुर्सी दी थी। कुर्सी यानी कलाकार का सबसे बड़ा सम्मान।

सुभाष - उस जमाने में दो मशहूर सांगियों बाजे भगत व लख्मी चन्द में से कौन श्रेष्ठ था?

खीमा गोरड़ - बाजे भगत ही श्रेष्ठ थे। मैं आपको एक सबूत देता हूँ। दिल्ली के पास नांगलोई के पास निवास में दोनों के बीच सांग हुआ। तीन घण्टे पहले लख्मी चन्द ने किया। नल-दमयन्ती का सांग हुआ। तीन घण्टे होने के बाद अंग्रेज ने सीटी बजा दी। इसके बाद बाजे भगत ने राजा रघबीर का सांग किया। इसमें खास बात तो यह रही है लख्मी चन्द का सांग देखने के बाद भी लोग बाजे का सांग देखने के लिए रूके रहे। इस सांग के बाद जब अंग्रजों ने बाजे भगत को सम्मान देना चाहा तो उन्होंने कहा कि मैं तो नाई हूं साहब और लख्मी ब्राहमण। समाज के रीति रिवाजों के अनुसार मेरी जगह इन्हें ही ईनाम दे दो। फिर अंग्रेजों ने दोनों को ही बराबर-बराबर ईनाम दिया। इसके बाद महानता तो उनकी इसी बात से साबित हो जाती है कि जब उन्हें छुरा मारा तो उन्होंने हमलावर पकड़ लिया तथा पहचान कर छोड़ दिया और कहा कि भाग जा, यदि मैं जीवित रहा तो तुझसे बदला ले लूंगा वर्ना अपनी आने वाली पीढियों के लिए दुश्मनी छोड़ कर नहीं जाऊंगा। हरियाणा में आज तक किसी सांगी की पूजा नहीं होती लेकिन सिर्फ बाजे भगत की पूजा होती है। सिसाना गांव के पास नारायण मंदिर में उनकी मूर्ति है तथा वहां उसकी पूजा होती है।

सुभाष - कितने सांग किये आपने जीवन में?

खीमा गोरड़ - मैंने अपने बनाये तो एक दो ही किये हैं लेकिन बाकि मैंने अपने गुरू यानि बाजे भगत जी के ही किये हैं। मैंने निरन्जन फूल शिकन्दा बनाया था जो काफी प्रसिद्ध हुआ था। इसके अलावा तकदीर और तदबीर। इसमें राजा का लड़का तदबीर और वजीर का लड़का तकदीर को बलवान बताता था। यह भी काफी प्रसिद्ध हुआ था।

सुभाष - हरियाणा के अलावा और किसी राज्य में भी सांग पसन्द किये जाते हैं?

खीमा गोरड़ - हां क्यों नहीं। राजस्थान में भी काफी प्रसिद्ध हैं। उतर प्रदेश में तो सांग हरियाणा की तरह ही पसन्द किये जाते हैं। आज भी उतर प्रदेश के देहात में सांग काफी प्रचलित हैं। जबकि हमारे यहां हरियाणा में काफी कम हो गये हैं। उतर प्रदेश में लोग आज भी इस कला की कद्र करते हैं तथा सांग बड़े चाव से सुनते हैं। हरियाणा से लगते राजस्थान में भी खूब पसन्द किये जाते हैं। मैं भी दूसरे कई राज्यों में सांग करने गया था तथा वहां के लोगों ने काफी इज्जत दी।

सुभाष - कहा जाता है कि हरियाणा में रागनी व सांग प्रेम विरोध से शुरू होते हैं। क्या यह सच है?

खीमा गोरड़ - बिल्कुल नहीं। हमारे यहां अनेकों सांग हैं जो प्रेम पर आधारित हैं। हमारे सांग व रागनी भाई चारे व सामाजिक एकता का संदेश देते हैं। जो लोग ऐसा मानते है उन्हें हरियाणवी संस्कृति की सही जानकारी नहीं है।

सुभाष - सांग करते समय घटी कोई ऐसी घटना जो आज भी आपको याद है?

खीमा गोरड - जमाल के सांग में मेरे गुरू भगत पर मुगला व्यक्ति ने गोली चलाई थी जो सांघी गांव का रहने वाला था। उसके बाद भगत जी ने रात के सांग बन्द कर दिये और दिन के सांग करने शुरू कर दिये। इस हमले में बाजे भगत जी बाल-बाल बच गये। मुगला ने उसके बाद महान सन्त भगत फूल सिंह (संस्थापक खानपुर गुरुकल की) की भी हत्या की थी।

सुभाष - क्या बदलाव हो कि सांग एक बार फिर लोकप्रिय होंगे?

खीमा गोरड - समय के साथ सांग देखना व सुनना एक बार फिर लोगों की मज़बूरी बन जायेगी। आज लोग भद्दे गानों, गन्दे नाचों से तंग आ चुके हैं। सबसे ज्यादा जैसा कि मैंने पहले बताया कि इस कला को सबसे ज्यादा टी.वी. व फिल्मों ने नुकसान पहुंचाया है। लेकिन यदि इस क्षेत्र में लेखक आगे आते हैं और वे नये सांग लिखें। सांग करने वाले भी पूरी शिद्दत से बढ़िया सांग करें तो मुझे पूरा विश्वास है कि सांगों का जमाना एक बार फिर आयेगा। आज भी देहात में सांगों की भूख है। अच्छे मनोरंजन के साधन न मिलने के कारण ही वे दूसरी चीजों की तरफ जाते हैं।

सम्पर्कः 1205/13, आदर्श कालोनी, मॉडल टाऊन, रोहतक
मो : 09416101732

●●●

वेशभूषा

हरियाणवी लोकसांस्कृतिक विरासत की प्रतीक है पगड़ी

महासिंह पूनिया

किसी समाज की संस्कृति, रहन-सहन, भोजन व वेशभूषा को वहां के जीवनयापन के साधन व वहां की जलवायु सर्वाधिक प्रभावित करती है। अस्तित्व के संघर्ष में उत्पन्न आवश्यक वस्तुएं कालांतर में सांस्कृतिक प्रतीकों व चिह्नों में तब्दील हो जाया करती हैं। मानव समाज इन्हें अपनी पहचान से जोड़ लेता है। सांस्कृतिक कही जाने वाली समस्त वस्तुओं के साथ ऐसा हुआ है। समाज विशेष की वेशभूषा ने इस सांस्कृतिक सफर को तय किया है। गर्मी-सर्दी से बचने के लिए तथा काम करते वक्त सिर ढकने वाला कपड़ा कब पुरुषों की इज्जत व स्त्रियों की लाज का प्रतीक बन जाएगा। कब यह सामन्ती ठसक का रूप लेकर उत्पीड़न का प्रतीक बन जाएगी। कितने मुहावरों में इसकी अभिव्यक्ति होने लगेगी। किसी समाज के मूल्यों को व उनमें हो रहे बदलाव को वेशभूषा से भी समझा जा सकता है। मसलन हरियाणा में औरतों की कुर्ती तथा पुरुषों के कुर्ते की काट, कालर, बटन यहां तक कि जेब में भी कोई अन्तर नहीं है, हां पुरुषों का कुर्ता औरत की कुर्ती से जरा सा लम्बा जरूर होता है। फिर ऐसे स्वर संस्कृति रक्षा के नाम पर स्वीकृति कैसे पा जाते हैं जो स्त्रियों को मनचाहे अथवा पुरुषों जैसे कपड़े पहनने की न केवल मनाही करते हैं, इसके लिए बल-प्रयोग को भी उचित मानते हैं। हरियाणा की सांस्कृतिक विविधता यहां की वेशभूषा में भी दिखाई देती है। यहां महासिंह पूनिया का 'पगड़ी' पर केन्द्रित आलेख प्रकाशित कर रहे हैं। सुधी लेखकों से हरियाणा की वेशभूषा के विभिन्न पक्षों का समाजशास्त्रीय व ऐतिहासिक विश्लेषण करते लेख आमंत्रित हैं। - सम्पादक

पगड़ी हरियाणा की लोकसांस्कृतिक विरासत का एक ऐसा प्रतीक है, जो अपने अंतर्गत सांस्कृतिक मूल्यों को समाहित किए हुए है। पुरातात्विक स्थलों से हरियाणवी पगड़ी के अनेकों प्रमाण भी मिले हैं।

प्राचीन काल में सिर को सुरक्षित ढंग से रखने के लिए पगड़ी का प्रयोग किया जाने लगा। पगड़ी को सिर की सुरक्षा के लिए धारण किया जाता रहा है, इसलिए इस परिधान को सभी परिधानों में सर्वोच्च स्थान मिला है। पगड़ी को हरियाणवीं लोकजीवन में पग, पाग, पग्गड़, पगड़ी, पगमंडासा, साफा, पेचा, फेंटा, खण्डवा, खण्डका, आदि नामों से जाना जाता है। जबकि साहित्य में पगड़ी को रूमालियो, परणा, शीशकाय, जालक, मुरैठा, मुकुट, कनटोपा, मदील, मोलिया और चिंदी आदि नामों से भी जाना जाता है। वास्तव में पगड़ी का मूल ध्येय शरीर के ऊपरी भाग (सिर) को सर्दी , गर्मी, धूप, लू, वर्षा आदि विपदाओं से सुरक्षित रखना रहा है, किंतु धीरे-धीरे इसे सामाजिक मान्यता के माध्यम से मान और सम्मान के प्रतीक के साथ जोड़ दिया गया।

अपनी हजारों वर्ष की यात्रा के अंतर्गत पगड़ी ने अनेक रंग, रूप, आकार, प्रकार बदले किन्तु मूलरूप से पगड़ी में कोई परिवर्तन नहीं आया। पुरातात्विक प्रमाणों के आधार पर पगड़ी का परिधान तो सिंधु घाटी की सभ्यता से भी पहले था। उस समय नर और नारी दोनों ही पगड़ी पहनते थे। वैदिक साहित्य की दृष्टि से यदि अवलोकन किया जाए, तो पगड़ी विशेष वैदिक सम्मान का प्रतीक रही है। इस युग में इसे 'उष्णिश' के नाम से पुकारा जाता था। रामायण काल में पगड़ी को विशेष महत्ता मिली। इसी काल में पगड़ी को लोकलाज के साथ जोड़ दिया गया। महाभारत काल में भी पगड़ी की परम्परा ज्यों-की-त्यों बनी रही।

शकों के समय में भी पगड़ी का चलन रहा, किंतु इस युग में लोगों ने सुरक्षा की दृष्टि से पगड़ी के स्थान पर चमड़े का टुकड़ा सिर पर रखना शुरु कर दिया। शकों और कुषाणों के बीच जो युद्ध हुआ, उसमें कुषाण विजयी रहे, किंतु वे शकों के सिर पर पगड़ीनुमा चमड़े को देखकर स्तब्ध रहे। अमादलपुर (सुघ) पुरातात्विक स्थल से खुदाई से निकली कुषाणकालीन मिट्टी की मूर्तियों पर बंधी हुई पगड़ियां इसका पुख्ता प्रमाण हैं।

मुगलकाल में पगड़ी को विशेष सम्मान मिला और इसके ऊपर हीरे और मोतियों की रत्नों से जड़ी मालाएं तथा कलंगियां लगाई जाने लगी। इस काल में पगड़ियां भिन्न-भिन्न रूप धारण करने लगी। सिर पर पहले टोपी या कुल्लाह पहने जाने लगा और उसके ऊपर पगड़ी बांधी जाने लगी। पगड़ी के ऊपर खड़े हुए भाग

को तुर्राह की संज्ञा भी दी गई। गर्मियों में कुल्लाह गेहूं के तिनकों से तथा सर्दियों में मोटे कपड़े से बनाया जाने लगा। इस काल में पगड़ी ने अनेक रूप धारण किए। राजा, सेनापति, युवराज सभी अलग-अलग तरह की पगड़ियां बांधने लगे। साधारण जनता सूत्ती कपड़े की पगड़ी बांधने लगी।

17वीं सदी में जब भारत में अंग्रेज लोग आए तो उन्होंने पगड़ी के स्थान पर हैट का प्रयोग शुरु किया, किंतु पारम्परिक पगड़ी ने हार नहीं मानी। राजा राम मोहन राय, स्वामी दयानन्द, विवेकानन्द, दीनबंधू सर छोटू राम, सेठ छाज्जू राम, सेठ धन्नामल सरीखे अनेक महापुरुषों के सिर पर सजी पगड़ी से इसका अनुमान लगाया जा सकता है।

हरियाणवीं लोकजीवन में पगड़ी का सम्बन्ध संस्कारों से भी जुड़ा हुआ है। यहां पर जाति के आधार पर भी पगड़िया के अलग-अलग रंग-रूप तथा आकार देखने को मिलते हैं। देश की आजादी के समय पगड़ी संभाल जट्टा गीत के माध्यम से देशभक्ति व समाज की लाज बचाने का जो संदेश दिया गया, उससे भला कौन परिचित नहीं है? हरियाणा में सम्प्रदाय, क्षेत्र, जाति के आधार पर भी पगड़ी की पहचान रही है। हिन्दू पगड़ी, मुस्लिम पगड़ी, सिक्ख पगड़ी, आर्यसमाजी पगड़ी, ब्रज पगड़ी, अहीरवाली पगड़ी, मेव व मेवाती पगड़ी, खाद्दरी पगड़ी, बागड़ी पगड़ी, बांगरू पगड़ी, गुज्जर पगड़ी, राजपूती पगड़ी, बिश्नोई पगड़ी, मारवाड़ी पगड़ी, रोड़ पगड़ी, बाणियां पगड़ी, सुनारी पगड़ी, पगड़ी, राव पगड़ी, पाकिस्तानी पगड़ी, मुल्तानी पगड़ी, पेचदार पगड़ी, तुर्रेदार पगड़ी व विवाह पगड़ी आदि का प्रचलन रहा है। समाज में केवल उन्हीं जातियों की पगड़ियां प्रचलित रही हैं, जिनका वर्चस्व समाज में अधिक रहा है। इसके अतिरिक्त हरियाणवी समाज में काल तथा परिस्थिति एवं स्थान के आधार पर पहनी जाने वाली हल्की, भारी, छोटी-बड़ी व रंग-बिरंगी पगड़ियां आज भी प्रचलित हैं, लोकजीवन में भागलपुरी साफे का प्रचलन इसका प्रमाण है।

हरियाणवी पगड़ी का यहां के सामाजिक जीवन से परस्पर गहरा नाता रहा है। हरियाणा में मूलतः पगड़ी को सामाजिक प्रतिष्ठा तथा सम्मान के प्रतीक के रूप में देखा जाता है। यहां पर पिता की मृत्यु के पश्चात् बड़े बेटे को पाग या पगड़ी की रस्म भी अदा की जाती है। इस अवसर पर सभी नजदीकी रिश्तेदारों द्वारा पाग लाने की परम्परा भी है। लोकजीवन में इसे 'पाग-बंधाई' रस्म के नाम से जाना जाता है। हरियाणा में विविध रंगों की पगड़ियां पहनने की परम्परा रही है। हरियाणा के ब्रज भाग में रंग-बिरंगी पीली तथा नारंगी पगड़िया का प्रचलन अधिक रहा है। जबकि अहीरवाल में गहरे लाल रंग, चुंदड़ी तथा छींटदार पगड़ियां अधिक पहनी जाती है, जबकि खादर व बांगर में साामान्य सफेद रंग की पगड़ियां पहनी जाती हैं। बागड़ क्षेत्र के लोग सफेद तथा गहरे रंग की पगड़ियां पहनते हैं। हरियाणा में रंग-बिरंगी पगड़ियों की विविधता ब्रज तथा अहीरवाल क्षेत्र में ही देखने को मिलती है। हरियाणवी लोकजीवन में परिवार के मुखिया द्वारा पगड़ी पहनने की परम्परा रही है। इसी प्रकार ठोळे के मुखिया, पट्टी के मुखिया, पान्ने के मुखिया, गांव, गोत्र, सतगामा, अठगामा, बारहा, खाप तथा पाळ के चौधरियों द्वारा भी हरियाणवी पगड़ी बांधने की परम्परा का पालन किया जाता रहा हैं। इतना ही नहीं, यहां पर ब्याह-शादी तथा अन्य अवसरों पर रूठे हुओं को मनाने के लिए पगड़ी उतारकर अंतिम प्रयास के रूप में मनाने की परम्परा अब भी कहीं-न-कहीं दिखाई पड़ती है।

हरियाणवी लोकजीवन में बच्चे पगड़ी नहीं पहनते। जबकि युवा वर्ग द्वारा खेत-क्यार में काम करते समय मंडासा तथा मंडासी मारने के साथ परणा आदि बांधने की परम्परा आज भी कायम है। सामान्यतः जहां हरियाणा के अधिकतर लोगों द्वारा सफेद रंग की पगड़ी पहनी जाती है, वहीं पर साधु समाज से जुड़े हुए लोग गेरुवे रंग की पगड़ी भी पहनते हैं। हरियाणा में अनेक स्थानों पर सुआ रंग की पगड़ी भी बांधने की परम्परा रही है। सुआ पगड़ी को लेकर गांव बापोड़ा जो जिला भिवानी में पड़ता है, के लोगों को शासकों ने हरा दिया था, जिसकी बदौलत उन्होंने धनाणा गांव पर चढाई की थी। उसी समय से आज तक हरियाणा में पगड़ी को लेकर यह कहावत प्रचलित है -

बापोड़ा मत जाणिये, यू गाम धनाणा,
कुरड़ी टामक बाजता, यू जाणै सारा हरयाणा,
सूई बांधै पागड़ी, जा रजपूती बाणा।

(यहां पर सुई बांधा पागड़ी से अभिप्राय- हरे रंग की सुआ पगड़ी से है।)

वर्तमान समय में हरियाणा में विवाह के अवसर पर लाल, गुलाबी, छींट तथा राजपूती पगड़ियों की बांधने की परम्परा की शुरूआत हो चुकी है। इसके अतिरिक्त अनेक राजनीतिक पार्टियों ने भी पगड़ी की परम्परा को अपनाकर इसे राजनीतिक रंग दे दिया है।

हरियाणवी पगड़ी की चौड़ाई गज भर होती है और इसकी लम्बाई छः से नौ गज तक की होती है। लोकजीवन में भारी तथा लम्बी पगड़ी बांधने की परम्परा भी रही है, क्योंकि पहले पशुओं को चराते समय पाळियों को पानी की किल्लत का सामना करना पड़ता था, गहरे कुओं से पानी निकालने तथा पाळियों के बिछौणे के रूप में भी इन पगड़ियों का प्रयोग किया जाता था।

हरियाणवीं पगड़ी को अलग-अलग इलाके में अलग-अलग तरीके से बांधने की परम्परा रही है। मुख्यतः पगड़ी को बांधने के दो ही ढंग होते हैं, बहुप्रचलित ढंग को राजपूती कहा जाता है, जिसमें खंडके का आधा भाग अनेक तह करके दोनों कानों के ऊपर डाल लिया जाता है और गोलाकार में लपेट लिया जाता है। यह

पगड़ी थोड़ी ढीली रहती है और इसमें आगे कट भी दिखाई देता है। दूसरा पेंचदार तरीके से पगड़ी बांधी जाती है। यह पगड़ी सख्त होती है, इसका प्रचलन दक्षिण हरियाणा में देखने को मिलता है। इसके अतिरिक्त हरियाणा में भरतपुरी, जोधपुरी, भागलपुरी, जयपुरी, मारवाड़ी आदि पगड़ियां बांधने की परम्परा भी रही है।

हरियाणवी लोकजीवन में पगड़ी की परम्परा इतनी रच और बस गई कि दैनिक जीवन में प्रयोग किए जाने वाले मुहावरों, लोकोक्तियों, उक्तियों, रागनियों, लोकगीतों आदि सभी लोकसाहित्यिक विधाओं में पगड़िया से जुड़े हुए अनेकों उदाहरण देखने को मिलते हैं - पगड़ी उछालणा, पगड़ी तारणा, पगड़ी की लाज राखणा, खण्डवा पायां मैं धरणा, तुर्रा छोड़णा, पगड़ी बांधणा, पगड़ी बदल यार होणा, पगड़ी धरणा, पगड़ीधारी होणा, अहमद की पगड़ी मुहम्मद के सिर, घी भी खाओ, पगड़ी भी राखो, उनकी इज्जत भी के खाक, जिन्नैं पगड़ी दे परदेसी, पगड़ी संभाल जट्टा, सिर सलामत तो पगड़ी पचास, कह तै मोड्डा बांधै पगड़ी ना तै रह्वै उघाड़े सिर आदि अनेकों ऐसे मुहावरे एवं उक्तियां हैं जो हमारी लोकसंस्कृति का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। हरियाणवी लोकजीवन में अनेक ऐसी जनोक्तियां एवं कहावतें प्रचलित हैं, जिनका सीधा सम्बंध पगड़ी से है। उदाहरण के लिए - हुक्के तै हुरमत गई, नेम गया सब छूट, पगड़ी बेच तम्बाकू लिया, गई हिय की फूट। सब्जरंग के सिर की पगड़ी अलबेली का बेला है, पां तै ओ पाणी पीवै, उसका नाम पहेला है। धरती का मण्डल देवता, सिर का मण्डल सूत, घर का मण्डल स्त्री, कुल का मण्डल पूत आदि वे उदाहरण है जो लोकसाहित्य में पगड़ी की परम्परा को दर्शाते हैं।

हरियाणा जैसा प्रदेश जिसके बुजुर्गों की पहचान केवल पगड़ी के माध्यम से हुआ करती थी, आज उसका अस्तित्व खतरे में है, क्योंकि नई पीढ़ी पगड़ी बांधने की परम्परा नकार चुकी है। हरियाणा में साठ साल से नीचे शायद ही कोई व्यक्ति सिर पर पगड़ी बांधता हो। आने वाले वर्षों में जब हरियाणवीं समाज में बिना पगड़ी के हो जाएगा, तो आने वाली पीढियों को संभवतः यकीन भी नहीं होगा कि हमारे पूर्वज किस-किस तरह की पगड़ियां बांधा करते थे।

देसा की टेक

उस समय पढ़े-लिखे लोग सिर पर साफा बांधा करते थे। देसा कितने पढ़े-लिखे थे, कौन पूछे? पर सिर पर साफा जरूर धरते।

एक बार एक अनपढ़ दौड़ा-दौड़ा देसा के पास गया और उन्हें चिट्ठी देकर बोला, इसे पढ़ दो। देसा ने चिट्ठी तो ले ली काला अक्षर भैंस बराबर। चिट्ठी लौटाते हुए कहा, 'मुझे नहीं आता।'

अनपढ़ आदमी देसा की यह हालत देखकर बोला, 'शर्म करो, तुम साफा पहने हो।' यह सुनकर देसा ने दोनों हाथों से अपना साफा उतारकर उस अनपढ़ आदमी के सिर पर रखकर बोले!, 'अब यह साफा तेरे सिर पर है, अब अपनी चिट्ठी आप पढ़ ले।'

कलवन्त कान्तीवाल की कविता

सफेद मेंढक

देखो देखो
गली में सफेद मेंढकों
का तातां लगा है
और हर मेंढक पाँच साल
बाद जगा है

अब ये
खूब जोर-जोर से टराएगें

कोई टर करेगा
कोई करेगा टर-टर
कोई टरर-टरर

सफेद मेंढक फिर पाँच साल
आराम से अपने कुएं में सोएगे
लोग बिलख-बिलख रोएगें

सफेद मेंढक फिर आयेंगे करेंगे
टर
टर-टर
टरर-टरर सम्पर्कः 9467743403

●●●

दयालचंद की कविता

कड़वा सच

सिर पर ईंटें
पीठ पर नवजात शिशु
शिखर दुपहरी
दो जून रोटी के लिए
पसीने से तर-बतर
यह मजदूरनी नहीं जानती
कि
किसे वोट करना है
मालिक जहां बटन दबाएगा
वोट हो जाएगा
हमारे लोकतंत्र का यही है कड़वा सच

सम्पर्क : 09496220146

●●●

हरियाणवी कविता

धर्मेन्द्र कंवारी की कविताएं

मोल की लुगाई

रामफल गेल या कै मुसीबत आई
किल्ले तीन अर घरां चार भाई
मां खाट म्ह पड़ी रोज सिसकै
मन्नै बहू ल्यादौ, मन्नै आग्गा दिक्खै

हरियाणा म्हं रिश्तां की साध ना बैठै
किल्लां आग्गै जमां तार ना बैट्ठै
एक दिन फूफा घरां आर्‌या था
गेल एक माणस नै ल्यार्‌या था

ईब और कोए चारा कोनी भाई
ताम्म ले आओ मोल की लुगाई
लाख रप्पियां का इंतजाम कर लिया
झारखंड जाण का दिन बी धर लिया

रामफल बिचौलिए गेल औड़े डिगरग्या
गरीब का गरीब के गैल मेल मिलग्या
रप्पिए भी छोरी के बाप नै नहीं पकड़ै
बिचौलिया अर गाम्म आळ्या नै रगड़े
बहू आग्गी, मां भी होगी कसूती राज्जी

पहली रात नै वा बैठी थी घणी मुरझाई
रामफल नै बेचारी पै कसूती दया आई
हाथ जोड़ कै बोली, तेरी रजा मै खुश रहूंगी
दारू ना पीए, तेरै त पाच्छै नहीं हटूंगी

आग्लै दिन वा खेत म्ह रामफल गेल डिगर्‌गी
काम इतणा करै, दूसरां की चूंद सी टूटगी
थोड़े एक दिनां म्हं वा सबकै मन भा गी
मोल की लुगाई तो कसूता घर बसागी

रामफल का घर तो न्याहल होग्या
बुढ़िया का भी सूत सा तणग्या
एक दिन रामफल नहाण लाग्या
एक सांप लिकड़ के उसनै खाग्या

समझ नहीं आया रामफल कै के होग्या
मुश्किल तै घर मिल्या, घरबारी कित्त खोग्या
रामफल उस दिन पड्‌या तो फेर नहीं उठ्‌या
मोल की लुगाई का तो भगवान भी रूठ्‌या

रामफल का घर माणस लुगाइयां का भर र्‌या था
मोल की लुगाई का मन कित्ते और रम र्‌या था
तीसरी मंजिल तै डांक मारी, माणसां का रूक्का पड़ग्या
अस्पताल ले चाल्लै, कोए गाड्‌डी लेण बी डिगरग्या

वा बोली, कोए फायदा नहीं सुण ल्यो गाम्म के सारै ताऊ-ताई
बस आग्गै तै किस्से की बेटी नै ना कहियो मोल की लुगाई
दूर परदेश तै आकै वा सबकै दिल म्ह जगां बणागी
बेटियां की कदर करण का गाम्म कै जिम्मा लाग्गी

दादी सुरती

दादी सुरती कै जीवणकाज की तैयारी थी
101 साल की दादी गाम्म म्ह सबतै न्यारी थी
दांत न्यू निपोरा करदी जणू नए चढ़वारी थी
दादा तो डिगरग्या, दादी ईब बी भारी थी
आठ पोते-पोती देख लिए, नौवें की तैयारी थी
सारै गाम्म म्हं दादी सुरती सबकी दुलारी थी

कानां तै थोड़ा ऊंचा सुण्या करदी
लाठी की धमक कसूती पड्‌या करदी
बहुआं पै आज बी राज कर्‌या करदी
सुरती की बात नीची नहीं पड्‌या करदी
दादी गैल पूरा कुणबा जुड़र्‌या था
माणसां तै घर खचाखच भरर्‌या था

काज की बात दादी तै पूछै कौण
70 साल का बेटा रळदू भी मौण
छोटळा पोता दादी का घणा दुलारा था
आज काज की पूछण वोए आर्‌या था
दादी बात सुणकै चुप रहगी, बोली कोनी

रै दादी चुप रहगी, किसे कै जची कोनी
उस दिन तै दादी नै खाणा-पीणा छोड़ दिया
सुरती नै जींदे जी जणू बाणा छोड़ दिया

गाम्म म्हं फैलगी दादी की चुप्पी आळी खबर
दादी सुरती दुनिया तै जणू होरी थी बेखबर
बडळा बेटा रळदू तो घणाए बेचैन होग्या
हे राम, मेरी मां के चेहरे का रंग कित्त खोग्या

बेटा, आपणे घरां एक बड़ का पेड़ होया करदा
दादे ने तो पसंद कोनी था, मेरे मन म्हं बसा करदा
खेत म्हं तै आकै, बाळक ओड़ैए खिलाया करदी
जी की बताऊं सूं, उसनै मैं घणा चाया करदी

मेरी नजर वो पेड़ आपणै घर खात्तर सुब था
पत्ते उड़कै चले जांदे ज्यांतै पड़ोसी तंग था
मैं पीहर गई तो तेरे दादे नै वो बड़ कटवाया
मन्नै इसा लाग्गा जणूं उसका काज करवाया

मेरी उम्र कोए घणी बड़्याई की बात कोनी
जो जग मैं आया सै जावैगा, रवै साथ कोनी
जीवण काज तै आच्छा तो मेरी बात मान जाओ
गाम्म म्ह छोरियां का बढ़िया सा स्कूल बणाओ

दादी की बात का घर अर गाम्म म्हं मान होया
काज आळै पिस्सा तैं स्कूल का काम होया
गाम्म आळ्यां नै अपणी तरफ तै दिया चंदा
हर कोए चावै था, दादी का मन रवै चंगा
छोरियां कै तो कसूता चा सा चडर्‌या था
रै म्हारै गाम्म म्हं, म्हारा स्कूल बणर्‌या था!

एक रात दादी सुरती चाणचक डिगरगी
गाम्म आळ्यां पै तो जणू बिजळी सी पड़गी
दादी कै हाथ तै स्कूल का फीत्ता कटणा था
गाम्म गुवाण्ड म्हं उद्घाटन का कार्ड बंटणा था

दादी सुरती आज भी गाम्म म्हं जिंदा रह् सै
छोरियां कै स्कूल म्ह बेटियां खूब पढ़ैं सैं
स्कूल का जिलेभर म्हं रूक्का पडर्‌या सै
दादी सुरती का नाम स्कूल पै चढ़र्‌या सै

सम्पर्क : 09996548479

●●●

शिव कुमार कादियान की कविता

पिसती है सिर्फ जनता

नेता
लोगों को बहलाता है
नए-नए ख्वाब दिखाता है
कुर्सी पर बैठते ही
हम सबको आंख दिखाता है

पत्रकार
झूठी-सुच्ची खबरें लाता है
जनता की कम
अपनी अधिक बताता है।

पुलिसिया
डंडा मारे पैसा निकाले
गरीब के पेट पर लात मारे
अमीरों के तलवे चाटे

हिन्दी विभाग एम ए उत्तरार्द्ध, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय कुरुक्षेत्र

सम्पर्क : 088140-45070

●●●

मनीषा मणि की कविता

बदबू

किस ओर चला जा रहा है जीवन,
निरर्थक
व्यर्थ
लाचार
क्यों चेतना बांझ हो गई
और हो गई है
अपंग
मस्तिष्क में कूब निकल आया है
और हो गई हैं
पीप वाली फुंसियां
क्यों
कानों में राध पड़ गई है
और जिह्वा में छाले,
आंखें खुद को धृतराष्ट्र कहकर पुकार रही हैं
और
कोढ़ से गल गया शरीर,
और आती है बदबू....

सम्पर्क : 7057450175

●●●

सिनेमा में हरियाणा

सहीराम

यह पहली हरियाणवी फिल्म ''चंद्रावल'' के आने से पहले की बात है जब हिंदी की एक बड़ी हिट फिल्म आयी थी। नाम था 'नमक हलाल'। यह हिंदी फिल्मों में अमिताभ बच्चन का जमाना था और अमिताभ बच्चन की उन दिनों थोड़ा आगे-पीछे मिलते-जुलते नामोंवालो दो फिल्में आयी थी - एक 'नमक हलाल' और दूसरी 'नमक हराम'। 'नमक हलाल' में मालिक के नमक का हक अदा करने वाले जहां खुद अमिताभ बच्चन थे, वहीं 'नमक हराम' में फैक्टरी मालिक बने अमिताभ बच्चन अपने जिगरी दोस्त को इसलिए 'नमक हराम' मान लेते हैं क्योंकि खुद उन्होंने ही अपने इस जिगरी दोस्त को मजदूरों के बीच मजदूर बनाकर भेजा तो हड़ताल वगैरह तोड़ने के लिए था, लेकिन मजदूरों के दुख-तकलीफों को देखकर वह उनका हमदर्द बन जाता है। अच्छी बात यह है कि नमक हलाली हरियाणवियों के हिस्से आयी थी।

जी हां, 'नमक हलाल' नामक इस फिल्म में अमिताभ बच्चन ने एक ऐसे हरियाणवी युवक अर्जुन सिंह वल्द भीमसिंह वल्द दशरथ सिंह का किरदार निभाया है, जो अपने मालिक पर जान न्यौछावर करने को तैयार रहता है। उसके पिता ने भी इसी तरह नमक का हक अदा करते हुए अपने पुराने मालिक के लिए अपने प्राणों का बलिदान दे दिया था। जैसा कि हिंदी फिल्मों में होता है अमिताभ बच्चन के पिता का यह मालिक, उसके मौजूदा मालिक का पिता ही था।

खैर, यह किरदार ज्यादा समय तक हरियाणवी रंग में रह नहीं पाता। शुरूआती कुछ दृश यों में ही उसका यह हरियाणवी किरदार सामने आता है जो काफी फनी है, कॉमिक है। फिल्म ज्यों-ज्यों आगे बढ़ती है, उसकी यह पहचान खत्म हो जाती है और एक आम मुंबइया हीरो के रूप में ही सामने आता है।

बहरहाल इन शुरूआती दृश्यों को काफी पसंद किया गया। खासतौर से उन दृश यों को जब वह सपने में हरियाणवी लहजे में बड़बड़ा रहा होता है या फिर जिसमें वह नौकरी के लिए अपनी काबलियत बताते हुए कहता है कि इंग्लिश इज वैरी फन्नी लैग्वेज। हिंदी फिल्मों में यह शायद पहला हरियाणवी कैरेक्टर था। इससे पहले हिंदी फिल्मों में शायद ही कभी इतनी प्रमुखता से हरियाणवी कैरेक्टर आया हो।

भारतीय सिनेमा तो नहीं कहना चाहिए, लेकिन हिंदी सिनेमा में देश के किसी राज्य, किसी क्षेत्र या इलाके के किरदार को ऐसे ही फनी ढ़ंग से पेश ा करने का एक चलन रहा है। जैसे दक्षिण भारतीय चरित्र, जिनका 'अय्यो' या 'मुर्गा' कहे बिना काम नहीं चलता या फिर वह हैदराबादवाली 'दकनी हिंदी' बोलता नजर आता है। इन कैरेक्टरों को ज्यादातर पहले महमूद ने और फिर जॉनी लीवर ने निभाया।

बंगाली या मराठी कैरेक्टरों के साथ भी कुछ ऐसा ही होता रहा है। अवधी या भोजपुरी चरित्र भी कुछ ऐसी ही बंधी-बंधाई छवियों के साथ आते हैं। जैसे पहले भोले भाले नौकर आजकल उन्हें मूर्ख या बदमाश नेताओं के चरित्रों में पेश किया जाता है। इसी तरह जहां हिंदी में अनेकानेक फिल्में ऐसी बनी होंगी जिनमें हीरो के नाम-मल्होत्रा, खन्ना, कपूर, चोपड़ा आदि से ही पता चल जाता था कि उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि पंजाबी है। शायद इसकी वजह यह रही है हो हाल-फिलहाल तक ज्यादातर यही लोग फिल्में बना रहे थे। खैर, ऐसी फिल्मों में भी अगर कोई सिख कैरेक्टर आया तो वह भी कुछ-कुछ संता-बंता की तरह ही आया। मतलब इन फिल्मों में किसी क्षेत्र विशेष के ये चरित्र टुकड़ों-टुकड़ों में और फिलर्स के रूप में चंद बंधी-बंधाई छवियों के साथ आए।

जबकि दक्षिण का सिनेमा और इसी तरह बंगला तथा मराठी सिनेमा काफी समृद्ध रहा है। और उन फिल्मों में वहां का जनजीवन अपने पूरे सुख-दुख, सारी जटिलता और पूरी व्यापकता के साथ आता है। कला फिल्मों में तो आता ही है जिसके लिए बंगला, मराठी, मलयालम और काफी हद तक तेलगु तथा तमिल सिनेमा का नाम रहा है, बल्कि पापुलर सिनेमा में भी वह वैसे ही आता है, चाहे वैसी कलात्मकता के साथ ना आता हो और वहां भी छवि चाहे लार्जर दैन लाइफ रहती हो अर्थात जीवन चाहे अपने यथार्थ रूप में ना आता हो। हिंदी सिनेमा में जो हरियाणवी चरित्र आए, चाहे कितने ही सीमित ढंग से आए, वे भी इसी तरह आए-टुकड़ों-टुकड़ों में, फिलर्स के रूप में और कॉमिक कैरेक्टरों के रूप में जिनसे उस क्षेत्र के बारे में कुछ भी नहीं जाना जा सकता। ये कुछ बंधी-बंधाई छवियां ही होती हैं, फिर हरियाणवी चरित्रों के रूप में वह कोई पहलवाननुमा गुंडा हो या फिर पुलिसवाला।

अब बंगला, मराठी, मलयालम और तेलगु तथा तमिल सिनेमा तो काफी समृद्ध रहे हैं और बाकायदा बॉलीवुड की तरह वह भी उद्योगों की तरह ही चल रहे हैं। ऐसे में हिंदी भाषी क्षेत्र के सिनेमा को देखा जाए तो स्थिति भिन्न है। हिंदी सिनेमा या जिसे बॉलीवुड कहा जाता है, वह वैसा हिंदी सिनेमा नहीं है जैसे बंगला, मराठी या दक्षिणी भाषाओं का सिनेमा है। वास्तव में तो यह हिंदी-उर्दू सिनेमा रहा है। बल्कि पचास-साठ दशक तक तो एक तरह से यह उर्दू सिनेमा ही था। जब हिंदी फिल्मों के ज्यादातर लेखक और गीतकार उर्दू वाले ही थे, निर्माता और निर्देशकों में बड़ी संख्या पंजाबियों और बंगालियों की थी। और यहां तक कि दक्षिण भारतीय निर्माता भी जमकर हिंदी फिल्में बना रहे थे। इस माने में इसकी पैन इंडियन पहचान थी।

ऐसे में व्यापक हिंदी-उर्दू भाषी क्षेत्र के भीतर कुछ क्षेत्रीय सिनेमा की कोंपलें भी फूटी। इनमें सबसे उल्लेखनीय रहा-भोजपुरी सिनेमा। वैसे तो ''गंगा-जमुना'' जैसी बॉलीवुडीय फिल्म भी भोजपुरी में ही थी। लेकिन भोजपुरी सिनेमा की शुरूआत ''गंगा मैया तोहे पियरी चढ़ाएबे'' फिल्म से हुई बताते हैं। बताते हैं कि हमारे प्रथम राष्ट्रपति डा0 राजेंद्र प्रसाद की प्रेरणा से नजीर हुसैन ने यह फिल्म बनायी थी।

लेकिन आज भोजपुरी सिनेमा अपने आपमें एक बड़ा उद्योग है क्योंकि उसका एक बड़ा बाजार है। यहां यह उल्लेखनीय है कि यहां भी मुंबइया फिल्म उद्योग की तरह ही मसाला फिल्में ही बनती हैं - गीत संगीत तथा मारधाड़ से भरपूर और वैसे ही चलती भी खूब हैं। भोजपुरी सिनेमा की पहुंच कितनी बड़ी है इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि अमिताभ बच्चन जैसे कलाकार भी किसी भोजपुरी फिल्म में काम करने का मौका मिले तो छोड़ते नहीं। और भोजपुरी फिल्मों के पापुलर हीरोज को भी राजनीति में खूब सफलता मिल रही है - जैसे मनोज तिवारी दिल्ली से चुनाव जीत गए और रवि किशन भी जीते तो नहीं, पर राजनीति में जरूर आए। हालांकि राजस्थानी भाषा में भी कुछ फिल्में बनी। लेकिन यह भोजपुरी फिल्मों जितनी सफल नहीं हुयी।

सत्तर-अस्सी के दशक में जब यह क्षेत्रीय सिनेमा कुलबुला रहा था। उसी दौरान हरियाणवी की पहली फिल्म आयी 'चंद्रावल'। अगर हमारी जानकारी सही है तो उससे पहले हरियाणवी में कोई फिल्म नहीं बनी थी या शायद बनी हो तो 'हरफूलसिंह जाट जुलाणीवाला' टाइप की ही बनी हो। हालांकि उस जमाने में यह जरूर सुनने में आता था कि पहलवान मास्टर चंदगीराम फिल्मों में काम करने वाले हैं, वैसे ही जैसे दारासिंह ने फिल्मों में काम किया और कामयाब हुए। पर ऐसा हुआ नहीं।

खैर 'चंद्रावल' शायद पहली हरियाणवी फिल्म थी और इसे ऐसे लोगों ने बनाया जिनका साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र से थोड़ा-बहुत कुछ लेना-देना था। देवीश ांकर प्रभाकर और ऊषा शर्मा जैसे लोग इस फिल्म से जुड़े हुए थे। खैर, हरियाणा के जनजीवन या फिल्म कला से इस फिल्म का कोई खास लेना-देना नहीं था। हरियाणवी फिल्म यह इसी माने में थी कि एक तो इसमें हरियाणवी बोली का इस्तेमाल हुआ था। दूसरे यह एक गाड़िया लुहारों की लड़की की और गांव के एक बड़े चौधरी के बेटे की कुछ-कुछ वैसी ही प्रेमकथा थी, जैसी प्रेमकथाएं रचने पर हरियाणा के अनेक सांगी और भजनी अपने हाथ आजमा चुके थे।

बहरहाल,अपनी बोली की फिल्म को देखने की दर्शकों की भूख इतनी जबरदस्त थी कि इस फिल्म को भारी सफलता मिली। इसके बाद तो हरियाणवी फिल्मों की जैसी बाढ़-सी ही आ गयी और 'छैल गैल्यां जांगी', 'ले जागा लणिहार' टाइप की अनेक फिल्में आयी जो ना तो सफल हो पाई और ना ही किसी माने में उल्लेखनीय रही। 'चंद्रावल' के बाद जो दो अन्य फिल्में खासतौर से उल्लेखनीय रही, वे हैं - 'सांझी' और 'लाडो'।

'सांझी' पारिवारिक शत्रुता और जमीन के झगड़े से संबंधित फिल्म थी। सुमित्रा हुड्डा इसकी हीरोइन थी और इस फिल्म में बॉलीवुड के ओम पुरी, गोगा कपूर तथा सदाशिव अमरापुरकर जैसे कई जाने-माने एक्टरों ने काम किया था। ओम पुरी ने तो पारिवारिक हलवाहे और मजदूर का बहुत जानदार चरित्र निभाया था। यह फिल्म 'चंद्रावल' के मुकाबले कथ्य में भी बेहतर थी और कलात्मक रूप से। इस फिल्म को यथार्थवादी कहना तो शायद उचित नहीं होगा, लेकिन हरियाणवी जन-जीवन की एक झलक उसमें जरूर मिलती थी।

हरियाणवी फिल्मों में सबसे बोल्ड फिल्म रही-अश्विनी चौधरी की 'लाडो'। यह फिल्म उस समय आयी, जब हरियाणवी फिल्मों का बुलबुला फूट चुका था। यह फिल्म अपने कथ्य में तो बोल्ड थी ही कलात्मक रूप से भी बेहतर फिल्म थी। अश्विनी ने

टी वी के लिए काम करने और एक-दो छोटी फिल्में बनाने के बाद 'लाडो' बनायी थी यानी तब तक उनका हाथ काफी हद तक मंज चुका था। अब तो खैर वे एक सफल हिंदी फिल्म निर्देशक हैं।

बहरहाल 'लाडो' एक ऐसी औरत की फिल्म है, जिसका पति बाहर नौकरी करता है और उनके परिवार से काफी करीब से जुड़े एक लड़के से उसका एक्सट्रा मैरिटल अफेयर हो जाता है और वह गर्भवती हो जाती है। गांव के सामने उनके संबंधों की बात खुल भी जाती है। गनीमत यह है कि तब तक खाप पंचायतों का ऐसा बोलबाला नहीं था। पंचायत तो जरूर होती है और यह औरत काफी बोल्ड ढंग से पंचायत के सामने आती है और अपना पक्ष रखती है। इस बीच वह अपने दोनों परिवारों - मायके और ससुरालवालों के सामने भी अपना पक्ष रखती है। इसी प्रक्रिया में जिस लड़के से उसके संबंध बनते हैं, उसकी कायरता भी सामने आती है।

इसके बावजूद वह पूरी दृढ़ता से स्थिति का सामना करती है - घर, परिवार और पंचायत सब जगह। उसे नैतिकता से जुड़े सवालों से भी जूझना पड़ता है। लेकिन वह अपने इस संबंध को पाप नहीं मानती और दृढ़ता से तमाम हालात से जूझती है। यूं तो यह कहानी कहीं की भी हो सकती है। स्त्री-पुरूष के विवाहेत्तर संबंध कहीं भी बन सकते है। लेकिन हरियाणवी संदर्भ में इस कहानी को फिल्माना इसलिए खास है कि यहां ऐसे मामलों में गांव और पंचायत आदि का दखल बहुत होता है। वरना यह ऐसा मुद्दा होता है जिसे पति-पत्नी के बीच ही निपटना चाहिए और ज्यादा से ज्यादा अदालत में। खैर, फिल्म के अंत में उसका पति उसे अपना लेता है और इसके साथ ही फिल्म का सुखद अंत होता है।

हरियाणवी फिल्मों की लहर की कथ्य के रूप में यह सबसे बोल्ड तथा कलात्मक रूप से सबसे बेहतरीन फिल्म दुर्भाग्य से सबसे अंतिम फिल्म भी साबित हुई। अपने बोल्ड कथ्य के चलते या फिर सरकारी प्रोत्साहन न मिलने के चलते यह फिल्म बॉक्स आफिस पर उतनी सफल भी नहीं हो पायी। इसके बाद हरियाणवी फिल्म एक-आध कोई बनी तो होंगी, पर लोगों को वैसे ही याद नहीं जैसे 'चंद्रावल' से पहले की फिल्में याद नहीं।

इसके बाद हरियाणवी फिल्में भी नहीं बनी और हिंदी फिल्मों में भी न तो हरियाणवी चरित्र और न ही हरियाणवी जनजीवन के दर्शन हुए। यह गैप काफी लंबा रहा, लेकिन नयी सदी का पहला दशक बीतते-बीतते हिंदी फिल्मों में एक विस्फोट की तरह से हरियाणवी जनजीवन के विभिन्न रूप सामने आने लगे। अब हरियाणवी जनजीवन टुकड़ों-टुकड़ों में अपनी बंधी-बंधाई छवि के साथ सामने नहीं आ रहा और हरियाणवी चरित्र सिर्फ फनी और कॉमिक रूप में फिलर्स के तौर नहीं दिखाए जा रहे।

अब हरियाणवी जनजीवन और चरित्र अपनी बंधी-बंधाई छवियों से हटकर पूरी धमक के साथ फिल्मी पर्दे पर सामने आ रहे हैं। बेशक जिन फिल्मों में हरियाणवी जनजीवन और चरित्र प्रमुखता से उपस्थित रहे, वे लीक के हटकर बनी फिल्में तो नहीं थी और कला फिल्में तो बिल्कुल भी नहीं थी, लेकिन इन फिल्मों में हरियाणवी जनजीवन और हरियाणवी चरित्र जरूर लीक से हटकर रहे। इस दौर की जिन हिंदी फिल्मों में हरियाणवी जनजीवन के विभिन्न रूप प्रमुखता से सामने आए उनमें 'मटरू की बिजली का मंडोला', 'तेरे नाल लव हो गया' 'हाई वे', 'एन एच-10', 'गुड्डू रंगीला' और 'तनु वैड्स मनु रिटर्न' प्रमुख हैं।

यह वह दौर था जब भ्रूण हत्याओं और बिगड़ते लिंगानुपात के चलते हरियाणा एक तरह से सभ्य समाज के लिए लानत बना हुआ था, जब हरियाणा जमीन हड़पू नेताओं तथा लुटेरे उद्योगपतियों की चरागाह बना हुआ था, जब हरियाणा की जमीन से निकले क्रिमनल्स दिल्ली के दरवाजे को बुरी तरह खटखटाने लगे थे और खाप पंचायतें राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय मीडिया में अपनी बर्बरता के चलते चर्चा का विषय बनी हुयी थी। इन सभी फिल्मों के कथ्य के आधार मुख्यतः यही रहे।

'मटरू की बिजली का मंडोला' में एक उद्योगपति के लालच और लूट की उसकी तिकड़मों और उनके खिलाफ स्थानीय जनता की लड़ाई का चित्रण है। इसमें जहां प्रतिकात्मक रूप से एक गुलाबी भैंस मौजूद है तो जनता के लिए लडने वाला 'माओ' भी है। इस फिल्म में पंकज कपूर ने बहुत ही शानदार भूमिका अदा की और अपनी एक्टिंग का करिश्मा दिखाया है।

'तेरे नाल लव हो गया' फिल्म में एक क्रिमनल गैंग का बॉस एक हरियाणवी चौधरी है, जिसकी भूमिका ओम पुरी ने निभायी है। 'तेरे नाल लव हो गया' जहां एक लचर सी फिल्म थी, वहीं 'हाई वे' तथा 'एन एच-10' का कथ्य काफी इंटेंस ढ़ंग से सामने आता है। यह फिल्में भी अपराध की काली दुनिया से जुड़ी कहानियों की फिल्में ही हैं। ये दोनों फिल्में कुछ-कुछ उस धारा की फिल्म जिसे अनुराग कश्यप का स्कूल कहा जाता है।

'हाई वे' खासतौर से इसलिए उल्लेखनीय है कि इस फिल्म में रणदीप हुड्डा ने एक ऐसे अपराधी की भूमिका निभाई है, जो समाज की तलछट से निकला अपराधी है, लेकिन धीरे-धीरे जिसका मानवीय रूप सामने आता है। इस फिल्म में रणदीप हुड्डा तथा आलिया भट्ट दोनों ने ही बड़ी अच्छी एक्टिंग की है, जबकि 'एन एच 10' राजधानी और उसकी चमक-दमक से दूर एक अंधेरी और बर्बर दुनिया की फिल्म है।

'तनु वेड्स मनु रिटर्न' और 'गुड्डू रंगीला' खाप पंचायतों की बर्बरता और उनके खिलाफ लड़ते लोगों की फिल्में हैं। 'तनु वेड्स मनु रिटर्न' में नायिका कुसुम सांगवान का भाई, जो पहलवान

है, प्रेम विवाह करके गांव छोड़ता है और दिल्ली में रहकर अपनी बहन को पढ़ता-लिखाता है। यही लड़की फिल्म का मुख्य किरदार है, जो बोल्ड है, प्रेम करती है, उसके लिए लड़ती है, खुद अपने निर्णय लेती है और अंत में अपने प्रेम का बलिदान देती है।

इस फिल्म में खाप पंचायत का दखल तो दिखाया गया है और एक जगह तो लड़की को जलाकर मारने की कोशिश का दृश्य भी आता है जिसके खिलाफ लड़की का भाई लड़ता है और अपनी बहन के हक में खड़ा होता है, लेकिन 'गुड्डू रंगीला' तो पूरी तरह खाप पंचायत की बर्बरता की कहानी कहनेवाली फिल्म ही है। सुभाष कपूर की यह फिल्म उनकी पिछली फिल्मों ''फंस गए रे ओबामा'' या 'जॉली एल एल बी' जैसी व्यंग्य फिल्म नहीं है और खापों की बर्बरता शायद इस फिल्म में पहली बार इतने व्यापक रूप में सामने आयी है।

वैसे तो इस दौर की सबसे बड़ी हिट फिल्म 'बजरंगी भाई जान' की शुरूआत भी हरियाणा की जमीन से ही होती है, लेकिन इस फिल्म का हरियाणवी जनजीवन से ज्यादा कुछ लेना-देना है नहीं, लेकिन यह जरूर है कि हिंदी फिल्मों में हरियाणवी जनजीवन के चित्रण की जो प्रक्रिया शुरू हुयी है, वह यहीं रुकने वाली नहीं है।

बताया जा रहा है कि आमिर खान की आगामी फिल्म, जिसकी चर्चा अभी से शुरू हो गयी है, 'दंगल' एक हरियाणवी पहलवान की ही कहानी है कि कैसे वह अपनी बेटी को कुश्ती के क्षेत्र में कामयाब बनाता है। बताते हैं कि आमिर खान ने इस फिल्म के लिए खास तौर से हरियाणवी बोली सीखी है। उम्मीद करनी चाहिए कि आगे भी हिंदी फिल्मों में हरियाणवी जनजीवन की कुछ यथार्थवादी झलकियां अवश्य ही देखने को मिलेंगी।

सम्पर्क : 09990764810

●●●

देसा की टेक

एक चोर देसा के घर में घुसकर उसका लगभग सारा सामान चुराकर अपने घर की ओर रवाना हो गया।

देसा ने रास्ते में अपना सामान देखा तो कंधे पर कम्बल लेकर चोर के पीछे पीछे उसके घर में घुसा और कम्बल ओढ़ कर फर्श पर ही लेट गया।

तुम कौन हो और मेरे घर में क्यों हो, चोर ने पूछा।

'जब मेरी सभी चीजें यहां हैं। तो अब से यही मेरा घर हो गया, देसा ने कहा

उर्दू लोक कथा

अपना-अपना सुख

एक बार काबुल का रहने वाला एक आदमी हिन्दुस्तान आया। यहां के किसी शहर में घूमते हुए उसने मिठाई की एक दुकान देखी। दुकान में भांति-भांति की छोटी-बड़ी मिठाइयां सजी हुई थी।

वह हिन्दी के दो-चार शब्द ही जानता था। वह मिठाई की दुकान पर गया और एक खास तरह की मिठाई की ओर इशारा किया। वह मिठाई दिखने में बहुत स्वादिष्ट लगती थी। हलवाई ने समझा कि वह उसका नाम पूछ रहा है, सो उसने कहा, 'खाजा।' 'खाजा का मतलब खा लो भी होता है। काबुली सिर्फ दूसरा मतलब ही जानता था। सो वह लपक कर आगे बढ़ा और दोनों हाथों में खाजा भरकर मजे से खाने लगा।

हलवाई ने उससे मिठाई के पैसे मांगे। पर काबुली के कुछ पल्ले नहीं पड़ा। वह खुशी-खुशी वहां से चल पड़ा। हलवाई ने दरोगा को शिकायत की। दरोगा ने काबुली को गिरफ्तार कर लिलया। उसके आदेश से काबुली का सर मूंड कर सफाचट खोपड़ी पर तालकोल पोत दिया गया। फिर उसे गध ो पर बिठाकर ढोल नगाड़ों के साथ शहर से बाहर निकाल दिया, ताकि सब जान जाएं कि कानून तोड़ने वाले के साथ यहां कैसा सलूक किया जाता है। पर इस दंड को काबुली ने कौतुक समझा। गधे की सवारी, ढोल-ढमाका और जुलूस से उसे मजा आया और गलियों में उसे देखने को उमड़ी भीड़ से उसने अपने को सम्मानित महसूस किया।

काबुल लौटने पर लोगें ने उससे पूछा, 'हिन्दुस्तान कैसा लगा?'

उसने जवाब दिया, 'क्या कहना! बहुत खूबसूरत मुल्क है। बहुत अमीर! वहां हर चीज मुफ्त में मिलती है। किसी दुकान पर जाकर जो मिठाई तुम्हें अच्छी लगे, उसकी ओर इशारा भर करना होता है। दुकानदार तुमसे कहेगा कि जितनी खा सको खा लो। फिर ढोल और शहनाई के साथ सिपाही आएंगे। वे तुम्हारी हजामत बनाएंगे, सर को रंगवाएंगे, सवारी के लिए तुम्हें बढ़िया गधा देंगे और गाजों-बाजों के साथ गलियों में तुम्हारा जुलूस निकालेंगे। और इन सबके बदले में तुम्हें कुछ नहीं देना पड़ता। बड़ा प्यारा मुल्क है! लोग इतने मेहमाननवाज और अच्छे हैं कि कुछ न पूछो!'

●●●

हरियाणा के नृत्यगीत

निर्मला

हरियाणा के नृत्यगीतों में महिलाएं नाचते-गाते, हँसते-खिलखिलाते हुए अपनी पीड़ाएं भी व्यक्त करती हैं, अधिकार मांगती हैं। नृत्यगीतों में वे सम्पूर्ण ऊर्जा के साथ खुलकर अभिव्यक्त होतीं हैं, समस्त वर्जनाओं-बंधनों को तोड़कर। लेकिन महाविद्यालयों-विश्वविद्यालयों के युवा-महोत्सवों में 'मैं छैल गैलां जांगी बाजण दे मेरा नाड़ा', 'मेरा नौ डांडी का बीजणा, 'जेठ मेरा दस पढरया स', 'कोठे चढ ललकारुं देखे ओ मेरा दामण ल्याइये', आदि दस-पन्द्रह नृत्यगीत ही बार-बार दोहराए जाते हैं, जिसमें लटकों-झटकों पर जोर रहता है। जबकि सैंकड़ों नृत्यगीतों में हरियाणा का सम्पूर्ण लोकजीवन तीज-त्यौहार, सामाजिक ताने-बाने, जाति-व्यवस्था, किसानी संकट, सुख-दुख के अनुभवों के साथ उल्लास के साथ मौजूद है। यहां कुछ नृत्यगीत यहाँ प्रस्तुत हैं। -

-1-

सास मेरी तो न्यूं उठ बोली
बहुअड़ चौका ला ले ना तं र ततैया बोल्या
नई नहेली ऐसी आई
सासड़ लीपी चौके म्ह तं र ततैया बोल्या
सुसर मेरा तो न्यूं उठ बोल्या
बहुअड़ फळसा ठाठे ना तं र ततैया बोल्या
नई नहेली ऐसी आई
सुसरे न ठाठया फळसे म्ह तं र ततैया बोल्या
जेठ मेरा तो न्यूं उठ बोल्या
बहुअड़ स्यानी भे दे न तं र ततैया बोल्या
नई नहेली ऐसी आई
जेठा गेरया खोरयां म्ह तं र ततैया बोल्या
देवर मेरा तो न्यूं उठ बोल्या
भाभी दूधा काढो ना तं र ततैया बोल्या
नई नहेली ऐसी आई
देवर बांधया खूंटे क तं र ततैया बोल्या
नणद मेरी तो न्यूं उठ बोली
भाभी भिछा घालो ना तं र ततैया बोल्या
नई नहेली ऐसी आई
नणदल घाली जोगी क तं र ततैया बोल्या
राजन मेरा तो न्यूं उठ बोल्या
गौरी छेज बिछा दे ना तं र ततैया बोल्या
नई नहेली ऐसी आई
राजन बांधया पलंगा क तं र ततैया बोल्या
सास मेरी चौक म्ह नाचे
सुसरा नाचे फळसे म्ह तं र ततैया बोल्या
जेठ मेरा खोरयां म्ह नाचे
देवर नाचे खूंटे प तं र ततैया बोल्यानणद मेरी जोगी क नाचे
राजा नाचे पिलंगा प तं र ततैया बोल्या
सारो कुणबो नाचण लाग्यो
मैं र तमासा देखण न तं र ततैया बोल्या

-2-

मैं नी सोहरे जाणा बापू मैं नी सोहरे जाणा
सोहरा मेरा सराबी बापू पी के करै खराबी बापू
ओ कर दी बरबादी बापू मैं नी सोहरे जाणा
जेठ तो रहंदा अड़ीज बापू रोज काळजा धड़कीज बापू
रखदा है मूंछड़ी बापू मैं नी सोहरे जाणा
देवर मेरा लफगा बापू खेले गुली डण्डा बापू
फिरदा नंग धड़ंगा बापू मैं नी सोहरे जाणा
नणदल मेरी मोटी बापू खाके दरजन रोटी बापू
गाळा कढदी छोटी बापू मैं नी सोहरे जाणा
आवे सोहणा माही बापू मेरा टोळ चपाई बापू
तुर जाणा मैं सोहरे बापू मैं नी सोहरे जाणा

-3-

एक कमला छोरी ओढ की
जंगळ म्ह चरावै भैस मेरा हो दिल धड़कै
छोरी अड़ैतै भैंस हटा ले
मेरा खाया चिणा का खेत मेरा दिल धड़कै
छोरे ऊंची र बाड़ लगा ले
मेरी अड़ै ही चरैगी भैंस मेरा ओ दिल धड़कै
छोरी म्हारे डेरे म्ह आइए
तेरी ओड़ै करूंगी मलाकात मेरा ओ दिल धड़कै
छोरी थारे डेरे म्ह आग्या
पड़ी ओढां की किलकार मेरा ओ दिल धड़कै
आ गए माई अर बाप

छोरी मेरी जान बचाइए मेरा ओ दिल धड़कै
छोरे खड़की र पाड़ लिकड़ज्या
तेरे पै खो दयूं जान मेरा ओ दिल धड़कै
छोरी मेरी ए जान बचाइए
तूं लगै धरम की भाण मेरा ओ दिल धड़कै

-4-

बाबा आ उतरे आ उतरे म्हारे बागां म्है ला लिया डेरा
बाबा ले चुगटी ले चुगटी मैं तो ल्याई बेलवा भर के
चुगटी ना लेंदा ना लेंदा मैं तो ल्यूंगा जोबन का झटका
झटका ना देंदी ना देंदी मैं तो ले री बेगाना लटका
बाबा आ उतरे आ उतरे म्हारे बागां म्है ला लिया डेरा
बाबा ले चुगटी ले चुगटी मैं तो ल्याई बेलवा भर के
चुगटी ना लेंदा ना लेंदा मैं तो ल्यूंगा जोबन का झटका
बाबा आ उतरे आ उतरे म्हारे महलां म्है ला लिया डेरा
बाबा ले चुगटी ले चुगटी मैं तो ल्याई बेलवा भर के
चुगटी ना लेंदा ना लेंदा मैं तो ल्यूंगा जोबन का झटका
बाबा आ उतरे आ उतरे म्हारी सेजां प ला लिया डेरा
बाबा ले चुगटी ले चुगटी मैं तो ल्याई बेलवा भर के
चुगटी ना लेंदा ना लेंदा मैं तो ल्यूंगा जोबन का झटका

-5-

मैं तनै बरज रही ए मेरी मां
हळ जाटू ग ना जांगी
जद हळ जाटू रोटी खावै
रोटियां पर खीचड़ो जचावै मेरी मां
हळ जाटू ग ना जांगी
जद री पढणिया रोटी जीमै
चार फलकियां खावै मेरी मां
हळ जाटू ग ना जांगी
जद हळ जाटू नहावण लागै
न्हाऐड़ै पर साबण लगावै मेरी मां
हळ जाटू ग ना जांगी
जद री पढणिया न्हावण लागै
साबण लगागे न्हावै मेरी मां
हळ जाटू ग ना जांगी
जद हळ जाटू सोवण लागै
गुदड़ै पर भाखलो बिछावै मेरी मां
हळ जाटू ग ना जांगी
जद री पढणिया सोवण लागै
फूलां गी सेज बिछावै मेरी मां
हळ जाटू ग ना जांगी

-6-

सासुल पनिहा कैसे जाऊं रसीले दोनों नैना
बहू ओढ़ो चटख चुनरिया
सिर धर ले हो लेजूं गगरिया
छोटी ननदी ले ल्यो साथ रसीले दोनों नैना
सासुल पनिहा कैसे जाऊं रसीले दोनों नैना
उनै ओढी चटख चुनरिया
सिर धर लई लेजूं गगरिया
छोटी ननदी ले लई साथ ससीले दोनों नैना
सासुल पनिहा कैसे जाऊं रसीले दोनों नैना
तुम बैठो कदम्ब की छइयां
मैं भर लेऊं ठण्डो पनिहा
ननदी घर मत कहियो जाय रसीले दोनों नैना
सासुल पनिहा कैसे जाऊं रसीले दोनों नैना
ननदी असल छिनरिया
वाने जाय सिखायो भइया
भइया तेरी बहू के दो यार रसीले दोनों नैना
सासुल पनिहा कैसे जाऊं रसीले दोनों नैना
जेठ में ब्याह करुंगी
असाढ़ में गौनो करुंगी
ननदी फिर ना लूं तेरो नाम रसीले दोनों नैना
सासुल पनिहा कैसे जाऊं रसीले दोनों नैना

-7-

चल रे मन मीअवा खाने
लपक झपक मनै मीअवा तुअरी
लागो चुन्दड़ी में दाग
पांच रूपइया तोहे दूंगी धुअबी
धो दे चुन्दड़ी को दाग
पांच रूपइया मोहे ना चाहियां
कर ले सादी को करार
सादी सवादी छोरा हम ना समझते
सादी मेरे बाबुल के हाथ
चल रे मन मीअवा खाने
लपक झपक मनै मीअवा तुअरी
लागो चुन्दड़ी में दाग

सम्पर्कः 09468335275

संस्मरण

भारत-पाकिस्तान विभाजन : जैसा मैंने देखा

डा. लक्ष्मण सिंह

मैं जब जाट हाई स्कूल की प्रथम कक्षा में दाखिल हुआ, उस समय 10-11 वर्ष का था। स्कूल जींद के रेलवे स्टेशन से पूर्व की ओर आधा-पौना कोस पर स्थित है। स्कूल के आसपास कोई बस्ती नहीं थी। स्कूल भवन के पश्चिम में एक कुआं था, जिसमें से विद्यार्थी स्वयं ही डोल से पानी निकाल सकते थे। 10-12 बड़े मटके भी उत्तर की दीवार के पास रखते थे। चार-पांच लोटे भी मोटे तारों से बांध कर रखे थे। उनके हैंडल भी बने थे। हम उनको फंटी कहते थे। पानी मटके से निकाल कर 'ओक' से पीते थे।

स्कूल का मेन गेट (मुख्य द्वार) पश्चिम की ओर खुलता था। दस-बारह मध्यम आकार के कमरे थे। इनमें से कुछ अंदर ओर बाहर रोड की ओर यानी दोनों ओर खुलते थे।

चौथी श्रेणी तक के छोटे विद्यार्थी तप्पड़ पर बैठते थे, जो एक फुट से डेढ़ फुट चौड़ा और तीस-चालीस फुट लंबा होता था। वह पटसन का बना होता था। छुट्टी के समय पहाड़े कहने से पहले उसे लड़के लपेट-लपेट कर रख देते थे।

मिडिल व मैट्रिक के विद्यार्थी भी वहीं पढ़ते थे। कमरों में बैंच होते थे। वे उन पर बैठकर पढ़ते थे। कमरों में किसी भी श्रेणी में तीस से अधिक विद्यार्थी नहीं थे। प्राइमरी कक्षाओं में ही अधिक संख्या में विद्यार्थी थे। उस समय प्राइमरी चौथी श्रेणी तक होती थी। पांचवीं से अंग्रेजी की पढ़ाई चालू होती थी।

स्कूल का वातावरण बहुत शांत था। हम पहली जमात में उर्दू का कायदा पढ़ते थे। बस! एक कायदा ही था हमारी पुस्तक। तख्ती को धोकर, उसे गांदनी (खड़िया) मिट्टी से पोतकर सुखा लेते थे धूप में। मिट्टी की दवात में पानी में सुखी काली स्याही को फोल कर अच्छी तरह मिला लेते थे। एक छोटी सी लकड़ी की डंडी रखते जरूर थे, हाथ में पर मारते किसी को नहीं थे।

जींद में दसवीं तक के दो ही स्कूल थे। एक जाट हाई स्कूल और दूसरा राजकीय हाई स्कूल। यह रानी तालाब के पास जींद शहर के अंतिम छोर पूर्व की ओर स्थित था। उसमें केवल शहर के लड़के ही (प्राइमरी में) पढ़ते थे। गांवों में कहीं-कहीं प्राइमरी स्कूल थे। हमारे स्कूल में रेलवे की गार्ड लाईन, लोको, कैरेज एंड वैगन्ज विभाग के विद्यार्थी पढ़ते थे खासतौर पर प्राइमरी तक। हमारी जमात में 25-30 विद्यार्थी थे, जिनमें 10-12 बच्चे मुसलमान थे।

हम पहले टी.एक्स.आर. की कोठी के साथ बने क्वार्टर में रहते थे। हैड टी.एक्सर संतराम सैनी थे। जब मैं क्वार्टर पर अकेला होता था, तो वे मुझे कोठी पर बुला लेते थे। पहले तो मेरी आयु-कद-काठी के हिसाब से पहली कच्ची क्लास में दाखिले को लेकर मजाक उड़ाते थे। धीरे-धीरे वे लिखने में मेरी मदद करने लगे। एक तख्ती, एक स्लेट-बत्ती, कलम-दवात, एक कायदा, बस हमारे पास पढ़ने का यही सामान थ। इसी को दो तनियों वाले झोले (थैले) में डालकर रखते थे। रोशनी के लिए बड़े घरों में लैंप या बड़ी लालटेन, मध्यम परिवारों में बीच की लालटेन और गरीब घरों में छोटा सा गोल बत्ती का लैंप, जिसको हम ढिबरी कहते थे। प्रकाश के लिए केवल यही कुछ था। न बिजली थी, न रेडियो, न ट्रांजिस्टर।

रेलवे स्टेशन से शहर में तांगे जाते थे। सड़कें इंटों की थी, टूटी-फूटी। रेलवे के किसी विद्यार्थी के पास साईकिल नहीं था। सभी स्कूल में पैदल जाते थे। रोजाना का काम था - कभी महसूस नहीं हुआ। सभी खुश रहते थे। खेलते-कूदते भागते-दौड़ते थे। कुश्ती-कबड्डी का शौक था। रात होते ही सब जगह सुन्न-सन्नाटा हो जाता था।

कभी-कभी दिल्ली से रेलवे कर्मचारियों के परिवारों को दिखलाने के लिए पिक्चर आ जाती थी और वह रेल के डिब्बे के पर्दे पर ही दिखाई जाती थी। लोग सामने बैठ जाते थे और ब्लैक एंड व्हाईट फिल्म का मजा लेते थे। एक पिक्चर हमने भी देखी थी। नाम क्या था यह तो नहीं मालूम, पर यह गाना था -'आया आया रे रेलू गंडेरी वाला।' उस पिक्चर का हमने 'रेलू गंडेरी वाला' ही नाम रख लिया था। जींद में कोई सिनेमा नहीं था।

जींद रेलवे स्टेशन पर बिजली नहीं थी। बड़े-बड़े पैट्रोमेक्स के हंडे जलते थे। वे भी कहीं-कहीं जहां जरूरत हो। हम रौनक-मेला देखने के लिए रेल-गाड़ियों के समय पर रेलवे स्टेशन पर चले जाते थे। शाम को मैदान में कबड्डी होती थी। रेलवे स्टेशन के पास एक रेलवे इंस्टीच्यूट था, जहां इंडोर गेम खेले जाते थे। कभी-कभी हम देखने चले जाते थे। खेल हमें कोई खेलना नहीं आता था। पास

में ही कबड्डी का ग्राऊंड बना हुआ था - वहीं लड़कों ने जमीन खोद कर मिट्टी नरम करके कुश्ती के लिए अखाड़ा बना रखा था।

जब हम दूसरी जमात में थे, तो दिसम्बर 1946 में कुछ मुसलमान लड़कों ने बताया कि ऊपर से (रेलवे के बड़े अधिकारियों से) चिट्ठी आई है कि वे हिन्दुस्तान में रहना चाहते हैं या पाकिस्तान में जाना चाहते हैं। हमें यह तो पता लग गया था कि हिन्दुस्तान में जहां मुसलमान ज्यादा रहते हैं - वो भाग पाकिस्तान बनेगा, पर यह हमारे लिए सोचने की बात थी कि रेलवे कर्मचारियों से अपनी इच्छा क्यों मांगी गई। हमारे स्कूल में, जींद में तो सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा था।

जब मस्जिद से मुल्ला ऊंची आवाज में बोलता था, तो मुसलमान मस्जिद में चले जाते थे - नमाज पढ़ते थे। सन् 1946 की ईद पर हिन्दू-मुसलमान गले मिलते हमने खूब देखे। पांचवीं जमात में एक मुसलमान लड़का मुहम्मद (मुझे पूरा नाम याद नहीं) ईद के दिन मेरे गले से लग कर बहुत खुश हुआ। प्राइमरी स्कूल तक की कक्षाओं में उसकी बड़ी ध ाक थी और वह हर किसी को पीट देता था। एक बार उसने मुझ पर भी हल्ला बोला था। पिछले वर्ष जब मैं पहली कक्षा में था। पर मैंने उसको लंबा पाकर लात-मुक्कों-घुसों से उसकी खूब छिताई की थी। यहां तक कि उसके मुंह से खून बह निकला था। उसने छाती से मिलने के बाद कहा था - भाई लछमन! मेरे अब्बा की बदली पाकिस्तान की हो गई है - गलती मैंने बहुत की है। मुझे माफ कर देना। अब क्या पता कभी मिलें या न मिलें और उसकी आंखों से पटर-पटर आंसू ढुलकने लगे। मैंने यही कहा, 'जिन्दे जी आदमी मिलता रहता है। इसमें जी छोटा करने की क्या बात है? उसने हाथ मिलाया और कई बार कस के हिलाया और आंखें पोंछता हुआ चला गया। दो-तीन लड़के और भी खड़े थे। मैंने महसूस किया कि व्यक्ति बिछोड़े के वक्त कितना सहृदय हो जाता है!

1947 का नया साल आरंभ हुआ। तब मैं तीसरी जमात में था। पहली में भी प्रथम रहा था दूसरी में भी। ईनाम में तो कापी पैंसिल ही मिली, पर यश तो बढ़ा। मैं जब भी प्रथम आता था, तो बड़ा भाई मुझे एक आना (इकन्नी) ईनाम में देता था। और मैं उसे खुशी-खुशी ग्रहण करता था। चाट-भल्ले-पानी-पताशे पहले भी थे और आज भी। बल्कि पहले शुद्ध और अच्छे तेल/घी के होते थे, पर मेरा शौक घी, दूध, मक्खन, मलाई, खीर, हलवे में था। यानी दूध ा की बनी हुई खाद्य सामग्री में, जिसमें खोआ शामिल है। दाल न बनी तो कटोरी में शक्कर में घी मिलाकर रोटी के साथ खा लेता था। ये सारी चीजें घर पर ही होती थी - सो पैसा भी खर्च नहीं होता था।

नए सत्र में हमारी जमात में विद्यार्थियों की संख्या घट गई। मुसलमान लड़के दो-तीन ही रह गए थे। वे भी जाने की बातें करते थे। अब हमारी किताबें भी बढ़ गई। गणित (हिसाब) की पुस्तक भी मोटी हो गई और उर्दू की भी मुटिया गई। हमारे गुरु व मेरे बड़े ताऊ जी देश के स्वतंत्रता सेनानियों महात्मा गांधी, सुभाष चंद्र बोस, चंद्रशेखर आजाद, सरदार भगत सिंह, लाला लाजपत राय, राजगुरु, सुखदेव, पं. जवाहर लाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, डा. बी.आर. अम्बेडकर और बहुत से अन्य बांके बहादुरों के बारे में बतलाया करते थे। अब तो सारा देश उन योद्धाओं के गीत गा रहाथा। भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहा था। हिटलर का नाम भी सुना था और जर्मनी के ऊपर परमाणु बम्ब की विनाश लीला भी सुन रखी थी।

गर्मियों की दो महीने की छुट्टियां हो गई। इस बार मुझे कहीं बाहर नहीं जाने दिया। पिता जी कभी-कभी मुझे अपने साथ पशु चराने ले जाते थे। कभी-कभी हमारे पास शेष बची जमीन में जो दो बड़े परिवारों की थी, में ले जाते थे। दो महीने गांव में ही बीते। गांव का मैं पहला ही विद्यार्थी हूं। उससे पहले कोई भी अपनी किसी संतान को स्कूल नहीं भेज पाया। स्कूल नरवाना में था - ज्यादा दूर भी नहीं था। पर कोई पढ़ता ही नहीं था। न कोई प्रेरणा ही देने वाला था। हमारे परिवार के लोग मुझ पर बड़ी-बड़ी उम्मीदें लगाए बैठे थे।

खैर! अगस्त आया। स्कूल में गहमा-गहमी बढ़ी। बड़े लड़के नाटक व अन्य सांस्कृतिक कार्यों की रिहर्सल करने लगे। पं. जवाहर लाल नेहरू को स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में पद व गोपनीयता की शपथ ग्रहण करवाई। पं. जवाहर लाल
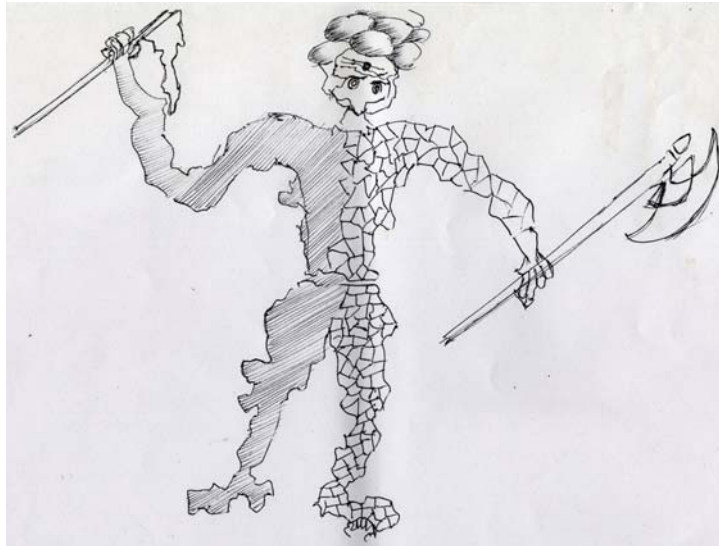
नेहरू ने भारत के प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में लाल किले की प्राचीर से तिरंगा झंडा फहराया। पूरा भारत उल्लासित था। कालेज व स्कूलों में झंडा फहराने का पावन कर्म प्राचार्य व मुख्याध्यापक कर रहे थे। देशभर में देश भक्ति के नाटक, सांस्कृतिक कार्यक्रम किए जा रहे थे - झांकियां निकाली जा रही थी। देश में खुशी की लहर दौड़ रही थी। हम नाटक-सांस्कृतिक कार्यक्रम देखकर बहुत प्रसन्न थे। स्कूल की ओर से प्रत्येक विद्यार्थी को चार-चार लड्डू भी मिले थे।

उल्लास के बाद धीरे-धीरे उमस के बादल छाने शुरू हो गए। आठ-दस दिन ही गुजरे होंगे, कहीं-कहीं से साम्प्रदायिक दंगों की खबरें आने लगी। कभी कोई गुरु जी बतला देते थे, कभी कोई वरिष्ठ साथी। रेलवे के कर्मचारी भी इस तरह की बातें करते थे। वे आठ-आठ,दस-दस की टोली में रहने लगे थे। हमारे क्वार्टर के पिछली लाईन में एक कर्मचारी अब्दुल्ला रहता था - वह बहुत डरा हुआ था। पर उस क्षेत्र के बहुत से कर्मचारी साथियों ने उसकी सुरक्षा का आश्वासन दे रखा था। एक दिन 20-25 आदमी लाठी भाले लिए शहर की तरफ जा रहे थे - बहुत गुस्से में थे कि क्या माजरा है। हमें बतलाया गया कि कोई बख्शी नाम का मुसलमान है। उसने अपनी हवेली में आसपास के मुसलमानों को संरक्षण दे रखा है - वे उसे ही सबक सिखाने जा रहे हैं। हवेली बहुत बड़ी है और उसके ऊपर चारों ओर बंदूकधारी बैठे हैं। पर अभी तक किसी प्रकार की वारदात की खबर नहीं आई है।

कई स्थानों पर मुसलमानों को पाकिस्तान सुरक्षित भेजने के कैंप लगे हुए थे। एक कैंप टोहाना में था। बाकी और कहां थे, मुझे पता नहीं था। हमारी तीस हजारी में भी दहशत का माहौल था। रात के एक-डेढ़ बजे मेरा बड़ा भाई क्वार्टर पर आया और मुझे और भाभी को जगाया। भाभी की गोद में एक लड़की थी। थैले में कुछ कपड़े डाले और कहा-'चार बजे की शटल से नरवाना जाना है। जींद में दंगे होने का खतरा है। गांव में ठीक रहेगा।' हम उसके पीछे-पीछे चल दिए। सात-आठ आदमी भाई के साथ और आए हुए थे। हम लाईनें पार करके स्टेशन पर पहुंचे और स्टेशन पर बने कार्यालयों की कतार में पहले आफिस के बरांडे में बैठ गए। इस प्रकार से कि दो ओर से दीवार की आड़ लेकर सुरक्षित हो सकें। वह बरांडा टी.एक्स.आर. के कार्यालय का था।

दो-ढाई बजे होंगे नरवाना की ओर से एक ट्रेन आई। उसमें औरतें, आदमी, बच्चे दुख-दर्द के साथ कराह रहे थे। मैं उठकर देखने चला गया। बहुतों के पट्टियां बंधी थी। किसी के हाथ में, किसी के सिर में और कुछ के तो खून रूक कर सूख भी गया था। वे लोगों को आपबीती बतला रहे थे। बेहद हृदय-विदारक दृश्य था। कुछ मृतक तो पिछले स्टेशनों पर उतार लिए गए थे। कुछ गंभीर जख्मी भी पिछले स्टेशनों पर उतार कर अस्पतालों में भेजे जा चुके थे। जो लोग उस गाड़ी में थे - वे तो फर्स्ट एड करके आगे भेजे गए थे। गाड़ी को आगे दिल्ली जाना था।

स्टेशन पर पहले से ही शहर के लोगों ने और विभिन्न संस्थाओं तथा स्वास्थ्य विभाग ने खाने-पीने का, भोजन के पैकेट वगैरह का प्रबंध कर रखा था। वहां पर बहुत से डाक्टर, कम्पाऊंडर और नर्सें सेवा में लगी थी। वातावरण बहुत संवेदनशील हो रहा था - सेवादारों और दर्शकों में बहुत क्षोभ था। मैंने कई डिब्बों में घायल पुरुष-स्त्री-बच्चों को देखा-क्षोभ भी था, दुखी भी। मैं इसके अतिरिक्त कर भी क्या सकता था। इतने में ही एक आदमी ने मुझे पीछे से पकड़ कर खींच लिया-'ये रहा' वह बोला। वह हमारी तीस हजारी का ही एक रेलवे कर्मचारी था। मुझे बुरा-भला कहकर वह मुझे बरांडे में ले गया। भाई ने भी कहा-'मनै कह्या था अक उरैए बेठिये - निचला नी रह्या गया।' मैं चुपचाप सुनता रहा - 'इब हाल्या, तौ छितैगा।' और वह घूरता हुआ चला गया।

कुछ देर के बाद वह पांच-सात आदमियों के साथ फिर आया। 'उरैए बैठे रहियो, दंगे भड़कण का खतरा सै। हाम 'सटल' देख क्यै आर्‌हे सां।' पांच-सात मिनट बाद ही मेरे कान के पास से एक जोरदार सीं की आवाज गुजरी। भाभी बोली - 'गोली चाल रही सैं, उरै आज्या।' और उसने मुझे खींच लिया। 'कुछ नी होन्दा।' मैंने कहा, पर उसने मेरी बात अनसुनी कर दी - हाथ पकड़े रखा।

कुछ देर बाद भाई आया और बोला, 'चलो, सटल जावैगी।' हम उसके पीछे-पीछे चल दिए। तीन-चार लाईनें पार करने के बाद हम एक डिब्बे में बैठ गए। बड़े भाई की हमारे साथ नरवाना जाने की योजना नहीं थी, लेकिन उनके साथियों ने कहा कि उसे साथ जाना चाहिए। जींद की उसकी ड्यूटी का काम वे संभाल लेंगे।

थोड़ी देर बाद 'पकड़ो! पकड़ो' का शोर फिर सुनाई दिया और बीस-तीस लोगों का झुंड किन्हीं दो लोगों को पकड़ कर ले गया। हमें बाद में भाई ने बतलाया कि दोनों मुसलमान थे। बोले 'हिन्दू हैं, पर पिछाण लिए। उनको मार-पीट कर कुछ लोग लेगे।' आगे क्या बनेगा उसे पता नहीं था। मैंने सोचा 'जो बनना था, बन चुका, अब और क्या बनेगा।' साढ़े चार बजे से चली शटल (शटल एक ट्रेन का नाम है, जो जींद से जाखल और जाखल से जींद आती-जाती थी।) छह बजे नरवाना पहुंची। एक घंटे की यात्रा डेढ़ घंटे में पूरी की। पर सुरक्षित पहुंच गई। सूरज निकल आया था। हमारा गांव सुन्दरपुरा नरवाना रेलवे स्टेशन से दक्षिण की ओर लगभग दो मील की दूरी पर है। हम गांव की तरफ चल दिए।

रेलवे स्टेशन के साथ लगता क्षेत्र बहुत बड़ा मैदान था। उसके पश्चिम में 10-15 मकान बने हुए थे, जिन्हें ढाणी कहा जाता था। उस मैदान में आक और झाड़ियां ही थी। मैदान के

पश्चिम में रजबाहा था और उस पर एक पुलिया बनी हुई थी। मैदान में दो-तीन लाशें पड़ी थीं-आसपास ही लहू भी बिखरा पड़ा था। कई जगह खून के लौंदे (ज्यादा खून) पड़े थे। वहां का वातावरण भी भयावह था। जो ट्रेन जींद गई थी, वह ट्रेन पहले नरवाना आई थी और उसी के भयंकर दृश्य को देखकर लोगों का खून खोल गया। ये लाशें सुबह सैर करने आए या निबटने आए मुसलमानों की थी। उस समय अंधेरगर्दी चल रही थी। नेता लोग शांति व सद्भाव बनाए रखने की अपील कर रहे थे, पर कानून व्यवस्था के लिए जिम्मेवार सरकारी मशीनरी की स्वयं चूलें हिली हुई थी। उस समय था जंगल का राज। जिसकी लाठी उसकी भैंस। हत्याओं के साथ-साथ लूटपाट तथा अन्य सभी संभव अपराध जारी थे। पुरानी रंजिशें भी इन अपराधों में जलती आग में घी का काम कर रही थी।

हम सात बजे के लगभग गांव में पहुंचे। नरवाना की घटनाओं का सभी को पता था। गांव में दो परिवार लुहारों के और एक तेलियों का था। कुल तीन परिवार मुसलमानों के थे। पूरा गांव उनकी सुरक्षा के लिए अड़ा हुआ था। उसी रात उन तीनों परिवारों को बैलगाड़ी, रेहड़े में उनके खास-खास सामान के साथ टोहाना के कैंप में ले जा रहे थे। पिता जी भी रक्षा दल के साथ गए थे। हमारे गांव से तो लुहारों व तेलियों को भेजना पड़ा, क्योंकि हमारा गांव छोटा है और वह नरवाना के पास भी है। बहुत से बड़े गांवों ने लुहारों व तेलियों को भेजा भी नहीं। कारण कि ये दोनों पेशेवर कौमें हर गांव की आवश्यकताएं पूरी करती हैं। इनके बिना किसान का काम नहीं चल सकता।

जब मैं दस-बारह दिन बाद जींद आया, तो जींद में हुई घटनाओं से भी दो-चार हुआ। बख्शी की हवेली में इकट्ठे हुए मुसलमानों ने वहां ली थी शरण, पर सरकार उन्हें कैंप में सुरक्षित भेजना चाहती थी। बख्शी और उसके साथियों ने उन्हें बहकाया और जाने नहीं दिया। जहां वे खुद मौत का शिकार हुए, वहां अन्य मुसलमानों को भी नुक्सान का सामना करना पड़ा। उस हवेली को लोगों ने घेर रखा था और अंदर से गोलियां चलाई जा रही थी। इसमें हिन्दू और मुसलमानों दोनों को ही नुक्सान उठाना पड़ा। अब्दुल्ला परिवार सहित उसी रात को क्वार्टर से निकल गया था। किसी को भी पक्का पता नहीं था - उसका क्या हुआ? कुछ कहते थे कि वह परिवार सहित मारा गया, कुछ कहते थे उसे टोहाना के कैंप में देखा गया।

हमारी जमात में कुछ विद्यार्थी नए आ गए। वे मुलतान, झंग, लायलपुर यहां तक कि पेशावर तक से आए थे। उन्होंने भी अपने दुख-दर्द की बीती कहानी सुनाई। वह उससे भी वीभत्स थी, जो हमने देखी थी। शरीर पर लगे घाव तो धीरे-धीरे भर जाते हैं, पर दिल व दिमाग पर लगे घाव तो भरने में ही नहीं आते। जीवन का ढर्रा तो बिना रूके चलता रहता है -एक पुराना जाता है, दूसरा नया आता है। यादें भी धीरे-धीरे पुरानी होती जाती हैं।

जींद के लोगों ने नए आए लोगों को गले लगाया, उनकी हरसंभव सहायता की। सौ में से 98 आदमी तो सुख-शांति से रहना चाहते हैं - अधिकतर लोग एक-दूसरे की सहायता भी करते हैं - आटे में नमक जितने लोग ही क्रूर, अतिवादी और कट्टर साम्प्रदायिक होते हैं और वे ही सौहार्द के पनपने में विषधर बनते हैं। एक-दो लड़कों ने कुछ दिनों बाद उन नए आए लड़को को रिफ्यूजी और पाकिस्तानी कहा, पर स्कूल के हैडमास्टर ने एक दिन प्रार्थना सभा के बाद सभी विद्यार्थियों को अपने भाषण में कहा-' वे अपने ही देश अपनी ही जमीन से अपने ही देश, अपनी ही जमीन पर आए हैं। वे पाकिस्तानी नहीं हैं। पहले भी हिन्दुस्तानी थे, अब भी हिन्दुस्तानी हैं। आप सभी विद्यार्थी ध्यान से सुनें। कोई भी इन्हें पाकिस्तानी न कहे। ये हमारी तरह ही शुरू से ही हिन्दुस्तानी हैं। अगर बाहर का कोई आदमी भी गलत बात करे, तो उसे समझाएं। ये हमारे ही पुराने पंजाब, फरन्टियर आदि छोड़ कर अपने ही देश में आए हैं। आप यह सच्चाई उन गुमराह लोगों को समझाएं।'

हम सभी जल्दी ही आपस में घुल-मिल गए। रेलवे में भी कुछ नए लोग आ गए थे। वहां भी सब कुछ ठीक-ठाक था। प्रकृति का नियम है कि पुराना धीरे-धीरे स्मृति पटल पर मद्धम पड़ता जाता है और समय बीतने पर विस्मृत हो जाता है। जब खुशी के लम्हें नहीं रहते तो दुख-दर्द के क्यों रहेंगे - ये भी एक दिन चले जाएंगे। आशावाद ही जीवन को आबाद करता है।

सम्पर्क : होमियोपैथ, 423/22, दुर्गा कालोनी, पुराना जेल रोड, रोहतक, मो. 09255957365

हरीकेश पटवारी की विभाजन संबंधी रागनियां

सन् 47 मैं हिन्द देश का बच्चा बच्चा तंग होग्या
राज्यों का जंग बन्द होग्या तो परजा का जंग होग्या

जिस दिन मिल्या स्वराज उसी दिन पड़गी फूट हिन्द म्हं
जितने थे बदमास पड़े बिजळी ज्यों टूट हिन्द म्हं
छुरे बम्ब पस्तौल चले कई होगे शूट हिन्द म्हं
पिटे कुटे और लूटे बड़ी माची लूट हिन्द म्हं
एक एक नंग साहूकार हुआ एक एक सेठ नंग होग्या

कलकत्ता बम्बई कराची पूना सूरत सितारा
गढ़ गुडग़ांवा रोहतक दिल्ली बन्नू टांक हजारा
हांसी जीन्द हिसार आगरा कोटा बलख बुखारा
लुधियाणा मुलतान सिन्ध बंगाल गया सारा
भारत भूमि तेरा रक्त में गूढ़ सुरख रंग होग्या

कुछ कुछ जबर जुल्म नै सहगे कुछ कमजोर से डरगे
कुछ भय में पागल होगे कुछ खुदे खुदकशी करगे
कुछ भागे कुछ मजहब पलटगे कुछ कटगे कुछ मरगे
खाली पड़े देखल्यो जाकै लाहौर अमृतसर बरगे
जणों दान्यां नै शहर तोड़ दिए साफ इसा ढंग होग्या

ऊपर बच्चे छाळ छाळ कै नीचे करी कटारी
पूत का मांस खिला दिया मां नै इसे जुल्म हुए भारी
जलूस काढे नंगी करकै कई कई सौ नारी
एक एक पतिव्रता की इज्जत सौ सौ दफा उतारी
जुल्म सितम की खबरें पढ़ पढ़ हरिकेश दंग होग्या

●

जब से दुनियां बसी आज तक ना ऐसा हाल हुआ
हिन्द के लिए बुरा साबित दो हजार च्यार का साल हुआ

अंग्रेजां नै म्हारे देश का बिल्कुल चकनाचूर किया
लूट लिया धन माल हिन्द का अपणा घर भरपूर किया
ऐसी डाली फूट सगा भाई भाई से दूर किया
बंधी बुहारी खोल बिखेरी कितना बड़ा कसूर किया
रंगा गादड़ बैठ तख्त पर जिन्हां शेर की खाल होया
इस वजह से सत्पुरुषों का बुरी तरह से काळ होया

ऐसा आया इंकलाब कोई उजड़ग्या कोई बसण लाग्या
कोई मरग्या कोई कटग्या कोई भाग्या कोई फसण लाग्या
कोई हारग्या कोई जीतग्या कोई रोवै कोई हंसण लाग्या
किसे का दीवा गुल होग्या किसी कै लैम्प चसण लाग्या
कोई मिटग्या, पिटग्या,कुटग्या कोई लुटग्या कंगाल होया
कोई-कोई जो जबरदस्त था लूट कै मालामाल होया

किसे की लाकड़ी किसे नै ठाई किसे का धन घर धरै कोई
कोई कमजोरा कोई जोरावर कोई डरावै डरै कोई
कहते सुणे लिख्या भी देख्या भरे वही जो करै कोई
अपणी आंखां देख लिया अब करै कोई और भरै कोई
करोड़ों लाश बही दरिया मैं नहरों का जल लाल होया
सरसा की जा ढाब देखिये जमा खून का ताल होया

सतयुग मैं तो मिथुन-मिथुन नै विकट रूप धर मार दिया
त्रेता मैं तुल नै तुल का कर हनन धरण में डार दिया
द्वापर में भी मिथुन मिथुन नै पकड़ कै केश सिंहार दिया
कळयुग में बिन जंग कुम्भ नै कुम्भ तख्त से तार दिया
अब मकर के मकर हनेगा निश्चय हरिकेश को ख्याल होया
हिन्द हमारा बिना वजह जेर बे अलिफ और दाल होया
हरीकेश पटवारी गांव धनौरी, जिला जीन्द निवासी रेडियो सिंगर थे।

●●●

मेवाती-पहेली

एक मुलक का दो हुया, दो का होगा तीन
तीनूंई दुःख पा रहा, ऐसी बटी जमीन ।
--
जवाबः हिन्दुस्तान, पाकिस्तान, बांग्लादेश।

मुकेश यादव की रागनियां

कुदरती खेती

खेती चौपट कर्जे भारी, दिखै घोर अन्धेरा रै
मुफ्त म्हं खेती होण लागरी, ध्यान कड़ै सै तेरा रै।

बिना खाद और बिना दवाई, जंगल खूब खड़े थे रै
हरियाली थी घणी गजब की, पेड़ तै पेड़ अड़े थे रै
सब जीवां का साझा था, ना पहरे कितै कड़े थे रै
ओजोन परत भी साबत थी, ना उसमैं छेद पड़े थे रै
कुदरत गैल्या खसिये लाकै, बिगड़या ढंग भतेरा रै

ज्यादा अन्न उपजावण खातर, होड़ कसूती लागी रै
डी.ए.पी. यूरिया जिंक खाद, तन्नै कर्जे बीच ध्यकागी रै
जहरीली दवाई छिड़क-छिड़क, या मित्र कीट नै खागी रै
जहरी खाणा-पीणा होग्या, नई-नई बीमारी आगी रै
भोळेपण म्हं आफत लेली, पाट्या कोन्या बेरा रै

घणी कसूती जंग म्हं घिरग्या, अन्नदाता का हाल सुणो
लागत बढ़गी खेती घटग्यी, स्याम्ही दिखै काळ सुणो
हरित क्रान्ति के चक्कर म्हं, लुटग्या सारा माल सुणो
धरती बंजर पाणी खार्या, कम्पनियां का जाळ सुणो
एक ओड़ नै कुआं दिखै, एक ओड़ नै झेरा रै

उठ बावळे क्यूं पड़या सोच म्हं, बख्त बीतता जार्या रै
कुदरती खेती करणी होगी, और नहीं कोए चारा रै
आप्पा मरै सुरग दिखै सै, यो जग जाणै सै सारा रै
आच्छी सेहत सबकी होगी, यो जीवन सुधरै म्हारा रै
कहै 'मुकेश' ओ भोळे माणस, कह्या मान ले मेरा रै

भगत सिंह

भगत सिंह तनै जो सोच्या था, वो रहग्या बीच बिचाळे म्हं
राज बदलग्या ना हालत बदली, कसर रही ना चाळे म्हं

मिली आजादी तो गरीब आदमी के मन म्हं रंग चा छाये थे
भगतसिंह तेरे इंकलाब के सबनै नारे लाए थे
जात-पात मिट ज्यागी वतन तै ये सपने खूब सजाए थे
सबनै मिलै बराबर का हक, गीत खुशी के गाए थे
राज बणाणा चाह्या था तनै, मेहनतकश के पाळे म्हं

दिन रात कमावूं रै भूखा सोवूं, ना मेरी समझ म्हं आरी
बाळक भूखे ना तन पै कपड़ा, या कर्री कायल बीमारी
टाटा बिड़ला लक्ष्मी मित्तल, पूंजी बढ़री भारी
गोळी खाग्या कर्जे म्हं रै रोवै मेरी महतारी
प्रेमचन्द का 'होरी' आज भी जकड़्या कर्जे के जाळे म्हं

गाय तैं सस्ती ज्यान मेरी दुळीणे की याद द्यवाऊँ मैं
बान्ध गोहाना किला जफरगढ़ के-के ब्यखान सुणाऊँ मैं
मिल चलाऊं, सड़क बणाऊँ, ऊंचे भवन उठाऊँ मैं
अपणा कुणबा दाबण नै एक कच्ची छांद बणाऊँ मैं
आग लाग मेरे बाळक जळगे, रंधगे धूमे काळे म्हं

सपने हो लिए तार-तार, ना राम भरोसे सोवो
आधी तै लई बीत उम्र या बाकी नै क्यूं खोवो
करम बणाया आप बणै सै, क्यूं किस्मत नै रोवो
कह 'मुकेश' यो भगत सिंह ज्यूं, नया रास्ता टोह्वो
दुःख की रात अन्धेरी ढळ ज्या, चालो ईब उजाळे म्हं

सम्पर्क : 09416916596

●●●

नसीरूद्दीन के गाने का शौक

नसीरूद्दीन को गाना-बजाना सीखने का शौक हआ था। उसने एक महान संगीतज्ञ के पास जाकर पूछा, 'आप वाद्ययंत्र सिखाने का कितना लेते हो?'

'पहले महीने में तीन चांदी की मुद्राएं, दूसरे महीने से हर महीने एक चांदी की मुद्रा देनी होगी।

'अच्छी बात है, तो फिर दूसरे महीने से ही शुरू करूंगा मै।' नसीरूद्दीन ने कहा।

सत्यवीर 'नाहड़िया' की रागनियां

कथा सतावन की...

हे जी - हे जी सुणाऊं कथा मैं सतावन की।
म्हारे मन की-थारे मन की, कथा या जन-जन की।। टेक

भारत माँ के पायां म्हं जब, बेड़ी थी गुलामी की।
जाग उठे शेर सोये, या बात मन म्हं थामी थी।
लड़ी लड़ाई लाठी-जेली लेकै आम्ही-साम्ही थी।। 2
फिरंगी का राज भाई, चौगरदे नै छाया था।
तार बगायी हिंद की इज्जत, टेम इसा आया था।
'फूट डालो-राज करो' मंतर यो अपणाया था।।.......2

हंसते-हंसते भेंट चढाग्ये, वे अपने तन अर मन की।
हे जी-हे जी सुणाऊं कथा मैं सतावन की। हे जी-हे जी

सत्तावन का किस्सा सुणियो, मेरठ तै सुणाऊं मैं।
उत रेवाड़ी के राव किशन, कोतवाल पाऊं मैं।
मंगल पाण्डे की चिंगारी पूरे मनतै ध्याऊं मैं।।......2
चिंगारी या भड़की भाई, पूरे हिंद म्हं गैल गयी।
बाहर-भीतर, गाम-शहर, झूपड़ी अर महल गयी।
उत्तर-दक्खण, पूरब-पच्छम, चौगरदे नै फैल गयी।।........2
मारो-मारो होण लगी फेर, बारी आयी गन की।
हे जी-हे जी सुणाऊं कथा मैं सतावन की। हे जी-हे जी

हिंदू-मुस्लिम, सिख-इसाई, भूल सारे भेद खड़े।
बहादरशाह अर नाना साहब, खूब राजा नाहर अड़े।
राव तुला अर गोपाल, नसीबपुर म्हं खूब लड़े।।........2
किस-किस कै मैं नाम गिणाऊं, हँस कै जान गंवाई थी।
भारत माँ की बेड़ी तोड़ी, जनता चढ़ती आई थी।
झलकारी अवन्तिका अर राणी लिछमीबाई थी।।........2

हरियाणे के गाम-गाम म्हं लहर थी अपणेपन की।
हे जी-हे जी सुणाऊं कथा मैं सतावन की। हे जी-हे जी

जिंदा वै जळाये सारे, बाड्ढै जग हलाल कर्‌या।
महम का चबूतरा वो, गोर्‌या नै बेहाल कर्‌या।
बुल्डोजर कै नीचै मारै, हांसी म्हं सब लाल कर्‌या।।.....2
फरज निभाओ मिलकै सारे, प्यारे हिंद का मान करो।
आजादी किस ढाळां आई, मिलकै एक बै ध्यान करो।
दीप जळाओ मिलकै सारे, वीरां का सम्मान करो।।......2

कह 'नाहड़िया' बात सदा उन वीरां के गावण की।
हे जी-हे जी सुणाऊं कथा मैं सतावन की।
हे जी-हे जी.

न्यारा म्हारा हरियाणा...

-1-

बात पेट की रहै घेट म्हं के नर-नारी सैं।
हरियाणा म्हं बीर-मरद की जोड़ी न्यारी सैं।
माह-पौ का यो जाड्डा हो या जेठ दोफारी सैं।
खेत-क्यार म्हं साथ कमाणा जिम्मेदारी सैं।

-2-

हरियाणे के छोरे सारे छैल-छबील्ले सैं।
नाच्चै-कूदैं ब्या-शादी म्हं घणे रंगील्ले सैं।
माटी गेल्यां माटी होज्यां इसे हठील्ले सैं।
मुड़-मुड़ देखै दुनिया सारी इसे रौबील्ले सैं।

-3-

मारैं सारे तीर निशानै, काम ना तुक्क्यां का।
बीजिंग तक यो रौळा माच्या म्हारे मुक्क्यां का।
दुनिया भर म्हं रूक्का पाट्या म्हारे डुक्क्यां का।
भाईचारा न्यारा म्हारा सारा हुक्क्यां का।

-4-

हिंद कै खातर इस माटी नै खून बहाया सै।
देस-धरम का इसनै हरदम फरज निभाया सै।
घर-घर फौजी इस माटी का, काम रै आया सै।
दूध मात का रण के म्हां ना कदे लजाया सै।

-5-

जाट्टी नीचै सुस्ताल्यें ना सो री जाम्मण म्हं।
मार कोरड़े होळी खेल्लैं गोरी फागण म्हं।
नाचै-कूदैं मटकै पोरी-पोरी दाम्मण म्हं।
सासू का फेर नाक तोड़ल्ये छोरी साम्मण म्हं।

....

दोहे

दूध-दही लास्सी कितै, खाकै चट्टण-रोट।
साथ कमावैं खेत म्हें, बीर-मर्द की जोट।।

गाम-गाम खाड़े सजे, खेलैं खेल तमाम।
खेलकूद म्हें गूंजता, जग म्हारा नाम।।

सत्यवीर 'नाहड़िया' 257, सेक्टर-1,रेवाड़ी मो. 9416711141

●●●

कैरियरवाद से ऊपर उठना यथार्थवादी दृष्टिकोण से साहित्य सृजन की अनिवार्यता - अतरजीत

पंजाबी लेखक सभा सिरसा व संवाद सिरसा के संयुक्त तत्वाधान में 5 सितम्बर को सिरसा के युवक साहित्य सदन में क्रांतिकारी युग कवि पाश के जन्म दिवस के उपलक्ष्य में विचारगोष्ठी व पुस्तक लोकार्पण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। केंद्रीय पंजाबी लेखक सभा (रजि.) के वरिष्ठ उपप्रधान अतरजीत मुख्य वक्ता के तौर पर 'वर्तमान परिप्रेक्ष्य में साहित्य एवं साहित्यकारों के समक्ष चुनौतियां' विषय पर अपना व्याख्यान दिया। उन्होंने कहा कि आज लेखक को कैरियरवाद से ऊपर उठकर आलोचनात्मक यथार्थवादी दृष्टिकोण से साहित्य सृजन की अनिवार्यता है। पाश की रचनाओं के विभिन्न पक्षों से विस्तार से अवगत करवाते हुए कहा कि पाश की रचनाएं समाज की संरचना को समझने का वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान करती हैं। कार्यक्रम में भूपिंद्र पन्नीवालिया रचित 'इबादत', डा. हरमीत कौर द्वारा रचित 'प्रवासी पंजाबी कवि : मूल सरोकार' व छिंद्र कौर द्वारा रचित 'ख्याल उडारी' पुस्तकें लोकार्पित की गई। इस अवसर पर डा. शेरचंद रचित समीक्षा पुस्तक 'सरस्वती नदी दे बन्नियां दे गौण' की समीक्षा प्रस्तुत करते हुए का. स्वर्ण सिंह विर्क ने कहा कि लोक साहित्य परम्परा में यह एक मूल्यवान दस्तावेज है, जिसे लेखक ने एक लंबी शोध के बाद प्रस्तुत किया है। सहज व सरल भाषा में रचित इस पुस्तक को उन्होंने महत्वपूर्ण व पठनीय बताया।

ज्योतिबा फुले पुस्तकालय का उद्घाटन समारोह

गांव दयोरा (कैथल) में 13 सितम्बर 2015 रविवार को 'ज्योतिबा फूले पुस्तकालय' का उद्घाटन किया गया। इस समारोह की अध्यक्षता डा. विकास आनंद ने की। मंच संचालन युवा लेखक मलखान सिंह ने किया। उद्घाटन में मुख्य वक्ता प्रो. सुभाष चंद्र ने कहा कि पुस्तकालय समाज के लिए अति आवश्यक साधन है। उन्होंने कहा कि जिन घरों में जेली, लाठी व बंदूकें रखी है, उन घरों व उस समाज की तरक्की व विकास कभी नहीं हो सकता। ऐसा हो कि हमें निरंतर इन किताबों को पढ़ते रहना है और ज्ञान अर्जित करते रहना है, ताकि हमारे समाज का सर्वांगीण विकास हो सके। सावित्री बाई फूले पहली महिला अध्यापिका थी, जिन्होंने महिलाओं व वंचित तबकों को शिक्षित किया और देश में महिला आंदोलनों की अगुवाई की।

डीवाईएफआई की सदस्य डिम्पल ने कहा कि जब हमारे समाज में युवाओं की बात आती है तो युवा सिर्फ लड़कों को माना जाता है। लड़कियों को आज भी समाज युवा नहीं समझता। अनुभवों को बताते हुए उन्होंने बताया कि आज समाज को पुस्तकालयों की अत्यधिक आवश्यकता है। विद्यालय अध्यापक संघ (93) के सचिव कंवरजीत सिंह ने कहा कि दलित महापुरुषों रविदास, ज्योतिबा फूले व डा. अम्बेडकर ने शिक्षा पर बल दिया। हमारे समाज के लोगों को शिक्षा ही ऊपर उठा सकती है। वर्गों व महिलाओं के विकास के लिए व जातियों को तोड़ने के लिए अनेक आंदोलन किए। पूंजीवाद व ब्राह्मणवाद हमारे समाज के विकास में बहुत बड़ी बाधा है।

युवा व जुझारू लेखिका निर्मल ने अपने विचार रखते हुए पितृसत्तात्मक समाज पर जोरदार प्रहार करते हुए विभिन्न बोलियों में महिलाओं के क्रांतिकारी गीत सुनाए। कामरेड प्रेम सिंह सैनी ने मजदूरों एवं किसानों की स्थिति पर अपने विचार रखते हुए कहा कि शिक्षा ही ऐसा साधन है जिससे मजदूरों व किसानों में चेतना पैदा हो सकती है। प्रिंसीपल विजय ने कहा कि युवाओं में राष्ट्रीय भावना व समाजवाद की भावना विकसित करने के लिए पुस्तकालय की हर गांव व शहर में अति आवश्यकता है। गांव दयोरा के युवा साथी रामगोपाल ने पुस्तकालय का नाम ज्योतिबा फूले रखने की मंशा के साथ ज्योतिबा फूले व उनकी पत्नी सावित्रीबाई फूले के जीवन पर प्रकाश डाला जिन्होंने वंचित समाज (तबकों) के लिए देश में 48 स्कूल खोले। 24 सितम्बर 1873 में उन्होंने 'सत्य शोधक' समाज की स्थापना की। समाज में समानता और भाईचारे के विकास पर जोर दिया। जाति व्यवस्था को समाप्त करने पर आंदोलन किए।

तर्कशील सोसायटी हरियाणा के अध्यक्ष राजाराम हंडियाया ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि 21वीं सदी में भी समाज अंधविश्वास और जादू-टोने जैसी अनेक बुराइयों से ग्रस्त है। हमारे लोग पुराने रूढ़िवादी विचारों को लेकर जीवन जी रहे हैं। आज भी ऐसे अनेक बाबा हैं जो हमारे समाज के शिक्षित लोगों को भी लूट रहे हैं। स्कूली शिक्षा के साथ-साथ तार्किक सोच के विकास पर भी उन्होंने बल दिया। जातिवाद पर प्रहार करते हुए उन्होंने कहा कि अगर हमें अपने गांव, अपने समाज व अपने देश को ऊपर उठाना है तो देश को जातिवाद से मुक्त करना होगा। उन्होंने विशेष जोर देकर कहा कि पुस्तकालय किसी विशेष जाति का न होकर सम्पूर्ण गांव का है।

अंत में समापन करते हुए डा. विकास आनंद नेक कहा कि हमारे असली मंदिर तो स्कूल व पुस्तकालय हैं, जो युवाओं एवं हर वर्ग के लोगों में तार्किक शक्ति का विकास करते हैं। उन्होंने पुस्तकालय के संचालकों को सराहनीय कार्य की बधाई देते हुए उनको उत्साहित किया। गांव की सरपंच रीना देवी, मा. रामफल, राजेश मानव, प्रवीण, बलराज, अशोक, सुल्तान, गौतम, संजय, जिला परिषद चेयरमैन नाजर सिंह, ब्लाक समिति मैंबर नजर सिंह, रघुबीर, सतपाल, वकील मामू राम और जसवंत एवं पुस्तकालय सहायक ईश्वर ने भाग लिया। इस उद्घाटन समारोह के अवसर पर लगभग 600 की तादाद में महिलाएं, बच्चे, युवा, बुजुर्ग मौजूद थे, जिन्होंने वक्ताओं के विचारों को ध्यानपूर्वक सुनकर आत्मसात किया।

हिन्दी-दिवस के अवसर पर 'देस हरियाणा' पत्रिका का विमोचन

14 सितम्बर 2015 कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के सीनेट हाल में युवा एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम विभाग, यूनिवर्सिटी कालेज हिंदी-विभाग एवं जनसंचार एवं मीडिया प्रौद्योगिकी संस्थान के संयुक्त तत्त्वाधान में हिंदी के विकास में मीडिया का योगदान विषय पर सेमीनार आयोजित हुआ।

मुख्य अतिथि के रूप में हरियाणा के मुख्यमंत्री के मीडिया सलाहकार अमित आर्य ने कहा ने कहा कि भाषा को रोजगार के साथ जोड़कर उसके विकास की गति को बढ़ा सकते हैं। किसी भी भाषा को लोगों को थोंपकर उसका विकास नहीं किया जा सकता। नेशनल बुक ट्रस्ट के अध्यक्ष एवं पूर्व सम्पादक बलदेव शर्मा ने मुख्य वक्ता के रूप में कहा है कि मीडिया ने हिंदी के विकास में महत्वूपर्ण भूमिका निभाई है । दुनियाभर में आज भारतीय फिल्में व टेलीविजन कार्यक्रम देखे जाते हैं । सोशल मीडिया, इंटरनेट व मोबाइल के कारण आज युवा पीढ़ी इस भाषा का सबसे अधिक प्रयोग कर रही है । भाषा लोगों को जोड़ने का काम करती है और आपसी सोहार्द्र को बढ़ाती है। बुल्गारिया के राजदूत ने अपने देश में हिंदी भाषा के प्रसार के विभिन्न कार्यक्रमों से अवगत कराया। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए विश्वविद्यालय के कुलपति हरदीप कुमार आई.ए.एस. ने कहा कि 1949 में संविधान में हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया । इसका ज्यादा से ज्यादा प्रयोग करें तभी हम भाषा के विकास में अपनी भूमिका का सही निर्वाह कर सकते हैं। इस अवसर पर बुल्गारिया के राजदूत, कुलपति हरदीप कुमार, अमित आर्य, बलदेवराज शर्मा ने 'देस हरियाणा' पत्रिका का विमोचन किया। प्रो. एस एस बूरा, आर के सूदन के साथ महासिंह पूनिया भी इस अवसर पर मौजूद थे। भाषा पर विशेष अंक निकालने के लिए उपस्थित बुद्धिजीवियों ने संपादन टीम के सदस्य अशोक शर्मा, कृष्ण कुमार तथा सुभाष चन्द्र को बधाई दी।

अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ सिरसा की कार्यकारिणी गठित

21 सितम्बर को शहीद करतार सिंह भवन सिरसा में प्रख्यात प्रगतिवादी साहित्यकार एवं चिंतक का. स्वर्ण सिंह विर्क की अध्यक्षता में आगामी दो वर्षों के लिए अखिल भारतीय लेखक संघ की सिरसा जिला इकाई का गठन किया गया। आगामी दो वर्षों के लिए नई कार्यकारिणी का निर्वाचन सर्वसम्मति से किया गया। नवगठित कार्यकारिणी में डा. हरविन्द्र सिंह को प्रधान व डा. शेरचंद को महासचिव चुना गया। डा. कश्मीर सिंह करीवाला को वरिष्ठ उपप्रधान, शीला विनायक को उपप्रधान, मनजीत सिंह को सचिव, सुरजीत सिंह रेणु को संगठन व वित्त सचिव, प्रभुदयाल को प्रचार/प्रेस सचिव की जिम्मेवारी सौंपी गई। कार्यकारिणी सदस्यों में हरदयाल बेरी, गुरतेज बराड़, जयमल लहरी, रमेश शास्त्री, सुरेश बरनवाल, डा. हरविन्द्र कौर, रोशन सुचान, हैप्पी बक्शी, डा. जगत, अनूप सिंह व किरनपाल सिंह थिंद को शामिल किया गया है। पूरन मुद्‌गल, का. जसवंत सिंह भंगु व का. तिलक राज विनायक संस्था के मुख्य परामर्शक की जिम्मेवारियों का निर्वाह करेंगे।

बदलते परिवेश में नए नजरिए से समझें भगतसिंह के विचारों को - प्रो. सुभाष चंद्र

अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ (प्रलेस) सिरसा, पंजाबी लेखक सभा सिरसा व संवाद सिरसा के संयुक्त तत्वाधान में भगत सिंह जयंती के उपलक्ष्य में खैरपुर (सिरसा) स्थित कामगार भवन में 'चर्चा-परिचर्चा' कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता का. सुरजीत सिंह, परमानंद शास्त्री व शीला विनायक ने की। कार्यक्रम का आगाज तरन्नुम भारती द्वारा प्रस्तुत जनकवि पाश के एक इन्कलाबी गीत के साथ किया गया। इसके उपरांत कार्यक्रम के मुख्य वक्ता कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय कुरुक्षेत्र के हिन्दी विभाग के प्रोफेसर व 'देस हरियाणा' पत्रिका के सम्पादक डा. सुभाष चंद्र ने 'वर्तमान परिवेश' में 'भगत सिंह के विचारों की प्रासंगिकता' विषय पर व्याख्यान प्रस्तुत किया। उन्होंने भगत सिंह द्वारा प्रतिपादित धारणाओं को बदलते परिवेश में नए नजरिए से समझे जाने पर बल दिया। उन्होंने कहा कि जनता की लड़ाई जनता ने ही लड़नी है। इसलिए साधारणजन को निरंतर संवाद द्वारा जनवादी लोकतांत्रिक चेतना से लैस किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि भगत सिंह द्वारा उद्‌घोषित नारों 'इन्कलाब जिंदाबाद', 'समाजवाद जिंदाबाद' व 'साम्राज्यवाद का नाश हो' की सार्थकता आज और भी बढ़ गई है। विश्व साम्राज्यवाद की बर्बर व्यवस्था को इन्कलाब से ही समतापरक व्यवस्था में परिवर्तित किया जा सकता है। एक क्रांतिकारी वैज्ञानिक चिंतन के तौर पर भगत सिंह विचार आज और भी प्रासंगिक हैं। परिचर्चा में भाग लेते हुए गुरबख्श मोगा, का. राज कुमार शेखुपुरिया, सोहन सिंह रंधावा, लेखराज ढोट, का. बलबीर कौर गांधी, शीला विनायक, सुतंतर भारती व का. सुरजीत सिंह ने वर्तमान परिवेश में मजदूरों, किसानों, कर्मचारियों, विद्यार्थियों, नौजवानों, महिलाओं, बुद्धिजीवियों से संबंधित समस्याओं, सरोकारों का जिक्र करते हुए इनके समाधान के लिए भगत सिंह विचारधारा को और भी स्पष्ट शब्दों में अभिव्यक्ति प्रदान की। कार्यक्रम का संचालन डा. हरविन्द्र सिंह ने किया। इस अवसर पर गुरटेक सिंह, पुरषोत्ततम शास्त्री, का. ओ.पी. सुथार, सुखदेव ढिल्लों, का. तिलक राज विनायक, रेखा रानी, रमेश कुमारी, बलकरण कौर, विनोद, मा. कुलवंत सिंह, राजेश कुमार इत्यादि उपस्थित थे।

●●●

हरियाणा : खेलों में उपलब्धियां

प्रस्तुति-सुनील कुमार व विकास साल्याण

हरियाणा प्रांत के खिलाड़ी दुनियाभर में भारतवर्ष का डंका बजा रहे हैं। नवम्बर 1966 को हरियाणा प्रदेश भारत के सत्रहवें राज्य के रूप में मानचित्र पर आया था। पहले से ही सामाजिक पर्वों, उत्सवों व मेलों के अवसरों पर ताकत आजमाने वाले खेलों जैसे कबड्डी, कुश्ती और रस्साकसी आदि खेलों के आयोजन की परम्परा रही है। विश्व स्तर की खेल स्पर्धाओं जैसे एशियाड, राष्ट्रमंडल तथा ओलम्पिक की खेल प्रतियोगिताओं में भारत के द्वारा जीते गए कुल पदकों में अकेले हरियाणा प्रांत के खिलाड़ियों द्वारा लगभग 35 प्रतिशत पदकों को प्राप्त किया है, जिसमें ताकत के खेल माने जाने वाले कुश्ती, कबड्डी और मुक्केबाजी में सर्वाधिक पदक अर्जित किए हैं। पुरातनवादी सोच के कारण लड़कियों को घर की चारदीवारी तक ही सीमित रखा जाता था, अब गीता, बबीता, विनेश, साईना, ममता, रीतू, कृष्णा आदि पर गर्व से सिर ऊंचा करते हैं। यह बदले हरियाणा की तस्वीर दिखाने के लिए काफी है। जिस तरह से बेटियों ने देश-प्रदेश का मान बढ़ाया है, उसी तरह से यहां के लालों ने भी हिन्द-केसरी, चंदगी राम से प्रेरणा लेकर सुशील, योगेश्वर तथा विजेंद्र, मनोज, विकास व जयभगवान आदि ने अपनी उपलब्धियों को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कई बार दोहराया है। वैसे तो यह फेहरिस्त काफी विस्तृत है जिसकी पूरी चर्चा संभव नहीं है। इसकी पूरी जानकारी को हमने आगे वर्णित सारणी में समावेशित करने का प्रयास किया है। खेल उपलब्धियों पर दिए जाने वाले पुरस्कारों पर नजर डालें तो हरियाणा के 50 से अधिक खिलाड़ी अर्जुन पुरस्कार प्राप्त कर चुके हैं। इसके अतिरिक्त अन्य खेल पुरस्कारों जैसे कि 'राजीव गांधी खेल रत्न' व सर्वश्रेष्ठ खेल प्रशिक्षक 'द्रोणाचार्य पुरस्कार' भी कई खिलाड़ियों ने प्राप्त किए हैं।

नाम	खेल/उपलब्धि
हवा सिंह	बॉक्सर- एशियन गेम (1966) स्वर्ण पदक
	बाक्सर- एशियन गेम (1970) स्वर्ण पदक
भीम सिंह	एथलेटिक्स-ओलम्पिक(1968)
मोहिन्द्र गिल	एथलेटिक्स-राष्ट्र मंडल (1970) कांस्य पदक
	एथलेटिक्स-एशियाई खेल (1970) स्वर्ण पदक
बलवंत सिंह (बल्लू)	वालीबाल-एशियन गेम (1970, 1974, 1978) स्वर्ण पदक
उदय चंद	कुश्ती-विश्व चैंपियनशिप (1961) कांस्य पदक
	कुश्ती- विश्व चैंपियनशिप(1970) स्वर्ण पदक
गीता जुत्सी	एथलेटिक्स-एशियन गेम (1978) रजत पदक
	एथलेटिक्स-एशियन गेम (1982) दो रजत पदक
जगरूप सिंह	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (1974) स्वर्ण पदक
	कुश्ती-विश्व चैंपियनशिप में भाग (1973)
	कुश्ती-ओलंपिक में भाग (1972)
मा. चंदगी राम	कुश्ती-एशियाई खेल (1970) स्वर्ण पदक
	कुश्ती-ओलंपिक में भाग लिया (1972)
चांद राम	वाक-20 किलोमीटर-एशिया खेल (1980) स्वर्ण पदक
	वाक-20-ओलंपिक में भाग लिया (1984)
ओम प्रकाश	वालीबाल-सैफ खेलों में (1987) स्वर्ण पदक टीम
	वालीबाल-एशियाई चैंपियनशिप (1983, 1987)
सबीर अली	एथलेटिक्स-एशियाई ट्रेक फील्ड चैंपियनशिप में स्वर्ण पदक
दलेल सिंह	वालीवाल-सैफ खेलों में स्वर्ण पदक (1987)
	वालीवाल-सैफ खेलों में कप्ताल भारतीय (1984, 1987, 1988)
	वालीवाल-एशियाई खेल (1986) कांस्य पदक
कपिल देव	क्रिकेट-विश्व चैंपियनशिप टीम का हिस्सा (1983)
वीरेन्द्र सिंह	कुश्ती 74 कि.ग्रा.-विश्व चैपियनशिप (1992) कांस्य पदक
	कुश्ती-राष्ट्रमंडल खेलों में (1995) रजत पदक
अनिल कुमार	एथलेटिक्स-एशियाई खेल (1998) रजत पदक
	एथलेटिक्स-एशियाई खेल (2002) कांस्य पदक

	एथलेटिक्स-एशियाई चैंपियनशिप (2000) स्वर्ण पदक
ममता	हाकी-राष्ट्रमंडल (2002) स्वर्ण पदक टीम
	हाकी-एशियाई कप (2004) स्वर्ण पदक
रमेश कुमार	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (2002) स्वर्ण पदक
	कुश्ती-विश्व चैपियनशिप (2009) कांस्य पदक
अखिल कुमार	बॉक्सर-राष्ट्रमंडल खेल (2006) स्वर्ण पदक
	बॉक्सर-एशियाई खेल (2007) कांस्य पदक
योगेश्वर	कुश्ती-ओलम्पिक (2012) कांस्य पदक
	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (2010) स्वर्ण पदक
	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (2006) स्वर्ण पदक
कविता गोयत	बॉक्सर-एशियाई खेल (2010) कांस्य पदक
अनिल कुमार	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (2010) स्वर्ण पदक
अनूप कुमार	कबड्डी-एशियाई खेल (2010) स्वर्ण पदक टीम
	कबड्डी-ऐशियन (2011) स्वर्ण पदक
दिनेश कुमार	बॉक्सर-एशियाई खेल (2010) रजत पदक
मनोज कुमार	बॉक्सर-राष्ट्रमंडल (2010) स्वर्ण पदक
राजेंद्र कुमार	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (2010) स्वर्ण पदक
सुशील कुमार	कुश्ती-ओलम्पिक (2008) कांस्य पदक
	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (2010) स्वर्ण पदक
	कुश्ती-ओलम्पिक (2012) रजत पदक
सुमन कुंडू	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (2010) कांस्य पदक
साक्षी मलिक	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (2014) रजत पदक
	कुश्ती-एशियाई (2015) कांस्य पदक
विजेंद्र सिंह	बॉक्सर-ओलम्पिक (2008) कांस्य पदक
	बॉक्सर-एशियाई (2010) स्वर्ण पदक
रंतन सोढी	निशानेबाजी-एशियाई खेल (2010) स्वर्ण पदक
	निशानेबाजी-राष्ट्रमंडल (2010) रजत पदक
परमजीत समोटा	बॉक्सर सुपर हेवीवेट-राष्ट्रमंडल (2010) स्वर्ण पदक
	बॉक्सर-ऐशियन खेल (2010) कांस्य पदक
ललिता शैरावत	कुश्ती 53 कि.ग्रा. -राष्ट्रमंडल (2014) रजत पदक
	कुश्ती-एशियाई (2015) कांस्य पदक

ओलम्पिक पदक विजेता

कर्णम मलेश्वरी	भारतोलन सिडनी 2000 ओलम्पिक कांस्य
सुशील कुमार	कुश्ती-ओलम्पिक (2008) कांस्य पदक
	कुश्ती-ओलम्पिक (2012) रजत पदक
विजेंद्र सिंह	बॉक्सर-ओलम्पिक (2008) कांस्य पदक
सत्यवर्त कादियान	कुश्ती-युवा ओलम्पिक (2010) कांस्य पदक
योगेश्वर	कुश्ती-ओलम्पिक (2012) कांस्य पदक

हरप्रीत सिंह	निशानेबाजी-राष्ट्रमंडल (2010) स्वर्ण पदक
	निशानेबाजी-राष्ट्रमंडल (2014) रजत पदक
अनिश सैयद	निशानेबाजी 25एम-राष्ट्रमंडल (2010) स्वर्ण पदक
	निशानेबाजी-एशियाई (2014) कांस्य पदक
नवीन कुमार	एथलीट 3000एम-ऐशियन (2014) कांस्य पदक
निर्मल देवी	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (2010) रजत पदक
कृष्णा पूनिया	एथलीट-राष्ट्रमंडल (2010) स्वर्ण पदक
	एथलीट-एशियाई (2010) कांस्य पदक
गीता फोगाट	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (2010) स्वर्ण पदक
	कुश्ती-विश्व चैंपियन (2012) कांस्य पदक
संजीव राजपूत	निशानेबाजी 50एम-विश्वकप (2010) स्वर्ण पदक
	निशानेबाजी 50एम-राष्ट्रमंडल (2014) रजत पदक
मन्दीप जांगड़ा	बॉक्सर-एशियाई चैंपियन (2013) रजत पदक
	बॉक्सर-राष्ट्रमंडल (2014) रजत पदक
सत्यवर्त कादियान	कुश्ती-युवा ओलम्पिक (2010) कांस्य पदक
	कुश्ती-राष्ट्रमंडल (2014) रजत पदक
जयभगवान	बॉक्सर-राष्ट्रंडल (2010) कांस्य पदक
श्वेता चौधरी	निशानेबाजी-एशियाई खेल (2014) कांस्य पदक
अनिता तोमर	राष्ट्रमंडल (2010) कांस्य पदक
विकास कृष्ण यादव	बॉक्सर-एशियाई (2010) स्वर्ण पदक
	बॉक्सर-विश्व चैंपियनशिप (2011) कांस्य पदक

इचियान एशियाई खेल 2014

सीमा अंतिल	डिस्कस थ्रो	स्वर्ण
हरिन्द्रपाल सिंह	स्कवाश	स्वर्ण
प्रियंका पवार	रिले दौड़	स्वर्ण
वीनेश फोगट	कुश्ती	कांस्य
गीतिका जाखड़	कुश्ती	कांस्य
संदीप सेजवाल	तैराकी	कांस्य
नवीन कुमार	स्टेपलबेज	कांस्य
नरेन्द्र ग्रेवाल	वुशु	कांस्य
बजरंग लाल ताखर	रोईग	कांस्य
स्वर्ण सिंह विर्क	रोईग	कांस्य
अनुरानी	जैवलीन थ्रो	कांस्य
हिनसिद्धु	शूटिंग	कांस्य
शगुन चौधरी	शूटिंग	कांस्य
सरदार सिंह	हाकी	
कर्णम मलेश्वरी	भारतोलन सिडनी 2000 ओलम्पिक कांस्य	
धर्मवीर सिंह	धावक 200 मी.	एशियन गोल्ड मेडलिस्ट

●●●

मोरनी : एक ऐतिहासिक झलक

सुरेन्द्रपाल सिंह

शिवालिक की पहाड़ियों में स्थित मोरनी नामक एक छोटे से कस्बे की सबसे ऊंची पहाड़ी पर एक किले की इमारत है, जिसके दरवाजे पर लगे हुए परिचय पत्थर पर लिखी हुई इबारत एक ऐसे झरोखे का काम करती है, जो हमें इतिहास की कुछ भूली-बिसरी पगडंडियों की ओर ले जाता है। इस पर लिखा है

'दिनांक 26-10-1816 को भारत के गवर्नर जनरल ने एक सनद के द्वारा मीर जाफर अली को उसके पुश्तैनी अधिकारों व गुरखाओं के विरुद्ध लड़ाई में अंग्रेजी फौज की सहायता करने के एवज में इन पहाड़ों पर हक सौंपा था ....।' इतिहास में रुचि रखने वालों के लिए इसमें कई दिलचस्प संकेत हैं।

मोरनी शिवालिक की पहाड़ियों की श्रृखंला का हिस्सा है। ऐतिहासिक, भौगोलिक व सांस्कृतिक दृष्टि से मोरनी का जुड़ाव हिमाचल प्रदेश के सिरमोर जिले से है। हरियाणा में इसके होने का भी इतिहास है। इसका संक्षिप्त ब्यौरा निम्न प्रकार है। सन् 1948 में 28 रियासतों को मिलाकर एक चीफ कमीश्नर के अधीन एक प्रांत बना जिसे सन् 1950 में लैफ्टिनैंट गवर्नर के अधीन पार्ट-सी राज्य बना दिया गया और कालांतर में सन् 1956 में यूनियन टैरिटरी बन गया। सन् 1965 में भाषाई राज्य की बारम्बार मांग की वजह से सरदार हुक्मसिंह की अध्यक्षता में 22 सदस्यों का संसदीय कमीशन बना, जिसने सिफारिश की कि शिमला, लाहौल स्पीती, कुल्लू और कांगड़ा में पहाड़ी जिले और पठानकोट तहसील का डल्होजी इलाका, ऊना तहसील का अधिकांश इलाका व अम्बाला जिला की नालागढ़ तहसील हि.प्र. में मिलाई जाए। जब मोरनी का मुद्दा सामने आया तो हि.प्र. ने 93 वर्ग मील के इस इलाके पर जो नारायणगढ़ तहसील का 20 प्रतिशत हिस्सा था और भाषा, संस्कृति, भूगोल, इतिहास और परम्परा आदि के सभी पहलुओं के आधार पर इसे जोरदार ढंग से मांगा, लेकिन शाह कमीशन (बाऊंडरी कमीशन) ने नारायणगढ़ तहसील के टुकड़े न करने का फैसला लिया और इस प्रकार हरियाणा को मोरनी के रूप में एकमात्र हिल स्टेशन मिल गया।

मोरनी का किला-मोरनी की पहाड़ी की सबसे ऊंची चोटी पर करीब 1200 मीटर की ऊंचाई पर 17वीं शताब्दी में बनाया गया यह किला पत्थरों से बनाई गई एक साधारण इमारत है। इसके चार बुर्ज हैं और मुख्य दरवाजा पूर्व दिशा में है। कभी इसके केंद्र में एक कुआं भी था। सन् 1814 में जब गुरखाओं ने नाहन पर कब्जा कर लिया था तो सिरमोर के राजा ने यहां शरण ली थी और आवश्यकतानुसार किले के अंदर रिहायशी इन्तजाम किए गए थे।

मोरनी के किले को केंद्र बनाकर रत्न प्रकाश ने शिमला की निचली पहाड़ियों के 12 ठकुराई को जो पहले गुरखा कमांडर अमर सिंह थापा का साथ दे रहे थे, अब गुरखाओं के विरुद्ध अपने साथ मिलाया। गुरखाओं ने बीरभद्र के नेतृत्व में मोरनी के किले पर घेरा डाल कर तोपों, बंदूकों, खुखरियों से जबरदस्त आक्रमण किया और रत्नप्रकाश को परिवार सहित किला छोड़ कर भागने पर मजबूर किया। अब किला गौरी शाह जो गुरखा साम्राज्य का मजबूत पक्षधर था के हवाले कर दिया गया। उस वक्त रायपुर रानी के बगल में स्थित कोताहा का किला मीर जाफर अलीखान के अधीन था, जिसने अपने सिपाहियों के साथ सर डेविड ऑक्टरलनी के नेतृत्व में ब्रिटिश फौज का साथ दिया और मलौन किले में बड़ा काजी अमर सिंह थापा के नेतृत्व वाले गुरखा फौज की घेराबंदी कर ली। हारकर अमर सिंह थापा को डेविड आक्टरलनी के साथ 15-05-1815 को संधि करते हुए मलौन, जैतक और मोरनी के किले खाली करने पड़े। इससे पहले गौरी शाह ने नाहन से 7 किलोमीटर दूर जैतक किले पर कब्जा किए हुए गुरखा कमांडर काजी रणजोर सिंह को पत्र लिखकर मैदान न छोड़ने की सलाह देते हुए अंग्रेजों को हराने के लिए तंत्र-मंत्र की सहायता लेने और भीम की पूजा करने की ताकीद की थी।

अंग्रजों ने नाहन का राज्य रानी गुलेर को देते हुए मोरनी का तालुका कोताहा के मीर जाफर अलीखान को एक सनद द्वारा दे दिया गया। इस प्रकार मोरनी का इलाका मीर जाफर अली और उसकी पुश्तों की मल्कियत बन गया। मोरनी के इलाके की खेती योग्य जमीन अभी भी मीर की जमीन कहलाती है। जिस पर पुराने मुजारे और उनकी पीढ़ियां खेती कर रही हैं। बेशक मोरनी का किला सन् 1977 में हरियाणा के वन विभाग ने मीर के उत्तराधिकारियों से अपने अधिकार में ले लिया और सन् 2009 में इसका पुनः उद्धार करवाया गया।

अब आइए इतिहास की पगडंडियों पर कुछ और दूर तक चलते हैं मोरनी की पुरानी झलक पाने के लिए।

लंबे समय तक मोरनी का इलाका ठाकुर राजपूतों के अधीन 14 टुकड़ों में बंटा हुआ था, जिन्हें भोज कहा जाता था और आज भी ये इकाई कायम है। जैसे भोज जबयाल, भोज कोटि आदि। सिरमोर के राजा के अधीन ये इलाका कोटाहो, परगना का

हिस्सा था। कहा जाता है कि सिरमौर के राजा भगत प्रकाश (1583-1605) ने कोताहा के मुखिया मानचंद (या दूपचंद या दीपचंद) की बेटी स्वाती का हाथ मांगा और मना करने पर राजा ने कोताहा पर चढ़ाई करके उसे सपरिवार दिल्ली भागने को मजबूर किया। वहां मानचंद इस्लाम ग्रहण करके मोमन मुराद कहलाने लगा। उसने अपनी बेटी की शादी शहजादा जहांगीर से सन् 1605 से पहले की थी।

जब जहांगीर बादशाह बना तो उसने दरबार की तरफ से एक एजेंट हकीम कासिमखान के साथ मोमन मुराद को कोताहा वापिस भेज दिया। मोमन मुराद ने कोताहा और शिवालिक पहाड़ों को भूरसिंह देव श्रृंखला तक अपने कब्जे में लिया। एक पहाड़ी का नाम उसने अपनी पत्नी के नाम पर 'मोरनी' रखा। मोमन मुराद के बेटे फिल मुराद को कोई औलाद न होने पर अब असली हाकिम हकीम कासिम खान हो गया, जिसे मुगल बादशाह ने 'मीर' का खिताब दिया था। 21-03-1655 को शाहजहां ने कोताहा का इलाका एक फरमान के द्वारा सिरमौर के राजा सुभाग सिंह को दे दिया था, क्योंकि उसने श्रीनगर (गढ़वाल) पर चढ़ाई करने में जम्मू और कांगड़ा के फौजदारों की सहायता की थी। ये सिरमौर और कोताहा का सिलसिला किसी न किसी रूप में लगातार चलता रहा।

अहमदशाह अब्दाली के हमलों के दौरान 1260 में कोताहा, नारायणगढ़ और भिरोम की कमान, मीर मुहम्मद बक के हाथ में थी। वाल्टर हैमिल्टन (1820) ने लिखा है कि 1775 में मोरनी पर सिरमौर के राजा का कब्जा हो गया था। गुरखा युद्ध के दौरान सिरमोर के राजा रत्नप्रकाश को भाग कर मोरनी के किले में शरण लेनी पड़ी। इसके बाद का घटनाक्रम पहले ही लिखा जा चुका है।

अब हम मुगल काल से जुड़े हुए इतिहास की दूसरी कहानी पर जाते हैं। कोताहा के मीर की वर्तमान पीढ़ी का कहना है कि चार भाई हुमांयू के साथ ईरान से आए थे। सबसे बड़ा भाई मीर बर्खुरदार मुगल फौज में शामिल हो गया और सबसे छोटा भाई सूफी फकीर हो गया और कद ज्यादा लंबा होने की वजह से 9 गजा पीर कहलाया। मीर बर्खुरदार का वंशज औरंगजेब के साथ गोलकोण्डा की चढ़ाई में शामिल था और उसक पोते कासिम अलीखान को मुगल बादशाह फरूखशियार ने कोताहा की जागीर दी। मोरनी के राजपूत मुखिया दीपचंद की मृत्यु के बाद बादशाह मोहम्मद शाह गाजी ने मोरनी का इलाका भी कासिम खान को दे दिया। उसका बेटा मुहम्मद बकर अली खां-1 सन् 1760 में सिक्खों से लड़ते हुए सढौरा में मारा गया था।

अब पाठक दो तरह की ऐतिहासिक कहानी पढ़कर असमंजस में होंगे कि वास्तविकता क्या है।

रॉयल सोसायटी आफ आर्टस के जर्नल के जून 1902 के अंक में एक श्रद्धांजलि संदेश के अनुसार मीर परिवार का वंशज राजा सैयद मुहम्मद बकर अली खान सीआईई की मृत्यु 20-01-1902 को हुई थी, जिसके पूर्वजों को सुल्तान बहलोल लोदी (1452-1489) ने पूंडरी और अन्य गांवों की जागीर दी थी। बाद में फरूखशियार ने कोताहा की जमींदारी कासिम अलीखान को दी व मुहम्मद शाह गाजी ने दीपचंद की मृत्यु के बाद उसका इलाका भी कासिम अली खान को दे दिया गया था।

अब हम इस ऐतिहासिक झलक के अंतिम पड़ाव की ओर चलते हैं। सन् 1857 के विद्रोह के दौरान तत्कालीन मीर अकबर अली खां अंग्रेजों की शक की निगाह में आ गया। उसके इलाके से जमुना की तरफ जाने वाले बागियों को पकड़वाने में कोताही के आरोप में अम्बाला के डिप्टी कमीशनर टीडी फोर्सिथ ने उस पर एक हजार रुपए का जुर्माना लगाया। शक की गुंजाइश और बढ़ गई जब सितम्बर 1857 में मुज्जफरनगर से उसके दामाद का पत्र पकड़ा गया। कोताहा के किले की तलाशी के दौरान आपत्तिजनक युद्ध सामग्री पाने पर पंजाब के चीफ कमीशनर के हुक्म से कोताहा और मोरनी के किले तोड़ डाले गए। बाद में 1864 में अंग्रेज सरकार ने षड्यंत्र के आरोप में कोताहा के किले को धूल धूसरित करवा दिया, जिसके लिए एक सिविल इंजीनियर को दो महीने लगे। बाद में मीर पर मोरनी और कोताहा में रहने पर पाबंदी लगा दी। हालांकि सन् 1880 में तत्कालीन मीर के रुतबे को बहाल कर दिया।

अंत में हम चंडीगढ़ में स्थित म्यूजियम और आर्ट गैलरी में प्रदर्शित कुछ प्राचीन मूर्तियों पर एक नजर डालें जो सन् 1970 मोरनी के ताल की खुदाई के दौरान पाई गई हैं। पत्थर से तराशी गई इन मूर्तियों में 10वीं से 13वीं शताब्दी तक की धार्मिक-सांस्कृतिक झलक मिलती है। महिषासुर मर्दिनी शिव कामांतका, सकुलिशा (शिव का आखिरी अवतार) की मूर्तियां इस बात का संकेत देती हैं कि इस इलाके में शैव परम्परा का प्रचलन था। मोरनी-बडयाल सड़क पर (नाहन की ओर जाते हुए) मोरनी से 16 किलोमीटर दूर बनी गांव में स्थित भद्रकाली का प्राचीन मंदिर के अवशेष भी इसी बात की ओर इशारा करते हैं। मीर जाफर अली को भेंट की गई सनद में भी भवानी देवी के दो मन्दिरों का जिक्र आता है।

भवानी देवी के ऐतिहासिक मंदिर और खुदाई में मिली मूर्तियां शैव-शाक्त परम्पराओं के अस्तित्व का उदाहरण है। पिजौर में भीमा देवी मंदिर के अवशेष, चण्डी-मंदिर, त्रिलोकपुर मंदिर आदि से स्पष्ट है कि पूरा इलाका वैष्णववाद के प्रभाव से दूर रहा है। यहां के लोगों के रहन-सहन, खान-पान व धार्मिक रीति रिवाजों पर इसकी छाप देखी जा सकती है।

सम्पर्क : 09872890401

●●●

बालगीत

गंजे रै गंजे टेरम टेर,
हाथ में लकड़ी बछडू घेर।
बछडू बड़ गया बाड़ में,
दे गंजे की नाड़ में।

●●

मैं भी गुड्डिया लाऊंगा,
पिड्डे पे बैठाऊंगा।
पिड्डा गया टूट,
गुड्डिया गई रूठ।
रूसण दे भई रूसण दे,
मनै जलेबी चूसण दे।
जलेबी गिरगी तेल में,
हम गए रेल में
रेल नै मारी सिट्टी,
दो मरगे टिट्टी।

●●

गंजा पटेल तेरी खोपड़ी में तेल,
आधा पानी आधा तेल
आओ खेलें इनका खेल।

●●

बरसो राम धड़ाके से।
बुढ़िया मर गई फाके से।।
गर्मी पड़ी कड़ाके की।
नानी मर गई नाके की।।

●●

गड़बड़झाला से साभार

राम के दरबार में
हो रहा था मैच, कुम्भकरण ने मारा छक्का
हनुमान ने किया कैच
राम बोले आऊट
सीता बोली - गेट आऊट

●●

मुझसे भारी मेरा बस्ता
कर दी मेरी हालत खस्ता।
उसे उठाकर चलना मुश्किल,
सभी किताबें पढ़ना मुश्किल।
कोई टीचर को समझा दो,
उसे थोड़ा हल्का करवा दो।

●●

बाल पहेली

सबके पीछे-पीछे चलती,
और कभी मैं आगे।
मुझको नहीं पकड़ पाएगा
कोई कितना भागे।

●●

बिना पैर के चलता जाऊं,
बिना हाथ के काम करूं।
जिसके पास रहूं मैं उसके,
मन में नई उमंग भरूं।

- परछाई ● रुपया

दलित साहित्य : एक अन्र्तयात्रा

दलित साहित्य आज समाज, संस्कृति, राजनीति और साहित्य में सामान्य रूचि रखने वाले सभी लोगों की दिलचस्पी का क्षेत्र है। उत्सुकता से भरे आम पाठक ऐसी पुस्तकों का स्वागत करते हैं, जो दलित लेखन का परिचय कराती हैं। इस मांग के अनुरूप तमाम पुस्तकें उपलब्ध हैं, लगातार प्रकाशित हो रही हैं और लिखी जा रही हैं। अक्सर देखा जाता है कि दलित साहित्य का परिचय कराने के नाम पर या तो तथाकथित दलित राजनीति की सतही प्रस्तुति होती है या फिर दलित लेखन पर लगने वाले कुत्सित आरोपों के जवाब में ही पूरी पुस्तक खपा दी जाती है। दलित साहित्य का अपना वैशिष्टय इस तरह की किताबों में कहीं गुम हो जाता है। इस स्थिति के मद्देनजर ऐसी किताबों की आवश्यकता और महत्व बढ़ जाता है, जिसमें पक्ष-पोषण, पिष्ट-पेषण और मनघड़ंत दोषारोपण से बचते हुए दलित साहित्य और संवेदना की पड़ताल की गई हो। प्रस्तुत पुस्तक में यही कोशिश दिखाई देगी। इस वक्त हिन्दी दलित साहित्य जिन विधाओं, रूपों और शैलियों में रचा जा रहा है, उन्हीं का आलोचनात्मक परिचय इस किताब में मिलेगा। कविता, कहानी और आत्मकथा के वर्तमान परिदृश्य को रखते समय लेखक ने भरसक इनका विकासक्रम भी स्पष्ट किया है। कई वरिष्ठ व समादृत लेखकों के साथ और समकक्ष बिल्कुल नए रचनाकारों को स्थान दिया गया है। जैसे दलित साहित्य प्रतिबद्धता तथा आवेग से बचकर नहीं लिखा जा सकता। वैसे ही इस साहित्य का मूल्यांकन भी ठंडी तटस्थता के साथ नहीं हो सकता है।

लेखकः बजरंग बिहारी तिवारी
नवारुण प्रकाशन, दिल्ली

सूखे में बारिस जैसा अनुभव

3-5
जुलाई 2014-दिसंबर 2015
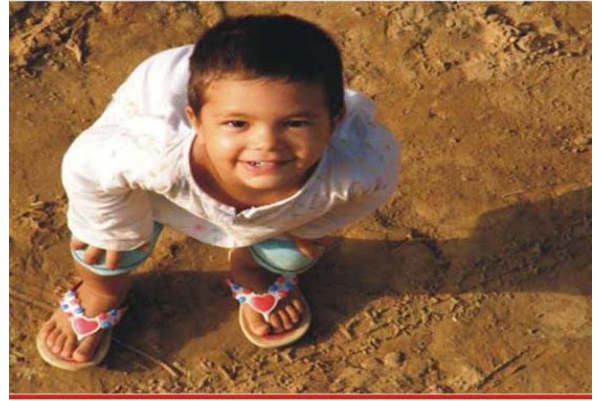
कठिन समय में कविता

साक्षात्कार • कविता • विमर्श • पोखर • समुंदर • परख

'रेतपथ' का कविता विशेषांक हिन्दी के सौ से अधिक कवियों की रचनाओं के साथ भारतीय भाषाओं तथा दुनिया के महत्वपूर्ण कवियों की रचनाएं अपने में समोये हुए है, जो सहज ही समय की हलचलों से पाठक को परिचित करवा देती हैं। कविताओं के विषयवस्तु की विविधता और कविता के शिल्प के नयेपन से अनुमान लगाया जा सकता है कि कविता समय के साथ अपना विस्तार कर रही है। केदारनाथ सिंह, लीलाधर जगूड़ी और राजेश जोशी के साथ साक्षात्कार निश्चित तौर पर अंक को रोचकता व जीवन्तता के वर्तमान रचनाशीलता के विभिन्न पक्षों को उभारते हुए समय–बोध विकसित करते हैं।

इस दौर में कविता पर इतना विशाल अंक निकालना हिम्मत का काम कहा जाएगा। इस अंक का बीज तो अभिव्यक्ति की सबसे लोकप्रिय विधा की उपेक्षा के दर्द और कविता को विमर्श के केन्द्र में लाने की छटपटाहट में है। इसमें कितनी सफलता मिली इसका फैसला तो भविष्य में ही होगा, लेकिन कविता के प्रति संपादक अमित मनोज की प्रतिबद्धता व मेहनत का परिणाम इस अंक के रूप में सामने है। कविता में रूचि रखने वालों के लिए यह अंक सूखे में बारिस जैसा अनुभव है। ●●●

पाठक-पन्ना

भाषा विशेषांक के रूप में देस हरियाणा के पहले अंक की लोकप्रियता अपने आप में काफी अच्छा संकेत है। पत्रिका को लेकर शिक्षा जगत के साथियों से काफी अच्छी प्रतिक्रियाएं प्राप्त हो रही हैं। इस अंक ने भाषा अध्यापकों को ही नहीं विद्यार्थियों और बुद्धिजीवियों को भी भाषा से संबंधित भरपूर सामग्री उपलब्ध करवाई। इस पर चर्चाएं आने वाले समय में भी जारी रहेगी। पत्रिका ने हरियाणा के सामाजिक-सांस्कृतिक माहौल में सचेत हस्तक्षेप के लिए दस्तक दे दी है। मौजूदा दौर की चुनौतियों के विभिन्न विषयों पर जरूरी विमर्श को मंच प्रदान करने का यह दायित्व पत्रिका वहन कर चुकी है। बौद्धिक जगत में पत्रिका के आगामी अंक का इंतजार शुरू हो गया है। -- **अरूण कैहरबा**

देस हरियाणा की प्रति प्राप्त हुई। पढ़ कर मन अत्यंत हर्षित हो गया। काफी लंबे समय से मन में एक कसक सी थी कि हमारे आसपास भी हमारी अपनी कोई एक ऐसी पत्रिका हो जो साहित्यिक सरोकारों के साथ-साथ कविजन और लेखकों को भावनात्मक एवं आत्मिक स्तर पर सौहार्दपूर्ण जुड़ाव का एक बिंदू अथवा सेतु प्रदान कर सके।

पत्रिका का आवरण एवं कलेवर बेहद सुरूचिपूर्ण एवं अपनत्व का जुड़ाव लिए हुए है। कोई पत्रिका जब शुरू की जाती है तो उसके प्रारंभिक अंकों में उसकी शैशवावस्था और अनुभवहीनता की झलक प्रायः दृष्टिगोचर होती है, परन्तु 'देस हरियाणा' इस पक्ष से अपवाद की तरह दिखलाई पड़ती है। पत्रिका की समस्त सामग्री न केवल पठनीय है, अपितु विचार और व्यवहार की दृष्टि से उत्कृष्ट श्रेणी की है। सारे के सारे निबंध, लेख और आलेख राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर की बौद्धिकतायुक्त हैं। कविताओं का सौंदर्य और उनकी छटा ने पत्रिका को चार चांद लगा दिए हैं। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि देस हरियाणा पत्रिका अपने स्वरूप और सौंदर्य के कारण एकदम आकर्षित करने वाली है।

-- डा. जगदीप शर्मा राही, प्राध्यापक हिन्दी, राजकीय माडल संस्कृति व.मा. वि. बेलरखां

'देस हरियाणा' के प्रथम अंक का स्वागत है। हरियाणा से इस स्तर की पत्रिका का प्रकाशन वस्तुतः एक विशिष्ट साहित्यिक साँस्कृतिक घटना है। पहले अंक की सामग्री विचारोत्तेजक और पठनीय है। पत्रिका का प्रबुद्ध वर्ग में स्वागत होगा इसका मुझे पूर्ण विश्वास है। इसके भविष्य के प्रति आश्वस्ति के सभी कारण मौजूद हैं। 'देस हरियाणा' का हार्दिक स्वागत और इसके उज्ज्वल भविष्य के लिए अनेक शुभकामनाएँ। -- **दिनेश दधीची**

पत्रिका 'देस हरियाणा' द्विमासिक का प्रथम अंक पढ़कर बहुत अच्छा लगा। प्रस्तुतिकरण और प्रकाशित सामग्री का चयन आपके सम्पादन कौशल तथा सम्पादन मंडल के सहयोग का परिचायक है। इस सुंदर अंक के लिए आपको बहुत-बहुत बधाई। भाषा के बारे में इतनी विस्तृत चर्चा मैने आज तक किसी पत्रिका में नहीं पढ़ी। इस अंक में भाषायी मतभेदों को दूर करने का समर्थन किया गया है तथा मातृभाषा व राष्ट्रीय भाषा के सांमजस्य को महत्व दिया गया है। इस पत्रिका को पढ़कर ऐसा लगा कि हिन्दी भाषा के प्रति भारतीय लोग एक रूप हों।

आज के दौर में हमारे बच्चे अंग्रेजी पढ़कर डाक्टर, इंजीनियर व वैज्ञानिक बनें या न बनें हिन्दी भाषा के प्रति नकारात्मक जरूर बन गए हैं। शासन-प्रशासन के इक्का-दुक्का पत्रों को छोड़ कर अंग्रेजी में ही आदान-प्रदान होता है व अंग्रेजी में ही कार्य करवाने की कवायद जारी है। भीष्म साहनी की जन्मशती पर श्रद्धासुमन अर्पण करता हूं। 'राष्ट्रीय एकता और भाषा की समस्या' पर उनके जो विचार पढ़ने को मिले बड़े प्रेरणाप्रद लगे। लोहिया जी ने सच ही कहा है कि 'लोकभाषा के बिना लोकराज असंभव है।' मुंशी प्रेमचंद जोर देकर कहते हैं कि भाषा का रिश्ता समय और दूसरी बिखेरने वाली शक्तियों की परवाह नहीं करता, बल्कि अमर हो जाता है। चिंतन स्तंभ के अंतर्गत 'भाषा का साम्राज्यवाद' किस प्रकार दूसरी भाषा को मृतप्राय कर देता है न्गुगी व थ्योंगो ने स्पष्ट दर्शाया है। 'दस्तावेज में राजभाषा संबंधी संवैधानिक प्रावधान' राष्ट्रभाषा के प्रति संकल्प लेने को यह पत्रिका बाध्य कर रही है। 'वैदिक साहित्य में भाषायी चिंतन' तथा 'हिन्दी : ऐतिहासिक संदर्भ', 'भाषायी साम्प्रदायिकता : कुछ विचार बिन्दु', 'अपनी रीडिंग हैबिट ठीक करें', 'मर रही भारतीय भाषाओं के पुनर्जीवन की चुनौती' आदि पढ़कर ऐसा लगा जैसे पत्रिका भाषा की सम्पूर्ण जानकारी समेटे हुए हैं।

बीबीसी संवाददाता अमरेश द्विवेदी की पीपुल लिंगुइस्टिक सर्वे के मुख्य संयोजन डा. गणेश देवी से हुई बातचीत बड़ी सार्थक लगी। मैं आशा करता हूं कि पत्रिका में इस प्रकार की बातचीत या रिपोर्ट भाषायी वैमनस्य को दूर करने में सहयोग प्रदान करती रहेगी। 'कितनी मेहनत से अंग्रेजी आई है' व्यंग्य अच्छा तथा प्रभावी है। 'पॉपुलर हरियाणवी गीत बनती भाषा, बदलती जुबान' (नवीन रमन) और 'मीडिया में हरियाणवी बोली में ग्लैमर का तड़का' लग गया, जिसमें पत्रिका हरियाणवी अंदाज में समझ आई। कमलेश चौधरी के 'शब्दों की टकसाल' ने प्रभावित किया। विकास नारायण का प्रसंगवश में 'दिल्ली का छाया युद्ध' जमीनी सच्चाई के नजदीक है। अनिल चमड़िया के लेख 'डा. भीमराव अम्बेडकर और भाषा' हिन्दी भाषा के प्रति दलित नजरिए को स्पष्ट करता है। अम्बेडकर की चेतना ने जनता को भाषायी टकराव से

बचाया और दलितों को केवल और केवल अंग्रेजी पढ़ने के लिए नहीं कहा। शिक्षा स्तंभ में श्री अरूण कुमार जी का लेख 'स्कूलों में भाषा शिक्षण की निराशाजनक दशा' पढ़कर प्रसन्नता हुई। भाषा शिक्षण में जो अच्छी पुरातन विधियां हैं उनका प्रयोग किया जा सकता है, जो नई विधियां हैं, लेकिन उत्तम नहीं है, उनको छोड़कर भाषा शिक्षण को मजबूत बनाया जा सकता है। इस सब के बाद 'भाषा और लैंगिक वर्चस्व' को छोड़ दूं तो भाषा का ज्ञान अधूरा रह जाएगा। निर्मला जी ने भाषा के प्रति स्त्री नजरिया स्पष्ट किया है।

पत्रिका रसूल हमजातोव, भारतेंदु हरिश्चंद्र, साहिर लुधियानवी, रघुवीर सहाय की कविताएं प्रकाशित करके गौरवान्वित महसूस कर रही है। जयपाल जी की कविता प्रगतिशील लगी तथा इसीप्रकार अन्य सभी कवियों की कविताएं सुंदर व सार्थक लगी। पत्रिका में इक्का-दुक्का अशुद्धियां देखने को मिली। पुस्तक समीक्षा, अनुभव लोकोक्तियां, रामफल जख्मी की जनवादी रागनियां, डा. ओमप्रकाश ग्रेवाल का स्मृति व्याख्यान, हास-परिहास, ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन की लिस्ट, भीष्म साहनी का पूरे पेज पर चित्र ने मुझे आकृष्ट किया। दोनों कहानियां आज की समस्याओं को मुखर करने वाली हैं। सामाजिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के इस मंच को मेरी ओर से साधुवाद।

दयाल चंद, हिन्दी अध्यापक, रा.व.मा. वि. पटहेड़ा, करनाल
मोः 094662-20146

मैंने सितम्बर-अक्तूबर 2015 में छपा 'देस हरियाणा' का प्रथम अंक पढ़ा। जो भाषा से संबंधित था। मैं अक्सर कई पत्रिकाओं को पढ़ता हूं, लेकिन 'देस हरियाणा' का प्रथम अंक पढ़ा जो भाषा से संबंधित था। भाषा संबंधित धारणा में एक परिवर्तन आया। भाषा को मैंने एक विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण से पहली बार देखा, जिससे मेरे ज्ञान में वृद्धि हुई। नई बात जुड़ी और बहुत से सवालों का जवाब भी मिला। अभी तक मैं भाषा को सिर्फ अपने विचार आदान-प्रदान का साधन ही मानता था। जैसे स्कूली किताबों में पढ़ा, लेकिन 'देस हरियाणा' में भाषा पर अनेक लेखकों के विश्लेषणात्मक लेख पढ़ कर लगा कि भाषा सिर्फ विचार अदान-प्रदान का साधन नहीं है। भाषा एक संस्कृति व सभ्यता के निर्माण में भी अपनी बहुत बड़ी भूमिका तय करती है। डा. जोगा सिंह के लेख में भाषा की महता को आंकड़ों के माध्यम से बड़ी सरलता से निभाया है। डा. जोगा सिंह ने अपने लेख में बताया कि किस तरह मातृभाषा का सीखने में मनोबल को बनाने में सहयोग है और किस तरह भाषा के वर्चस्व को स्थापित करके लोगों को या किसी देश के संस्कृति को पीछे धकेला जाता है।

निर्मला ने छोटे से लेख 'भाषा और लैंगिक वर्चस्व' में बहुत बड़ी बात कर दी है कि स्त्रियों को दबाने में भाषा की क्या भूमिका होती है मैंने इसी लेख के माध्यम से जाना और भाषा को जातियों के संदर्भ में जोड़ कर देखा तो जाना कितने ही ऐसे शब्द तैयार किए गए, जिसके द्वारा किसी विशेष जाति के व्यक्ति को बोलकर, उसको हीन होने का अनुभव कराया जाता है। एक शब्द किस तरह एक तेजधार वाले तीर से भी ज्यादा काम करता है।

अनिल चमड़िया के लेखों से भी मैं बहुत प्रभावित हुआ। उसने अपने लेख से जाना कि भाषा के माध्यम से किस तरह संस्कृति के वर्चस्व को धीरे-धीरे स्थापित किया जाता है और मानसिक गुलामी कैसे होती है। इस अंक में आलोक वाजपेयी के भाषायी साम्प्रदायिकता लेख में जो बताया कि इतिहास में किस तरह भाषायी साम्प्रदायिकता रही और किस तरह इस साम्प्रदायिकता से मुक्ति के लिए एक भाषा की राष्ट्रीय एकीकरण में भूमिका होनी चाहिए। राजभाषा संबंधी संवैधानिक प्रावधान दस्तावेज ज्ञान में वृद्धि के लिए बहुत सहायक लगा। इस अंक में विभिन्न महापुरुषों के भाषा से जुड़े लेखों से बहुत कुछ जानने को मिला।

इस अंक में रामफल जख्मी की रागनी, जगदीप, मलखान व दीपक राविश की कविताएं बहुत प्रभावित करती हैं।

मैं आगे के अंकों में यह उम्मीद करूंगा कि वे अपनी इस पत्रिका के माध्यम से समाज के उन सभी पहलुओं को छुएं, जिनको समाज अपना हिस्सा तो मानता है लेकिन जो उनसे प्रभावित या पीड़ित होकर सदियों से तकलीफ झेल रहे हैं। उनकी पीड़ा को पता नहीं क्यों अनेदखा करता है। चाहे वो रीति-रिवाजों की बात हो या दलितों और महिलाओं की बात हो।

रामफल, गांव दयोरा मो : 09466544638

●●●

देसा की टेक

एक दिन एक दम्पति बदहवास से देसा के पास आए और बोले, 'जी हमारी लड़की पड़ौस के एक लड़के से प्रेम करने लगी है।'

'लड़कियां समझदार होती हैं, वे प्रेम करती ही हैं।' देसा ने खुश होकर कहा।

'लेकिन हम उस लड़के को कतई पसंद नहीं करते।'

'तो दिक्कत क्या है, आप भी उसे पसंद कर लीजिए।'

'आप समझे नहीं। दरअसल वह हमारी जाति का नहीं है। 'आप हमें ऐसा कोई उपाय बताइए कि हमारी बेटी उससे प्रेम करना बंद कर दे, उसे दिन-रात कोसे, उसके नाम से भी उसे चिढ़ने लगे।'

'ये तो बड़ा आसान है'

'आसान'... 'जल्दी बताइए, हमें क्या करना होगा?'

'आप उनका विवाह करवा दो, बस।'